वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

SW-11

सामाजिक विघटन और समसामयिक सामाजिक समस्याएँ

Social Disorganization and Contemporary Social Problems

अनुक्रमणिका

इकाई की क्रम संख्या एवं नाम	पृष्ठ संख्या
1. सामाजिक विघटन	1-8
2. वयैक्तिक विघटन	9-17
3. पारिवारिक विघटन	18-26
4. निर्धनता	27-43
5. बेरोज़गारी	44-59
6. साम्प्रदायिकता	60-69
7. जातिवाद	70-77
8. क्षेत्रवाद	78-88
9. भ्रष्टाचार :स्वरूप एवं विस्तार	89-99
10. महिलाओं के विरूद्ध हिंसा	100-112
11. साइबर अपराध	113-146
12. आतंकवाद	147-157
13. एड्स	158-172
14. पर्यावरण प्रदूषण	173-179

इकाई -1

सामाजिक विघटन

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 सामाजिक विघटन

1.3 सामाजिक विघटन के स्वरूप

1.4 सामाजिक संगठन तथा विघटन में अंतर

1.5 सारांश

1.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

1.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

1.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के उपरांत आप

1.सर्वप्रथम सामाजिक विघटन के अर्थ तथा परिभाषाओं के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

2.सामाजिक विघटन के लक्षणों के विषय में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

1.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में सामाजिक विघटन के विषय पर प्रकाश डाला गया है। सामाजिक संगठन में आदतें, संस्थायें, समितियाँ आदि शामिल हैं। सामाजिक विघटन से ये सब अव्यवस्थित हो जाती है। सामाजिक विघटन मानव सम्बन्धों के प्रतिमानों तथा प्रक्रमों में पड़ने वाली बाधा है। इसका तात्पर्य व्यक्तियों के बीच कार्यात्मक सम्बन्धों का इस सीमा तक टूट जाना है, जिससे सम्पूर्ण समूह में अव्यवस्था तथा भ्रम उत्पन्न हो जाता है। अव्यवस्था का तात्पर्य विभिन्न समूहों और संस्थाओं के बीच असंतुलन उत्पन्न हो जाना तथा भ्रम का अर्थ समूह के सदस्यों की पारस्परिक अविश्वास का बढ़ जाना है। इस प्रकार सामाजिक विघटन की दशा में व्यक्ति अपने कर्तव्य भूल जाते है, सामाजिक नियमों का नियन्त्रण कम होने लगता है, समाज के विभिन्न अंगों का संतुलन ढीले पड़ने लगता है, सामाजिक आदर्श गिरने लगते है और सम्पूर्ण सामाजिक ढाँचा अस्त-व्यस्त होने लगता है। इसके अतिरिक्त मॉकर ने सांस्कृतिक सम्पर्क के टूट जाने तथा संस्कृति के विभिन्न पक्षों के बीच उत्पन्न होने वाले असंतुलन को सामाजिक विघटन कहा है। सामाजिक विघटन केवल एक दशा न होकर एक प्रक्रिया है।

1.2 सामाजिक विघटन

सामाजिक विघटन की अवधारणा

जब कभी भी एक समाज में अन्तक्रियाओं का व्यवस्थित क्रम टूट जाता है। तथा सामजिक संस्थाएँ प्रभावपूर्ण रूप से व्यक्तिगत तथा सामूहिक जीवन की नियन्त्रित नहीं कर पाती, तब समाज में विघटन की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। इस दृष्टिकोण से सामाजिक विघटन भी एक सापेक्षिक धारणा है। एक विशेष दशा को सामाजिक विघटन कहने से पहले यह देखना आवश्यक है कि उस समाज के तत्कालीन मूल्य, आदर्श-नियम, नैतिकता तथा कानून किन व्यवहारों को मान्यता प्रदान करते है। यदि सामाजिक सन्तुलन को बनाए रखने वाले मूल्यों तथा नियमों का उल्लंघन होने से समाज की संरचना इस तरह टूट जाए, जिससे अनियन्त्रित, परस्पर विरोधी, तथा मनमाने आचरणों को प्रोत्साहन मिलने लगे, तब इसी दशा को हम सामाजिक विघटन कहते है।

प्रत्येक समाज की संरचना में बहुत-से छोटे-बड़े समूहों, संस्थाओं तथा सदस्यों की अन्तक्रियाओं का - योगदान रहता है। इनमें से प्रत्येक समूह तथा संस्था के अपने-अपने कुछ पूर्व-निर्धारित प्रकार्य होते है। ये प्रकार्य व्यक्ति को अपनी स्थिति के अनुरूप भूमिका निभाने की प्रेरणा ही नही देते, बल्कि सामाजिक व्यवस्था की उपयोगिता को भी बनाए रखते है। किन्ही विशेष परिस्थितियों में जब सामाजिक संरचना इस तरह टूट जाती है कि इसकी एक इकाई दूसरी इकाई के कार्यों में बाधा डालने लगती है, तो सामाजिक व्यवस्था में असन्तुलन पैदा हो जाता है। यही स्थिति सामाजिक विघटन की स्थिति है। अध्ययन की सरलता के लिए इस स्थिति को दो उदाहरणों की सहायता से समझा जा सकता है प्रथम उदाहरण मानव की जीव रचना का है। प्राणी की शरीर-रचना सावयवी व्यवस्था का एक सुन्दर उदाहरण है। इस व्यवस्था का निर्माण अनेक छोटे-बड़े अंगों, नाड़ी-व्यवस्था, रक्त-संचालन तथा उपापचयन की प्रक्रिया के द्वारा होता है। सावयवी व्यवस्था के अन्तर्गत इनमें से कोई भी इकाई यदि अपना कार्य करना बन्द कर दे अथवा दूसरे अंगों की क्रियाशीलता को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करने लगे तो सम्पूर्ण शरीर अस्वस्थ हो जाता है। इस दशा को हम सावयवी विघटन कहते है। दूसरा उदाहरण हम अपने कालेज का ले सकते है। एक संगठित इकाई के रूप में कालेज के अपने बहुत-से नियम तथा मर्यादाएँ है। प्रत्येक अध्यापक तथा कर्मचारी की नियुक्ति एक विशेष योग्यता के आधार पर होती है। तथा प्रत्येक अध्यापक, विद्यार्थी तथा कर्मचारी से अपनी-अपनी स्थिति के अनुरूप भूमिका का निर्वाह करने की आशा की जाती है। जब तक इन सभी इकाइयों के बीच नियमों के अनुसार आदर्श अन्तक्रिया चलती रहती हैं, कालेज की संरचना संगठित रहती है। यदि किसी विशेष अवधि में विद्यार्थी कालेज का अनुशासन भंग करके मनमानी करने लगें, शक्ति के द्वारा निहित स्वार्थों को पूरा किया जाने लगे, नियमों के अनुपयोगी हो जाने के बाद भी अधिकारियों द्वारा उन्हें कठोरतापूर्वक लागू किया जाता रहे, विद्यार्थी इससे असन्तुष्ट होकर हड़ताल करना आरम्भ कर दें, अभिभावक अपना उत्तरदायितव समझे बिना इसके लिए कालेज के प्रबन्ध को दोषपूर्ण बताने लगें तथा अध्यापक स्थिति का लाभ उठाकर विद्यार्थियों के साथ मेहनत करना छोड़ दें ,तो ये सभी दशाएँ सामान्य निराशा, पारस्परिक अविश्वास तथा स्थिति और भूमिका के असन्तुलन को जन्म देकर कालेज के ढाँचे को विघटित कर देंगी। इन दोनों उदाहरणों से स्पष्ट होता हैं कि समाज में जब कभी भी ऐसी दशा उत्पन्न हो जाती हैं जिसमें सामाजिक संरचना का निर्माण करने वाली इकाइयों के बीच कोई आदर्श सन्तुलन नहीं रह जाता, तब इस स्थिति को हम सामाजिक विघटन की स्थिति कहते है।

सामाजिक विघटन की परिभाषा

सामाजिक विघटन की दशा को विद्वानों ने भिन्न-भिन्न रूप से परिभाषित किया है।

राबर्ट फैरिस का कथन है ,"सामाजिक विघटन मानव सम्बन्धों के प्रतिमानों तथा प्रक्रमों में पड़ने वाली बाधा है।"

थॉमस तथा नैनिकी ने सामाजिक विघटन को परिभाषित करते हुए लिखा है, "सामाजिक विघटन का तात्पर्य एक समूह के सदस्यों के व्यवहारों पर वर्तमान सामाजिक नियमों का प्रभाव कम हो जाना है।"

इलियट और मैरिल के अनुसार, "सामाजिक विघटन एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा समूह में सदस्यों के सम्बन्ध टूट जाते है अथवा भंग हो जाते है।" इसका तात्पर्य है कि यदि किसी विशेष परिस्थिति में कुछ सम्बन्ध अस्थाई रूप से टूट जाये तो इसे सामाजिक विघटन की स्थिति नही कहा जायेगा। इसके विपरीत, जब अनेक कारकों के फलस्वरूप एक श्रृंखला में सामाजिक सम्बन्धों का सन्तुलन निरन्तर बिगड़ता चला जाता है, तभी इस स्थिति को सामाजिक विघटन कहा जा सकता है।

फेयरचाइल्ड द्वारा सम्पादित समाजशास्त्र के शब्दकोश में कहा गया है कि, "सामाजिक विघटन का अर्थ सुस्थापित व्यवहार प्रतिमानों, संस्थाओं तथा नियन्त्रण की क्रियाशीलता में असन्तुलन तथा अव्यवस्था का उत्पन्न हो जाता है।" इसका तात्पर्य है कि वैयक्तिक तथा सामूहिक व्यवहारों पर नियन्त्रण स्थापित करने वाली व्यवस्था का असन्तुलित तथा दुर्बल हो जाना ही सामाजिक विघटन है।

लेमर्ट का विचार है कि, "विभिन्न सामाजिक समूहों तथा संस्थाओं के बीच असन्तुलन और व्यापक संघर्ष उत्पन्न हो जाना ही सामाजिक विघटन है।"

मारर नेसांस्कृतिक सम्पर्क के टूट जाने तथा संस्कृति के विभिन्न पक्षों के बीच उत्पन्न होने वाले असन्तुलन को सामाजिक विघटन कहा है। बाह्य रूप से इन परिभाषाओं में कितनी ही भिन्नता क्यों न प्रतीत होती हो, लेकिन मूल रूप से सभी परिभाषाएँ यही स्पष्ट करती है कि सामाजिस विघटन समाज का एक असन्तुलित और विकृत स्वरूप है, जिसके अन्तर्गत एक बड़ी संख्या में व्यक्ति अपने लक्ष्यों को अवैध साधनों के द्वारा प्राप्त करने का प्रयत्न करने लगते है। इसी स्थिति को इस सामाजिक सम्बन्धें के टूटने की स्थिति कहते है।

फेरिस का अनुसार, "सामाजिक विघटन मानवीय सम्बन्धों के प्रतिमानों और रचनाओं का भंग होना है।" संगठित समाज में सामाजिक सम्बन्धों के कुछ रचनाओं और प्रतिमान होते है। इनका अव्यवस्थित होने ही विघटन है।

1.3 सामाजिक विघटन के स्वरूप

सामाजिक विघटन का क्षेत्र अत्यधिक व्यापक है। इसक अन्तर्गत वैयक्तिक जीवन के असामंजस्य से लेकर अन्तर्राष्ट्रीय असामंजस्य तक की सभी परिस्थितियों का समावेश रहता है। वास्तविकता यह है कि वर्तमान युग में जैसे-जैसे हमारे संबंधों के क्षेत्र का विस्तार होता जा रहा है, सामाजिक विघटन की अवधारण भी उतनी ही व्यापक बनती जा रही है इस दृष्टिकोण से सामाजिक विघटन के अनेक स्वरूपों को स्पष्ट किया जा सकता है।

1.3.1 वैयक्तिक विघटन

वैयक्तिक विघटन का क्षेत्र सबसे छोटा है लेकिन सामाजिक विघटन के स्वरूपों में यह सबसे अधिक आधारभूत है। विघटन की यह दशा है जिसमें व्यक्ति कुछ आंतरिक या बाह्य दशाओं के कारण अपनी विभिन्न परिस्थितियों से अभियोजन नहीं कर पाता और इसके फलस्वरूप सामाजिक मूल्यों के विरूद्ध व्यवहार करने लगता है। अपराध, बाल-अपराध, वेश्यावृत्ति, भिक्षावृत्ति तथा पागलपन आदि वैयक्तिक विघटन की कुछ विशेष अभिव्यक्तियाँ हैं।

आत्महत्या वैयक्तिक विघटन का चरम रूप है। सामान्य रूप से वैयक्तिक विघटन एक व्यक्ति की विशेष की समस्या प्रतित होती है। लेकिन इसके मूल में समाज का विघटन छिपा है। वास्तव में वैयक्तिक विघटन की दर तथा गम्भीरता जब अधिक हो जाती है तभी समाज के अन्य क्षेत्रों में विघटन की प्रक्रिया क्रियाशील होती है।

1.3.2 पारिवारिक विघटन

विघटन की इकाई जब व्यक्ति न होकर परिवार होता है, तब इसे हम पारिवारिक विघटन कहते हैं। कोई परिवार अपने सदस्यों पर प्रभावपूर्ण नियंत्रण रखने तथा उनके व्यवहारों को सामाजिक मूल्यों के अनुसार निर्देशित करने में जब निरंतर असफल होता रहता है, तब इसी दशा को पारिवारिक विघटन कहते है। सीमित अर्थ में पारिवारिक विघटन का तात्पर्य पत्नी-पत्नी एंव उनकी संतानों के बीच उत्पन्न होने होने वाले तनाव तथा असामंजस्य से समझा जाता है, लेकिन वास्तव में किसी भी प्रकार की पारिवारिक तनाव, परित्याग, विवाह विच्छेद बच्चों में अनुशासनहीनता तथा गृह-पालन आदि पारिवारिक विघटन के रूप में स्पष्ट करते हैं। साधारणतया परिवार का अनैतिक वातावरण, मृत्यु, आकस्मिक विपत्तियाँ, शारीरिक उत्पीड़न तथा सदस्यों में तीव्र मतभेद पारिवारिक विघटन का कारण होते है।

1.3.3 सांस्कृतिक विघटन

वर्तमान समय में सांस्कृतिक विघटन लगभग सभी समाजों की एक प्रमुख समस्या बनती जा रही है। सांस्कृतिक विघटन का एक ऐसी स्थिति है जिसमें अधिकांश व्यक्ति संस्कृति द्वारा स्वीकार आचरण के तरीकों का अस्वीकार करके व्यवहार के नये ढंग को प्रोत्साहन देना आरम्भ कर देते है। इसका परिणाम है धर्म, नैतिकता चरित्र, मनोरंजन, शिष्टाचार का अभाव तथा कला की नाटुकारिता आदि अनेक ऐसी समस्याएँ हैं, जो सांस्कृतिक विघटन के बढ़ते हुए प्रभाव को स्पष्ट करती है।

1.3.4 सामूहिक विघटन

सामूहिक विघटन का तात्पर्य सभी समूहो के जीवन में असामंजस्य तथा असन्तुलन की स्थिति उत्पन्न होना है। सुविधा की दृष्टिकोण से सामूहिक विघटन को भी तीन उपभागों में विभाजित किया जा सकता है-

(क) सामूहिक विघटन वह स्थिति है जिसमें है वृहत समाज के अन्दर ही विभिन्न समूह स्वयं को एक-दूसरें से पृथक समुदाय मानकर एक दूसरे का विरोध करने लगते है तथा अपनी पृथक सत्ता स्थापित करने का प्रयत्न करते हैं। इस मनोवृत्ति से उत्पन्न समस्या ही सामूहिक विघटन की गम्भीरता को स्पष्ट करती हैं। उदाहरण के लिए जातिवाद, अस्पृश्यता, पिछड़े वर्गो का शोषण ,सम्प्रदायवाद-क्षेत्रवाद, भाषायी संघर्षा तथा नई और पुरानी पीढ़ी के बीच संघर्ष आदि सामुदायिक विघटन के प्रतीक है।

(ख) राष्ट्रीय विघटन एक ऐसी स्थिति है जिसमें सरकार द्वारा व्यक्तियों की आवश्यकताओं को पूरा न हो जाने के कारण राष्ट्रीय जीवन में सामंजस्य की समस्या उत्पन्न हो जाती है। किसी देश में निर्धनता के प्रति उदासीनता, गन्दी बस्तियों, हिंसा तथा लूटपाट की स्थिति को देखकर यह ज्ञात किया जा सकता है कि उस देश में राष्ट्रीय विघटन की सीमा क्या है।

(ग) अन्तर्राष्ट्रीय विघटन का प्रमुख कारण साम्राज्यवादी मनोवृत्तियां तथा राजनीतिक प्रभुत्व की इच्छा है। विभिन्न देशो का कुछ शिविरों में विभाजित होना, पारस्परिक घृण तथा विद्वेप को प्रोत्साहन देना, राजनीतिक स्वार्थो में अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों की स्थापना करना तथा घातक शास्त्रों की आपूर्ति के द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय तनाव को बढ़ावा ऐसे विघटन के उदाहरण है। युद्ध अन्तर्राष्ट्रीय विघटन की सबसे चरम अभिव्यक्ति है।

1.4 सामाजिक संगठन तथा विघटन में अंतर

सामाजिक विघटन की उपर्युक्त विवेचना से स्पष्ट होता है कि विघटन की स्थिति संगठन से पूर्णतया भिन्न है। निम्नांकित विवेचना से इन दोनों प्रक्रियाओं में अन्तर स्पष्ट करने से इनकी प्रकृति की ओर अधिक सरलतापूर्वक समझा जा सकता है।

1. सामाजिक संगठन की धारणा एक ऐसे सामजिक सन्तुलन का बोध कराती है जिसके अंतर्गत सभी समूह तथा संस्थाएँ अपने पूर्व निर्धारित लक्ष्यों के अनुसार व्यवहार करके सामाजिक समस्या का बनाए रखने में योगदान करती हैं। सामाजिक विघटन का तात्पर्य किसी भी ऐसी स्थिति से है जिसमें एक समूह के सदस्यों से सम्बन्ध टूट जाते हैं और इस प्रकार सामाजिक जीवन अव्यवस्थित हो जाता है। इस दृष्टिकोण से संगठन तथा विघटन की दशाएँ एक प्रक्रिया के रूप में क्रियाशील होने के बाद भी एक दूसरे से पूर्णतया भिन्न हैं।

2. सामाजिक संगठन की अनिवार्य विशेषता किसी समूह के सदस्यों में एकमत होना अर्थात अधिकतर विषयों के प्रति समान दृष्टिकोण प्रदर्शित करना है। विघटन की दशा में वह एकमत समूह अनेक छोटे-छोटे तथा स्वार्थपूर्ण समूहों में विभाजित हो जाता है।

3. सामाजिक संगठन में नियोजन का गुण निहित है। समाज मनुष्यों के सक्रिय प्रयासों के बिना संगठित नहीं रह सकता। इसके विपरीत, विघटन के लिए व्यक्ति पृथक अथवा नियोजित रूप से प्रयत्न नहीं करते, बल्कि अज्ञात रूप से अनेक घटनाएँ समाज को विघटित करती रहती है।

4. सामाजिक संगठन की स्थापना विकास की एक लम्बी प्रक्रिया के बाद ही सम्भव हो पाती है। तुलनात्मक रूप से विघटन की दशा में बहुत कम समय लगता है।,

5.सामाजिक संगठन की दशा में सभी सदस्यों की स्थिति तथा भूमिका सुनिश्चित रहती है और अधिकांश व्यक्ति व्यक्ति समूह की आशाओं के अनुसार अपनी भूमिका का निर्वाहन करते रहते है। दूसरी ओर विघटन की दशा में व्यक्ति की भूमिका तथा स्थिति के बीच एक सामान्य असंतुलन स्पष्ट होने लगता है।

6. सामाजिक संगठन का अभिप्राय सामाजिक नियंत्रण की व्यवस्था का प्रभावपूर्ण बने रहना है। इसके विपरीत, नियंत्रण की साधनों में जब दिखावा अथवा प्रभावहीनता उत्पन्न हो जाती है, तब इसी दशा को हम विघटन कहते है।

7. सामाजिक संगठन तार्किक है, जबकि सामाजिक विघटन अतार्किक और भावनात्मक है। इसका तात्पर्य है कि संगठन के अन्तर्गत व्यक्ति के व्यवहार सामाजिक मूल्यों के अनुरूप होते हैं तथा व्यक्ति के व्यवहारो को सरलता से समझा जा सकतसा है। विघटन की दशा में अनिश्चिता, भ्रम तथा विवेकशून्यता इतनी बढ़ जाती है कि किसी भी व्यक्ति के व्यवहारों का पूर्वानुमान कर सकना बहुत कठिन हो जाता है।

8. संगठन वांछित है और विघटन अवांछित है। इसके पश्चात भी ये दोनो दशाएँ कम या अधिक मात्रा में प्रत्येक समाज में साथ-साथ क्रियाशील रहती है। इसका कारण यह है कि एक ओर जहाँ बहुत से व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं को व्यवस्थित ढ़ग से पूरा करने के लिए सामाजिक संगठन को महत्व देते हैं,वहीं दूसरी ओर समाज में होने वाले परिवर्तन विघटनकारी दशाओं को भी उत्पन्न करते रहते है। यह दशाएँ वे होती हैं जो इच्छित नहीं होती बल्कि, आकस्मिक रूप से स्वयं उत्पन्न हो जाते हैं।

1.5 सामाजिक विघटन के लक्षण

जिस तरह प्रत्येक बीमारी को कुछ बाहरी लक्षणों की सहायता से पहचाना जा सकता है, उसी प्रकार सामाजिक विघटन की अवधि में तथा उससे पहले कुछ ऐसी दशाएँ उत्पन्न हो जाती है जिनके आधार पर एक समाज में विघटन की प्रकृति तथा सीमा का अनुमान लगाया जा सकता है। मार्टिन न्यूमेयर का कथन है कि जिस समूह में एकमत तथा उद्देश्यों की एकता भंग हो जाये, समाजिक संरचना छिन्न-भिन्न हो जायें और समाज को क्रियाशील बनाए रखने वाले सम्बन्ध जब टूट जायें,तो यह मान लेना चाहिए कि सामाजिक विघटन के लक्षण उत्पन्न हो गये है। विभिन्न विद्वानों ने जिन लक्षणों के आधार पर सामाजिक विघटन की प्रकृति को स्पष्ट किया है, उन्हें संक्षेप में निम्नांकित रूप से समझा जा सकता है।

(1) स्थिति तथा भूमिका की अनिश्चितता

समाज में कभी-कभी ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जाती है, जब अधिकांश व्यक्तियों की स्थिति और भूमिका के बीच असन्तुलन की दशा उत्पन्न हो जाती है। व्यक्ति यदि परम्परागत आदर्श नियमों के अनुसार अपनी भूमिका का निर्वाह करने है, तो उन्हें सनातनी और पिछड़ा हुआ कहा जाने लगता है, जबकि नये मूल्यों से अनुकूलम करना स्वयं उनके लिए कठिन होता है। यह स्थिति जीवन को बहुत अनिश्चित बना देती है। उदाहरण के लिए, हमारे समाज में आज बहुत-सी शिक्षित स्त्रियाँ आजीविका कमाना अच्छा समझती है| पुरूष एकाकी परिवार व्यवस्था के पक्ष में होते जा रहे है तथा युवा सदस्य परिवार में अधिकाधिक अधिकारों की माँग करने लगे है। हमारे परम्परागत आदर्श-नियम इन परिवर्तनों का विरोध करते हैं, जिसके फलस्वरूप व्यक्ति की प्रस्थिति और भूमिका के बीच एक गम्भीर असन्तुलन की समस्या उत्पन्न हो गयी है। वास्तव में, स्थिति और भूमिका की अनिश्चितता समाज में व्यापक असन्तोष, निराशा और असुरक्षा को जन्म देकर समाज को विघटित करती है।

(2) नियन्त्रण के साधनों की शक्ति में कमी-

सामाजिक नियन्त्रण के विभिन्न अभिकरण जैसे परिवार राज्य, शिक्षा संस्थाएँ, धर्म, कानून, प्रथा तथा लोकाचार आदि व्यक्ति और समूह के व्यवहारों को एक निश्चित स्वरूप देकर उन्हें सामाजिक मूल्यों के अनुसार कार्य करने को बाध्य करते है। समाज में कभी-कभी ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जाती है जब व्यक्ति या तो नियन्त्रण के इन परम्परागत साधनों के अनुसार व्यवहार करना आवश्यक नहीं समझते अथवा स्वयं इन साधनों का रूप रूढ़िगत हो जाने से वे लोगों के व्यवहारों को प्रभावित करने में असफल होने लगते है। किसी भी समाज में नियन्त्रण के अभिकरण जब अप्रभावी हो जाते है तो विभिन्न स्वार्थ-समूहों के आचरण अनियन्त्रित हो जाते है और इस प्रकार पारस्परिक संघर्षो की सम्भावना बढ़ जाती है।

(3) एकमत का अभाव-

एकमत का अभाव वह दशा है जिसमें समाज के अधिकांश सदस्य भिन्न-भिन्न दृष्टिकोणों को लेकर उन लक्ष्यों को प्राप्त करने का प्रयत्न करने लगते है, जो किसी समाज के जीवन के लिए बहुत महत्वपूर्ण समझे जाते है। इस स्थिति में एक भ्रमपूर्ण वातावरण ही उत्पन्न नही हो जाता बल्कि अनिश्चितता के वातावरण में प्रत्येक व्यक्ति अपने दायित्व को दूसरे व्यक्तियों पर डालने की मनोवृत्ति विकसित कर लेते है। इसके फलस्वरूप समस्याएँ सुलझने के स्थान पर और अधिक उलझ जाती है और फलस्वरूप सामाजिक विघटन की सम्भावना उत्पन्न हो जाती है।

(4) लोकाचारों तथा संस्थाओं के बीच संघर्ष

प्रत्येक समाज की संस्थाओं अथवा कार्य-विधियों का निर्धारण वहाँ के लोकाचारों के अनुसार किया जाता है। संस्थाओं तथा लोकचारों में सहयोग है और पारस्परिक निर्भरता बने रहने से ही सामाजिक व्यवस्था उपयोगी रूप से कार्य करती है। किसी समय यदि इन संस्थाओं तथा लोकचारों के बीच संघर्ष होने लगता अथवा दोनों एक-दूसरे के विरोधी हो जाते है तो यह स्थिति सामाजिक विघटन का एक महत्वपूर्ण लक्षण बन जाती है। उदाहरण के लिए, हमारे परम्परागत लोकाचार जिन व्यवहारों को महत्वपूर्ण समझते थे उन्हीं को प्रभावपूर्ण बनाने के लिए अन्तविवाह, जाति व्यवस्था तथा संयुक्त परिवार जैसी कुछ विशेष संस्थाओं का हमारे समाज में विकास हुआ। वर्तमान युग में संस्थाओं के रूप में तेजी से परिवर्तन होने लगा है, यद्यपि हमारे लोकाचार आज भी अपने प्राचीन रूप में है। नई संस्थाएँ लोकाचारों को अनुपयोगी मानती है और लोकाचार इन संस्थाओं को अनैतिक समझते है। इस संघर्ष के फलस्वरूप वे सभी दशाएँ उत्पन्न होने लगती है, जो समाज को विघटित करने के प्रति उत्तदायी होती है।

(5) समिति और समूहों के कार्यो के हस्तांतरण

सामाजिक व्यस्था के अन्तर्गत प्रत्येक समूह तथा समिति का एक विशेष प्रकार्य होता है, जिसकी समुचित पूर्ति होना सामाजिक ढाँचे के सन्तुलन के लिए आवश्यक होती है।प्रत्येक समूह और समिति को बहुत लम्बे समय तक कुछ विशेष उत्तरदायित्वों को पूरा करते रहने के कारण अपने-अपने क्षेत्र में विशेष कुशलता भी प्राप्त हो जाती है। यदि किसी ऐसी दशा में किसी विशेष अवधि में एक ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जाये जिसमें विभिन्न समितियों और समूहो का हस्तांतरण नये समूहों में होने लगे तो इससे समाज में तनाव तथा संघर्ष की भावना बढ़ जाती है। नई परिस्थितियों से अनुकूल करना भी सदस्य के लिए कठिन प्रतीत होने लगता है। उदाहरण के लिए आज, संयुक्त परिवार के कार्यो का दूसरी समितियों के हस्तांतरण के कारण हमारे समाज में नई समस्याएँ सामने आयी हैं, वे इस दशा के प्रभाव को स्पष्ट करती है।

(6) व्यक्तिवादिता में वृद्धि

व्यक्तिवादी विचारों में अधिक वृद्धि होना सामाजिक विघटन का एक स्पष्ट लक्षण है। व्यक्तिवादिता में वृद्धि होने से अधिकांश व्यक्ति समूह-कल्याण को कोई महत्व न देकर अपने निजी स्वार्थों को पूरा करना अधिक महत्वपूर्ण समझने लगते हैं। धीरे-धीरे इससे अनियन्त्रित प्रतिस्पर्धा को प्रोत्साहन मिलता है, जिसके फलस्वरूप लक्ष्य की प्राप्ति के लिए अनुचित और अनैतिक साधनों के उपयोग को भी बुरा नहीं समझा जाता है। इस प्रकार व्यक्तिवादिता एक प्रक्रिया के रूप में सम्पूर्ण सामाजिक जीवन को विघटित कर देती है|

(7) सामाजिक परिवर्तन की तीव्रता

समाज में बहुत तेजी से परिवर्तन होना भी सामाजिक विघटन का प्रमुख लक्षण है। परिवर्तन की गति बहुत तेज होने की दशा में अधिकांश व्यक्ति बदलती हुई दशाओं से जल्दी-जल्दी अनुकूलन नहीं कर पाते, उनकी प्रस्थिति और भूमिका के बीच असन्तुलन उत्पन्न हो जाता है; समूह का जीवन अनियन्त्रित होने लगता है; लोकाचारों तथा आदर्श नियमों के प्रति विरोधपूर्ण मनोवृत्तियाँ विकसित होने लगती हैं तथा समाज में स्तरीकरण और श्रम-विभाजन की व्यवस्था टूट जाती है। ये सभी दशाएँ सामाजिक विघटन के लिए प्रत्यक्ष रूप से उत्तरदायी हैं।

उपर्युक्त लक्षणों के अतिरिक्त फैरिस ने सामाजिक विघटन के आठ अन्य लक्षणों का उल्लेख किया है जो इस प्रकार हैः (1) दिखावा अर्थात नियंत्रण के साधनों के प्रभाव में कमी; (2) पवित्र तत्वों का ह्रास (3) स्वार्थो और

रूचियोवादिता (4) वैयक्तिक स्वतंत्रता और वैयक्तिक अधिकार पर बल (5) सुख संबंधी व्यवहारों पर बल (7) पारिस्परिवक अविश्वास (8) अशान्तिपूर्ण घटनाएँ। इस संबंध में यह ध्यान रखना आवश्यक है कि यह सभी लक्षण सामाजिक विघटन के कारण नहीं है, बल्कि केवल उन दशाओ को स्पष्ट करता हैं जिनके विद्यमान होने पर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि कोई समाज किस सीमा तक विघटित है। इस दृष्टिकोण से इन लक्षणों को 'समाजिक विघटन के मापदण्ड' भी कहा जा सकता है।

1.6 सारांश

प्रस्तुत इकाई में सर्वप्रथम सामाजिक विघटन की अवधारणा, अर्थ एवं परिभाषाओं के विषय में ज्ञान प्राप्त किया। तत्पश्चात् सामाजिक विघटन के लक्षणों का अध्यन किया जिसमें अनेक बिन्दुओं का विस्तृत वर्णन प्रस्तुत किया गया है।

1.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. सामाजिक विघटन से आप क्या समझते हैं? समझए।
2. सामाजिक विघटन की अवधारणा को स्पष्ट कीजिए।
3. सामाजिक विघटन के लक्षणों की व्याख्या कीजिए।
4. सामाजिक विघटन के स्वरूपों का उल्लेख कीजिए।
5. सामाजिक संगठन तथा विघटन में अंतर समझए।

1.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. चन्द्र, एस.एस. (2002) भारत में सामाजिक समस्याएं: कनिष्का पब्लिशर्स: नई दिल्ली
2. दोषी, एस. एल. एवं जैन, पी.सी. (2005) भारतीय समाज, नेशनल पब्लिसिंग हाउसः जयपुर
3. शर्मा, आर.एन.एवं. शर्मा, आर. के. (2002) सामाजिक विघटन, एटलांटिक पब्लिशर्स एवं डिस्ट्रीब्यूटस
4. हसनैन, नदीम, समकालीन भारतीय समाज: एक समाजशास्त्रीय परिदृश्य, भारत बुक सेंटर, लखनऊ, 2007।
5. लवानिया, एम.एम. एवं राठौड़, ए.एस. (1999) भारतीय समाज, रिसर्च पब्लिकेशनः जयपुर
6. लवानिया, एम.एम. एवं पडियार, जी. (2010) भारत में सामाजिक समस्यायें, रिसर्च पब्लिकेशनः जयपुर
7. गुप्ता, एम.एल. एवं शर्मा, डी.डी. (2004) समकालीन भारतीय सामाजिक विचारक एवं सामाजिक आन्दोलन, साहित्य भवन पब्लिकेशनः आगरा
8. गुप्ता, एम. एल. एवं शर्मा डी.डी., मानव समाज, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा, 2001।
9. सिंह, अरुण कुमार सिंह, समाजशास्त्र की मूलभूत अवधारणायें, न्यू रायल बुक कम्पनी, लखनऊ, 2009।
10. आहूजा, राम, सामाजिक समस्याऐं, रावत पब्लिकेशन्स, द्वितीय संस्करण, जयपुर एवं नई दिल्ली, 2000।
11. अहूजा, आर. एवं. अहूजा एम. (2008) समाजशास्त्र: विवेचना एवं परिप्रेक्ष्य, रावत पब्लिकेशन्सः जयपुर

इकाई -2

वैयक्तिक विघटन

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 वयैक्तिक विघटन

2.3 वैयक्तिक विघटन के लक्षण

2.4 वैयक्तिक विघटन के सामान्य कारण

2.5 सारांश

2.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

2.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप-

1. वैयक्तिक विघटन की अवधारणा का वर्णन कर सकेंगे।
2. वैयक्तिक विघटन के लक्षणों के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे|
3. वैयक्तिक विघटन के सामान्य कारणों के विषय में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

2.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में वैयक्तिक विघटन विषय का वर्णन किया गया है। जब एक व्यक्ति ऐसी परिस्थिति में घिर जाता है कि न तो वह अपनी भूमिका और कार्यों के बारे में स्थिर मत रखता है और न ही सामाजिक सम्बन्धों को सुरक्षित महसूस करता है तो इस प्रकार होने वाले असंतुलन को वैयक्तिक विघटन कहा जाता है। व्यैक्तिक विघटन व्यक्ति के उन आचरणों को व्यक्त करता है जो संस्कृति द्वारा अनुमोदित आदर्शो से इतना विचलित होते है कि उनमे सामाजिक अस्वीकृति उत्पन्न हो जाती है। इसके अतिरिक्त माररक के अनुसार वैयक्तिक विघटन व्यक्ति के ऐसे सभी व्यवहारों की ओर संकेत करता है जो सांस्कृतिक रूप से मान्यता प्राप्त आदर्श नियमों में इस सीमा तक हट गये हों कि सामाजिक रूप से उनकी निंदा की जाने लगे। व्यक्ति के व्यवहार जब संस्कृति द्वारा निर्धारित आदर्श-नियमों से इतने विचलित हो जाते हैं कि उन्हें समूह द्वारा मान्यता प्रदान नहीं की जाती तब इसी स्थिति को वैयक्तिक विघटन कहा जाता है।

2.2 व्यैक्तिक विघटन

व्यैक्तिक विघटन को सामाजिक विघटन का आधार कह सकते हैं। व्यैक्तिक विघटन की स्थिति उस समय आती है जब व्यक्ति अपने पर्यावरण से समायोजन नही कर पाता है ऐसी स्थिति में व्यक्ति सामाजिक मूल्यों एवं नियंत्रणों का

विरोध करता है फलस्वरूप समाज के विरूद्ध व्यवहार करता है| ई0 आर0 मावरर के अनुसार व्यैक्तिक विघटन व्यक्ति के उन आचरणों को व्यक्त करता है जो संस्कृति द्वारा अनुमोदित आदर्शो से इतना विचलित होते है कि उनमे सामाजिक अस्वीकृति उत्पन्न हो जाती है। व्यैक्तिक विघटन के लिए शारीरिक दोष, मानसिक स्थिति का कमजोर होना, आफलता, आकास्मिक घटनायें, इत्यादि मुख्य रूप से जिम्मेदार होते है| जब व्यैक्तिक विघटन की स्थिति गम्भीर हो जाती है तो समाज में विघटन की प्रक्रिया गतिशील हो जाती है।

2.2.1 वैयक्तिक विघटन का अर्थ एवं परिभाषा

समाज में प्रत्येक व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए सदैव प्रयत्नशील रहता है। एक ओर व्यक्ति की नैसर्गिक प्रवृत्तियाँ उसे इस बात की प्रेरणा देती है कि वह मनमाने ढंग से अपने लक्ष्यों को प्राप्त कर ले तो दूसरी ओर समाज के आदर्श-नियम उस पर अनेक तरह के नियन्त्रण लगाकर व्यवहार के स्वीकृत ढंगों के अनुसार लक्ष्यों को पूरा करने की सीख प्रदान करते हैं। व्यक्ति के व्यवहार जब तक सामाजिक मूल्यों, आदर्श-नियमों तथा मनोवृत्तियों के अनुरूप बने रहते हैं, उसे एक समाजीकृत प्राणी के रूप में देखा जाता है। लेकिन, जब कुछ विशेष परिस्थितियों में व्यक्ति सामाजिक मूल्यों की अवहेलना करना आरम्भ कर देता है, समूह की प्रत्याशाओं से भिन्न प्रकार का व्यवहार करने लगता है, स्वंय अपनी स्थिति को भ्रमपूर्ण बना लेता है तथा अपने क्रियाओं के द्वारा समूह की सुरक्षा के लिए इस सीमा तक खतरा उत्पन्न कर देता है कि उसका व्यवहार जन-सामान्य के लिए निन्दा का विषय बन जाये, तब यही दशा उस व्यक्ति के लिए वैयक्तित विघटन की स्थिति बन जाती है। दूसरे शब्दों में, व्यक्ति के जीवन में निषेधात्मक व्यवहारों तथा मनोवृत्तियों का समावेश हो जाना ही वैयक्तिक विघटन है। वैयक्तिक विघटन की इस प्रकृति को विद्वानों ने भिन्न-भिन्न रूप से परिभाषित किया है।

नॉर्टन का कथन है कि ‘‘जब एक व्यक्ति ऐसी परिस्थितियों में घिर जाता है कि न तो वह अपनी भूमिका और कार्यो के बारे में स्थिर मत रहता है और न ही सामाजिक सम्बन्धों को सुरक्षित महसूस करता है तो इस प्रकार होने वाले असन्तुलन को वैयक्तिक विघटन कहा जाता है। इस कथन में नॉर्टन ने वैयक्तिक विघटन को कुछ कारणों के आधार पर परिभाषित किया है। ये कारण भी आंशिक हैं, इसलिए इस परिभाषा को अधिक उपयुक्त नहीं समझा जाता।

मॉरर के शब्दों में, ‘‘वैयक्तिक विघटन व्यक्ति के ऐसे सभी व्यवहारों की ओर संकेत करता है जो सांस्कृतिक रूप से मान्यता-प्राप्त आदर्श नियमों में इस सीमा तक हट गये हो कि सामाजिक रूप से उनकी निन्दा की जाने लगे। ‘‘ इस परिभाषा में मॉरर ने वैयक्तिक विघटन को सांस्कृतिक आधार पर स्पष्ट करते हुए बताया है कि व्यक्ति के व्यवहार जब संस्कृति द्वारा निर्धारित आदर्श-नियमों से इतने विचलित हो जाते हैं कि उन्हें समूह द्वारा मान्यता प्रदान नहीं की जाती तब इसी स्थिति को वैयक्तिक विघटन कहा जाता है।

लेमर्ट ने वैयक्तिक विघटन को एक प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया है। आपके अनुसार ‘‘वैयक्तिक विघटन वह दशा अथवा प्रक्रिया है, जिसमें व्यक्ति के व्यवहार उसकी मुख्य भूमिका के अनुरूप नहीं रहते , बल्कि अपनी भूमिका के चुनाव में वह अनेक भ्रमों और संघर्षो का सामना करने लगता है।‘‘ इस परिभाषा में लेमर्ट ने (क) व्यक्ति की कुशलता तथा उसे प्राप्त होने वाली स्थिति, एवं (ख) व्यक्ति की स्थिति तथा उसकी भूमिका के बीच उत्पन्न होने वाले असन्तुलन को वैयक्तिक विघटन का आधार स्वीकार किया हैं।

इलिएट तथा मैरिल के अनुसार, ‘‘सामाजिक नियमों तथा सम्पूर्ण समाज के साथ व्यक्ति का तादात्मीकरण न होना ही वैयक्तिक विघटन है।‘‘

इन परिभाषाओं से वैयक्तिक विघन की प्रकृति को निम्नांकित विशेषताओं के आधार पर समझा जा सकता है।

(1) वैयक्तिक विघटन सामाजिक विघटन का ही प्रारम्भिक स्वरूप है।

(2) वैयक्तिक विघटन का तात्पर्य व्यक्ति की मानसिकता, स्थिति एवं भूमिका तथा व्यवहार-प्रतिमानों के असन्तुलन से है।

(3) वैयक्तिक विघटन की अभिव्यक्ति व्यक्ति की असामान्य मनोवृत्तियों तथा विचलित व्यवहारों के रूप में देखने को मिलती है।

(4) वैयक्तिक तथा सामाजिक विघटन एक-दूसरे के कारण तथा परिणाम है।

2.3 वैयक्तिक विघटन के लक्षण

थॉमस तथा नैनकी के अनुसार "वैयक्तिक जीवन के संगठन को उन बहुत-सी मनोवृत्तियों तथा मूल्यों की संरचना के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जिनका विकास सामाजिक अनुभवों से होता है एवं जिनके द्वारा चेतन या अचेतन रूप से व्यक्ति अपने आधारभूत उद्देश्यों को पूरा करने का प्रयत्न करता है।" इस कथन से स्पष्ट होता है कि एक व्यक्ति का अपना जीवन-संगठन ही नैतिकता, कानून, सामाजिक सम्बन्धों, धर्म, व्यापार या मनोरंजन के क्षेत्र में उसके लिए पथ-प्रदर्शक का कार्य करता है। वैयक्तिक जीवन-संगठन के नियम ही व्यक्ति को विभिन्न सामाजिक परिस्थितियों में एक विशेष ढंग से व्यवहार करने की प्रेरणा देते हैं। इस दृष्टिकोण से वैयक्तिक जीवन-संगठन की विशेषतायें ही यह निर्धारित करती हैं कि व्यक्ति कौन-से व्यवहार करेगा और कौन -से नहीं, अथवा यह कि अपने भावी जीवन में व्यक्ति एक धार्मिक नेता, राजनीतिज्ञ, शिक्षाविद, क्लर्क, जुआरी, अपराधी आदि में से कौन-सा व्यक्तित्व ग्रहण करेगा। इन्हीं विशेषताओं के आधार पर समाज मे विभिन्न व्यक्तियों के व्यक्तिगत जीवन-संगठन में महान भिन्नता पायी जाती है और यही भिन्नता इस बात का निर्धारण करती है कि एक व्यक्ति कैसा ही और वह भविष्य में क्या बन सकता है।

समाज और संस्कृति का प्रयत्न सदैव यह होता है कि व्यक्ति के जीवन में ऐसे गुणों को विकसित किया जाये जो समाज द्वारा स्वीकृत हों। इसके फलस्वरूप समाज में अधिकांश व्यक्तियों की मनोवृत्तियों, व्यवहार सामाजिक मूल्यों तथा एक ही समाज में सदस्यों की मानसिक, सांस्कृतिक, सामाजिक, आर्थिक तथा प्रजातीय विशेषताओं में बहुत अन्तर देखने को मिलता है। युवा सदस्यों की मनोवृत्तियाँ वृद्ध व्यक्तियों से अक्सर बहुत भिन्न होती है। जटिल और औद्योगिक समूहों की तुलना में सरल एवं ग्रामीण समूहों में सामाजिक प्रत्याशाओं का रूप भिन्न-भिन्न होता है तथा सामाजिक परिवर्तन के साथ ही व्यक्ति स्वयं अपने व्यवहारों में भी संशोधन करता रहता है। इन विभिन्नताओं के कारण वैयक्तिक जीवन में भी महान भिन्नताएं कट्टर समर्थक बने रहते हैं, कुछ व्यक्ति आवश्यकतानुसार इनमें मामूली संशोधन कर लेना बुरा नहीं समझते , जबकि अनेक व्यक्ति अपने वैयक्तिक हितो की पूर्ति के लिए सामाजिक मूल्यों से पूर्णतया विचलित व्यवहार प्रदर्शित करने लगते हैं। इस दृष्टिकोण से उन लक्षणों को समझना आवश्यक हो जाता है, जिनके आधार पर किसी समाज में वैयक्तिक विघटन की समस्या तथा सीमा को समझा जा सकता है।

(1) सामाजिक मूल्यों से भिन्न मनोवृत्तियों

सामाजिक मूल्य प्रत्येक व्यक्ति के लिए विभिन्न सामाजिक तथ्यों, परिस्थितियों तथा व्यवहारों के अर्थ को स्पष्ट करते हैं। इनका कार्य समूह के सभी सदस्यों के व्यवहारों में एकरूपता बनाये रखना होता है। वैयक्तिक विघटन

की दशा समाज में तब उत्पन्न होती है, जब व्यक्ति की मनोवृत्तियाँ सामाजिक मूल्यों से भिन्न हो जाती हैं। ब्लूमर का कथन है कि साधारणतया प्रत्येक व्यक्ति वस्तुओं को अपने संदर्भ में परिभाषित करता है, उस पर निर्णय लेता है, चुनाव करता है, योजना बनाता है और तभी किसी कार्य को पूरा करता है। व्यवहार की इस प्रक्रिया में व्यक्ति कभी-कभी यह भूल जाता है कि सामाजिक मूल्यों अथवा आदर्श नियमों के अनुसार उसे किस तरह का व्यवहार करना चाहिए। वह अक्सर उसी ढंग से कार्य करने लगता है, जिससे उसी को अधिकतम लाभ प्राप्त हो, भले ही अन्य व्यक्तियों को इससे कितनी ही हानि क्यों न होती हो। वह सामाजिक मूल्यों से भिन्न व्यवहार करने लगता है। वह वस्तुओं तथा परिस्थितियों को उसी दृष्टिकोण से देखने लगता है जैसा कि वह देखना चाहता है। ये भ्रान्त तर्क ही उसके जीवन के पथ-प्रदर्शक बन जाते हैं। मनोवृत्तियों में होने वाला यह परिवर्तन समाज के साथ व्यक्ति के अभियोजन को प्रभावित करता है। इस प्रकार व्यक्ति द्वारा सामाजिक मूल्यों की उपेक्षा करना, तिरस्कार करना अथवा उन्हें चुनौती देना एक ऐसी दशा पैदा करता है, जिसमें उसका अन्य व्यक्तियों से अच्छा समायोजन नहीं हो पाता है। इससे स्पष्ट होता है कि किसी व्यक्ति में सामाजिक मूल्यों से भिन्न मनोवृत्तियों का विकसित होना एक विघटित व्यक्तित्व का लक्षण है।

(2) सामाजिक आदर्श-नियमों से विचलन

प्रत्येक समाज के अपने कुछ आदर्श-नियम होते हैं। आदर्श-नियम व्यवहार करने का एक ऐसा तरीका है जो सम्पूर्ण समाज को स्वीकार होता है। आदर्श-नियम एक विशेष परिस्थिति में व्यक्ति के आचरणों का निर्धारण करते हैं तथा सामाजिक आधार पर व्यक्ति के व्यवहारों पर नियन्त्रण रखते हैं। व्यक्ति कभी-कभी अपने लाभ के लिए व्यवहारों में इस तरह संशोधन कर लेता है, जो सामाजिक आदर्श-नियमों के प्रतिकूल होते हैं। यही आदर्श-नियमों से विचलित होने की स्थिति है जो वैयक्तिक विघटन का एक स्पष्ट लक्षण है। व्यक्ति आदर्श-नियमों से अनेक कारणों से विचलित हो सकता है। सर्वप्रथम, व्यक्ति की कभी-कभी यह धारणा बन जाती है कि आदर्श नियम सम्पूर्ण समूह के लाभ के लिए हैं, जबकि उसका वैयक्तिक हित इन नियमों से दूर हटकर ही सम्भव है। दूसरा कारण यह है कि कुछ व्यक्ति परम्परागत आदर्श नियमों को उपयोग को आवश्यक नहीं समझते। उदाहरण के लिए, वर्तमान युग में यौनिक नैतिकता, देश के प्रति ईमानदारी, धार्मिक आचरणों तथा ईमानदारी द्वारा उपार्जित आय के अवसर इसलिए उपयोगी व्यवहार नहीं समझा जाता कि इनका भौतिकवादी आदर्शों के अन्तर्गत् कोई महत्व नहीं है। स्वाभाविक है कि ऐसी धारणाओं के प्रभाव से व्यक्ति का जीवन समाज के आदर्श-नियमों से विचलित हो जाता है। इस सम्बन्ध में यह ध्यान रखना जरूरी है कि आदर्श-नियम केवल वही नियम हैं, जिन्हें सम्पूर्ण समूह की स्वीकृति प्राप्त होती है। यदि एक बच्चा अपने माता-पिता के अपराधी व्यवहार को ही अपने समूह का आदर्श-नियम समझकर उनका पालन करना आरम्भ कर दे तो यह स्थिति 'आदर्श-नियमों से अनुरूपता' की दशा को स्पष्ट नहीं करती। सम्पूर्ण समूह के संदर्भ में उसका यह व्यवहार आदर्श-नियमों से विचलन ही कहलायेगा। इस प्रकार व्यक्ति के व्यवहारों में जब कभी भी आदर्श-नियमों से विचलन की स्थिति पैदा होती है, तब उसके वैयक्तिक जीवन के विघटित होने की पूरी सम्भावना होती है।

(3) सामाजिक संरचना का अवांछित दबाव

व्यक्ति पर सामाजिक संरचना का आवश्यकता से अधिक दबाव भी इस बात का संकेत है कि उस समाज में वैयक्तिक विघटन की दर में वृद्धि में हो रही है। यह सच है कि सामाजिक संरचना व्यक्ति की विभिन्न आवश्यकताओं को पूरा करने के साथ ही व्यक्ति के समाजीकरण में सामाजिक संरचना का अधिक हस्तक्षेप के अनेक प्रकार है| लेकिन व्यक्ति के जीवन में सामाजिक संरचना का अधिक हस्तक्षेप अनेक प्रकार के मानसिक

तनावों, चिन्ताओं और कभी-कभी निराशा को जन्म देकर वैयक्तिक विघटन की दशा उत्पन्न करता है। लेपटन ने यह बताया है कि सामाजिक-सांस्कृतिक दशाएं जब व्यक्ति के सामूहिक सम्बन्धों तथा अन्तक्रियाओं में अधिक हस्तक्षेप करती है तो व्यक्ति अनेक मानसिक विकारों का शिकार हो जाता है। उदाहरण के लिए, सामाजिक संरचना यदि इस तरह की हो जिसमें उच्च आर्थिक स्थिति के व्यक्तियों को प्रत्येक क्षेत्र में विकास के अधिक अवसर प्राप्त होते हो तथा निम्न आर्थिक स्थिति के व्यक्तियों को ऊंची प्रस्थितियाँ प्राप्त करने से रोक दिया जाता हो तो इस बात की अधिक सम्भावना की जा सकती है कि ऐसे समाज में वैयक्तिक विघटन की दर अधिक होगी। भारत में जाति व्यवस्था सामाजिक तथा सांस्कृतिक आधार पर नीची जातियों पर अनेक निर्योग्यताओं को लागू करके वैयक्तिक विघटन को बढ़ाने का कारण है। दुर्खीम ने आत्महत्या की धारणा में यह स्पष्ट किया है कि वैयक्तिक जीवन में सामाजिक संरचना का आवश्यकता से अधिक दबाव आत्महत्या का एक प्रमुख कारण है।

(4) प्रस्थिति तथा भूमिका का असन्तुलन

वैयक्तिक जीवन का संगठन एक बड़ी सीमा तक व्यक्ति की संवेगात्मक सन्तुष्टि पर निर्भर होता है। इसी सन्तुष्टि के लिए व्यक्ति परिवार, खेल के साथियों, विषम लिंगियों, आर्थिक समूहों तथा अनेक दूसरे समूहों में सामाजिक और मानसिक सुरक्षा सुरक्षा प्राप्त करने का प्रयत्न करता रहता है। इन व्यक्तियों अथवा समूहों से परस्पर सम्बन्ध स्थापित करने में जब कोई बाधा उत्पन्न होती है, तो उसके वैयक्तिक जीवन में विघटन के तत्व स्पष्ट होने लगते हैं। यह स्थिति मुख्य रूप से तब पैदा होती है जब उसके समूह के अन्य सदस्य यह अनुभव करने लगते हैं कि उस व्यक्ति की भूमिका उसकी स्थिति के अनुरूप नहीं है। यदि व्यक्ति स्वयं भी यह समझने लग जाये कि उसमें अपनी स्थिति के अनुरूप भूमिका का निर्वाह करने की योग्यता या कुशलता का अभाव है, तो उसमें स्वयं भी अनेक तनाव उत्पन्न हो जाते हैं । यह स्थिति भावनात्मक असुरक्षा में वृद्धि करके वैयक्तिक विघटन का कारण बन जाती हैं। वारेन का कथन है कि ''अपनी भूमिकाओं का सही ढंग से संचालन न कर सकना है वैयक्तिक विघटन का कारण है।'' औद्योगिकीकरण, धर्मनिरपेक्षता और परिवर्तन के वर्तमान युग में व्यक्ति को प्राप्त होने वाली स्थितियों में इतनी जल्दी-जल्दी परिवर्तन होता रहता है कि वह स्वयं समाज की प्रत्याशाओं के अनुसार अपनी भूमिका का निर्धारण नहीं कर पाता । लिण्टन ने वैयक्तिक विघटन में प्रस्थिति और भूमिका की अनिश्चितता के प्रभाव को स्पष्ट करते हुए कहा है कि ''व्यक्ति अक्सर अपने आपको ऐसी परिस्थितियों के बीच पाता है कि वह अपनी और अन्य व्यक्तियों की प्रस्थिति तथा भूमिका के बारे में अनिश्चित होता है।यह स्थिति भ्रम और निराशा में वृद्धि करके वैयक्तिक जीवन को विघटित करती है।'' उदाहरण के लिए, एक ही समय पर एक स्त्री को यदि पत्नी, माँ, मित्र, सेविका, कुल वधू और आजीविका उपार्जित करने वाली स्त्री की प्रस्थिति और भूमिका को ग्रहण करती है लेकिन इनमें संतुलन इस्थापित नहीं कर पाती तो इस प्रकार का असन्तुलन उसके जीवन को विघटित कर सकता है। आज विभिन्न समाजों में सामाजिक संरचना के अन्तर्गत जैसे-जैसे विभिन्न स्थितियों का रूप बदलता जा रहा है, वैयक्तिक विघटन की घटनाओं में वृद्धि होती जा रही है।

(5) अलगाव की भावना

आज अधिकांश समाजशास्त्री अलगाव की दशा को वैयक्तिक विघटन का सबसे महत्वपूर्ण लक्षण और कारण मानते है। साधारण शब्दों में अलगाव एक ऐसी सामाजिक-मानसिक दशा है, जिसमें व्यक्ति सामाजिक जीवन के एक या अनेक क्षेत्रों में स्वयं को दूसरों से विमुख पाता है। अलगाव का अभिप्राय पाँच दशाओं से माना जाता है-

1. शाक्तिहीनता अर्थात व्यक्ति की यह धारणा कि वह अपनी सामाजिक दशाओं को किसी प्रकार प्रभावित नहीं कर सकता।

2. अर्थहीनता, अर्थात व्यक्ति के व्यवहारों तथा विश्वासों के मार्ग-निर्देशन का समाज में अभाव होना।

3. नियमहीनता, व्यक्ति का यह विश्वास कि किसी लक्ष्य को पाने के लिए अवैध साधनों को उपयोग में लाना आवश्यक है।

4. पृथक्करण अर्थात, एक ऐसी धारणा कि व्यक्ति का अपने समूह में कोई महत्व नहीं है।

5. अपवर्तन, अर्थात अपनी मेहनत तुलना में समुचित पुरस्कार प्राप्त करने की असमर्थता।

ये सभी वे दशायें हैं जो व्यक्ति को वैयक्तिक, सामूहिक ओर संवेगात्मक स्तर पर बहुत असुरक्षित और शंकालु बनाकर वैयक्तिक विघटन के लिए उचित वातावरण तैयार कर देती है। एरिक फ्राम के विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि किस प्रकार अलगाव की भावना वर्तमान औद्योगिक समाजों में वैयक्तिक विघटन में वृद्धि करती है। आपका विचार है कि प्रौद्योगिक विकास ने मनुष्य को अनेक लाभ प्रदान किये| लेकिन जैसा समझा जाता है, वास्तव में वैसा नहीं हुआ। प्रौद्योगिक विकास के फलस्वरूप व्यक्ति के सम्बन्ध पहले की तरह मजबूत नहीं रहे। आज आर्थिक क्षेत्र में व्यक्ति स्वयं को शक्तिहीन, दिशाहीन, अकेला और असुरक्षित महसूस करता है। आज व्यक्ति ने अशिक्षा, भूख और अनेक दूसरी समस्याओं पर विजय प्राप्त कर ली है, लेकिन भावनात्मक दृष्टि से वह बिल्कुल अकेल रह गया है। इलिएट और मैरिल का यहाँ तक विचार है कि मद्यपान, मस्तिष्क की विकृति और आत्महत्या के रूप में वैयक्तिक विघटन की घटनायें प्रत्यक्ष रूप से इस स्थिति का परिणाम है। मर्टन ने समाज द्वारा स्वीकृत लक्ष्यों तथा उन्हें प्राप्त करने के साधनों में असन्तुलन की दशा को अलगाव का कारण माना है। आपके अनुसार जब कभी भी लक्ष्यों पर अधिक बल दिया जाता है लेकिन उन्हें प्राप्त करने के संस्थागत साधनों का समुचित विकास अथवा पालन नहीं होता तो अपराध की दर बढ़ जाती है, जो वैयक्तिक विघटन की परिचायक है।

2.4 वैयक्तिक विघटन के सामान्य कारण

वास्तविकता यह है कि वैयक्तिक विघटन अनेक दशाओ के संयुक्त प्रभाव का परिणाम होता हैं। यद्यपि समाजशास्त्री वैयक्तिक विघटन की समस्या को किसी एक कारक से सम्बन्धित करके ही स्पष्ट नहीं करते हैं| भारतीय पृष्ठभूमि में वैयक्तिक विघटन की दशा को अ कारणों के आधार पर स्पष्ट किया जा सकता हैः

1. व्यक्तिवादी मनोवृत्तियों में वृद्धि

समाज में व्यक्तियों का व्यवहार कुछ ऐसी मनोवृत्तियों के द्वारा निर्धारित होता है, जो उस समाज की संस्कृति के द्वारा मान्य होती हैं। माता-पिता, पति-पत्नी, भाई-बहन, मित्रों, पड़ोसियों, शिक्षकों तथा अपने साथियों से हम किस प्रकार से सम्बन्धों की स्थापना करेंगे तथा उनके प्रति हमारा कर्तव्य क्या होगा, इसका निर्धारण हमारे सामाजिक मूल्यों तथा मनोवृत्तियों के द्वारा ही होती है। जब इन मनोवृत्तियों के स्थान पर व्यक्तिवादी मनोवृत्तियों में वृद्धि होती है, तो समूह-कल्याण के स्थान पर व्यक्गित स्वार्थ प्रबल बन जाते हैं। ऐसे व्यक्तियों का न केवल समूह में तिरस्कार होने लगता है बल्कि उनमें स्वयं भी समाज विरोधी भावनाओं का विकास हो जाता है। यह स्थिति वैयक्तिक विघटन का महत्वपूर्ण कारण है। भारत में आज व्यक्ति द्वारा परिवारों को अपनी-स्वार्थ पूर्ति का साधन मानना, दूसरें लोगो से स्वार्थपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करना तथा नैतिकता के क्षेत्र में नयी-नयी धारणाओं को विकसित करना वैयक्तिक मनोवृत्तियों के उदाहरण हैं, जिनके फलस्वरूप यहाँ वैयक्तिक विघटन में वृद्धि हुई है।

2. पारिवारिक विघटन

अनेक परिस्थितियों में पारिवारिक विघटन वैयक्तिक विघटन का एक प्रमुख कारण बन जाता है। परिवार व्यक्ति के सामाजीकरण का सर्वप्रमुख आधार है। इसी के द्वारा व्यक्ति को अपनी संस्कृति और सामाजिक आदर्श-नियमों को ग्रहण करने की शिक्षा मिलती है। इसके विपरीत, यदि एक परिवार में पुरूष जुआ खेलते हों, शराब पीते हों, समाज-विरोधी कार्यो से अथवा बेईमानी से जीविका उपार्जित करते हों, बच्चे से गलत काम करवाते हों और उन्हें समुचित मार्गदर्शन न मिल पाता हों, तो इनमें से प्रत्येक परिस्थिति वैयक्तिक विघटन की दशा उत्पन्न करती है। भारत में औद्योगिकरण तथा पश्चिमीकरण के कारण पारिवारों के विघटन की समस्या आज हमारी एक प्रमुख समस्या बन गयी है। इसके फलस्वरूप तरह-तरह के अपराधों, अनैतिकता, मद्यपान और आत्महत्या की घटनाओं में भी वृद्धि हुई है, जो वैयक्तिक विघटन की विभिन्न अभिव्यक्तियाँ हैं।

3. धार्मिक रूढ़िवादिता

धर्म का कार्य व्यक्तियों में मानवीय गुण उत्पन्न करना और उन्हें एकता के सूत्र में बाँधना है। यही धर्म जब रूढ़िवादी हो जाता है, तो व्यक्तियों में स्नेह, त्याग और बन्धुत्व के गुण न करके उनके बीच कटुता, शोषण, मानसिक तनावों और संघर्षो में वृद्धि करने लगता है। उनके फलस्वरूप अक्सर वैयक्तिक विघटन की समस्या उत्पन्न हो जाती है। भारत में मध्यकालीन युग से धर्म का जो रूढ़िवादी स्वरूप हमारे सामने आया है| उसके फलस्वरूप व्यक्तियों का सम्पूर्ण जीवन तरह-तरह के कर्मकाण्डों और बाह्य आडम्बरो को पूरा करने में ही व्यतीत हो जाता है |दो दिन का सार्वजनिक संतोष उसके सम्पूर्ण जीवन को ऋणग्रस्त बना देता है, आर्थिक संकट के कारण निर्धनता में वृद्धि होती है, सामाजिक कुप्रथाएँ व्यक्ति के सामने अनेक संकट उत्पन्न करती हैं, और इस प्रकार वैयक्तिक स्तर पर व्यक्ति उन सभी समस्याओं का शिकार हो जाता है, जौ वैयक्तिक विघटन के लिए उत्तरदायी हैं।

4. निर्धनता तथा बेकारी

ये दोनों दशाएँ संयुक्त रूप से वैयक्तिक विघटन में वृद्धि करती हैं| गरीबी और बेकारी की दशा में व्यक्ति जब तनाव से घिर जाता है, इसके फलस्वरूप वह या तो अपराधी व्यवहार करने लगता है अथवा मद्यपान और जुए का शिकार हो जाता है। अनेक परिस्थितयों में व्यक्ति का जीवन इतना विघटित हो जाता है कि वे आत्महत्या कर बैठते हैं। निर्धनता और बेकारी की दशा में व्यक्ति पर उसके परिवारों के सदस्य भी अविश्वास करने लगते हैं। ये दशाएँ व्यक्ति की कार्यक्षमता को कम कर देती हैं, जिसके फलस्वरूप उसे भविष्य में भी उसे सफलता पाना बहुत कठिन हो जाता है। भारत में आज गरीबी और बेकारी के कारण जिन लाखों व्यक्तियों का जीवन स्तर स्वयं उनके लिए भार बना हुआ है, उसमें वैयक्तिक विघटन की गम्भीरता को सफलतापूवर्क समझा जा सकता है।

5. स्थिति तथा भूमिका का असन्तुलन

साधारणतया जिस व्यक्ति में जैसी योग्यता, कुशलता और रुचि होती है उसी के अनुरूप उसे एक विशेष प्रस्थिति प्राप्त होती है, जिससे वह अपनी भूमिका उचित रूप से निर्वाह कर सकें। इसे हम स्थिति और भूमिका सन्तुलन कहते हैं। यदि व्यक्ति को अपनी योग्यता और रूचि के अनुरूप स्थिति प्राप्त नहीं हो पातीं तो वह अपनी भूमिका का भी उचित रूप से निर्वाह कर पाता। इससे उसके अन्दर निराशा , हीनता और कभी-कभी प्रतिशोध की भावना उत्पन्न हो जाती हैं। यही भावना उसके व्यक्तिव को विघटित कर देती हैं।

6. आकस्मिक तथा संचयी संकट

सामाज में व्यक्ति के सामने जब आकस्मिक अथवा संचयी संकट आते हैं, तो वह बदली हुई परिस्थितियों से अचानक अनुकूलन नहीं कर पाता। इसके फलस्वरूप उसका जीवन विघटित हो जाता है। उदाहरण के लिए, भारतीय परिवार में जीविका उपार्जित करने वाले सदस्यों की अचानक मृत्यु हो जाना एक प्रकार का आकस्मिक संकट है, जो परिवार के दूसरे सदस्यो के लिये एक बड़ी समस्या बन जाती है। स्वतंत्रता के बाद भारत का विभाजन एक आकस्मिक संकट था, जिसने लाखों शरणार्थियों के वैयक्तिक जीवन को पूर्णतया विघटित कर दिया। संचयी संकट वे हैं, एक के बाद दूसरी प्रतिकूल प्रतिस्थितियो को जन्म देकर व्यक्ति के सामने सामाजिक और आर्थिक अनुकूलन की समस्या उत्पन्न करते हैं। अत्यधिक महंगाई, व्यापक भ्रष्टाचार तथा अनियोजित परिवर्तन इसी तरह के संकट हैं जो वैयक्तिक विघटन वृद्धि करते हैं।

7. औद्योगिकरण

अनेक दूसरे देशो के समान भारत में भी औद्योगिक विकास से आर्थिक विषमता में बहुत वृद्धि हुई है। इसके फलस्वरूप न केवल कुटीर उद्योग-धन्धों और दस्तकारी के काम मे लगे व्यक्ति बेरोजगार हो गये, बल्कि उनमें से लाखों लोगों को कारखानों अथवा खेतो में श्रमिको के रूप में कार्य करना आवश्यक हो गया। यह स्थिति व्यक्तियों के मानसिक सन्तुलन को बिगाड़कर तथा उनके सामने आर्थिक कठिनाइयाँ पैदा करके वैयक्तिक विघटन को प्रोत्साहन देती है। औद्योगिकरण के कारण व्यापारिक उतार चढ़ाव में वृद्धि होने से आज का उद्योगपति कुछ ही समय में दिवालिया हो सकता है ऐसे में व्यक्तिक विघटन हो जाना स्वाभाविक है।

8. मानसिक रोग

आधुनिक सभ्यता का एक कटु परिणाम मानसिक रोगो की वृद्धि के रूप में हमारे सामने आया है। आज नगरो में हजारो लागों का जीवन तरह-तरह के भय, चिन्ताओं, असुरक्षा की भावना तथा निराशाओं से घिरा हुआ है। समाज में प्राथमिक सम्बन्धों का अभाव हो जाने के कारण व्यक्ति को मानसिक सुरक्षा भी नहीं मिल पाती। इसके फलस्वरूप मानसिक तनाव और उत्तेजना की घटनाएँ व्यक्तियों के सम्पूर्ण जीवन को विघटित कर देती हैं।

(9) अस्वस्थ मनोरंजन

वर्तमान युग में परिवार के स्वस्थ मनोरंजन के स्थान पर अधिकांश व्यक्ति चलचित्रों द्वारा ही मनोरंजन की आवश्यकता को पूरा करते हैं। चलचित्रों को देखने के बाद व्यक्तियों में यह धारणा प्रबल हो जाती है कि वे भी अपराधी व्यवहारों के द्वारा अधिक धन, आनन्द और जीवन की सुख-सुविधाओं को प्राप्त कर सकते हें। बहुत से चलचित्र अपराध करने के नये-नये तरीके भी जनसामान्य के सामने प्रस्तुत करते हैं। इसे फलस्परूप समाज में न केवल नैतिकता का स्तर गिर जाता है, बल्कि बहुत से व्यक्ति अपराधी जीवन व्यतीत करना प्रारम्भ कर देते हैं। चलचित्रों के कथानक तो केवल काल्पनिक होते हैं, लेकिन जब बहुत-से व्यक्ति व्यावहारिक रूप से इन्हीं का अनुकरण करने लगते हैं। इसके फलस्वरूप उनका मानिसक सन्तुलन इतना अधिक बिगड़ जाता है कि वे जुआ खेलने, शराब पीने, तस्करी करने अथवा चोरी और हिंसा करने लगते हैं। इस प्रकार चलचित्रों के आकर्षण ने कितने ही व्यक्तियों के जीवन को विघटित करके वैयक्तिक विघटन में वृद्धि की है।

(10) दोषपूर्ण संगति

वैयक्तिक विघटन का एक प्रमुख कारण दोषपूर्ण संगति है। किसी व्यक्ति के परिवार का वातावरण चाहे कितना ही अच्छा हो, लेकिन यदि उसके मित्रों और साथियों का जीवन दोषपूर्ण हो, तब उसमें तरह-तरह के दोष उत्पन्न हो जाना स्वाभाविक है। धीरे-धीरे ये दोष उसकी आदत का अंग बन जाते हैं और यहीं से उसका व्यक्तिगत विघटन आरम्भ हो जाता है।

2.5 सारांश

प्रस्तुत इकाई में सर्वप्रथम वैयक्तिक विघटन के बारे में अध्ययन किया गया । तत्पश्चात् वैयक्तिक विघटन के लक्षणों के विषय में ज्ञान प्राप्त किया तथा इकाई के अंत में वैयक्तिक विघटन के सामान्य कारणों के बारे में जानकारी प्राप्त किया।

2.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. वैयक्तिक विघटन से आप क्या समझते हैं परिभाषित कीजिए।
2. वैयक्तिक विघटन के लक्षणों पर प्रकाश डालिए।
3. वैयक्तिक विघटन के सामान्य कारणों की व्याख्या कीजिए।

2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. सिंह, अरुण कुमार सिंह, समाजशास्त्र की मूलभूत अवधारणायें, न्यू रायल बुक कम्पनी, लखनऊ, 2009।
2. हसनैन, नदीम, समकालीन भारतीय समाज: एक समाजशास्त्रीय परिदृश्य, भारत बुक सेंटर, लखनऊ, 2007।
3. चन्द्र, एस.एस. (2002) भारत में सामाजिक समस्याएं: कनिष्का पब्लिशर्स: नई दिल्ली
4. दोषी, एस. एल. एवं जैन, पी.सी. (2005) भारतीय समाज, नेशनल पब्लिसिंग हाउसः जयपुर
5. शर्मा, आर.एन.एवं. शर्मा, आर. के. (2002) सामाजिक विघटन, एटलांटिक पब्लिशर्स एवं डिस्ट्रीब्यूटस
6. लवानिया, एम.एम. एवं राठौड़, ए.एस. (1999) भारतीय समाज, रिसर्च पब्लिकेशनः जयपुर
7. गुप्ता, एम.एल. एवं शर्मा, डी.डी. (2004) समकालीन भारतीय सामाजिक विचारक एवं सामाजिक आन्दोलन, साहित्य भवन पब्लिकेशनः आगरा
8. लवानिया, एम.एम. एवं पडियार, जी. (2010) भारत में सामाजिक समस्यायें, रिसर्च पब्लिकेशनः जयपुर
9. गुप्ता, एम. एल. एवं शर्मा डी.डी., मानव समाज, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा, 2001।
10. आहूजा, राम, सामाजिक समस्याऐं, रावत पब्लिकेशन्स, द्वितीय संस्करण, जयपुर एवं नई दिल्ली, 2000।
11. अहूजा, आर. एवं. अहूजा एम. (2008) समाजशास्त्र: विवेचना एवं परिप्रेक्ष्य, रावत पब्लिकेशन्सः जयपुर
12. चन्द्र, एस.एस. (2002) भारतीय सामाजिक संरचना, कनिष्का पब्लिशर्स: नई दिल्ली

इकाई -3

पारिवारिक विघटन

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 पारिवारिक विघटन का अर्थ एवं परिभाषा

3.3 पारिवारिक विघटन के कारण

3.4 भारत में पारिवारिक विघटन

3.5 सारांश

3.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

3.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप

1. पारिवारिक विघटन के अर्थ एवं परिभाषा को समझ सकेंगे।
2. पारिवारिक विघटन के कारणों का वर्णन कर सकेंगे।
3. भारत में पारिवारिक विघटन के विषय तथा कारणों को जान सकेंगे।

3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में पारिवारिक विघटन के विषय में वर्णन किया गया है। पारिवारिक विघटन पारिवारिक सम्बन्धों में बाधा पड़ना है अथवा यह संघर्षों की श्रृंखला का वह चरम रूप है जो परिवार की एकता के लिए खतरा पैदा कर देता है। यह संघर्ष किसी भी प्रकार में हो सकते हैं। संघर्षों की इस श्रृंखला को पारिवारिक विघटन कहा जा सकता है। इसके अतिरिक्त पारिवारिक विघटन में उन बंधनों की थिशिलता, असामंजस्य अथवा पृथ्ककरण को सम्मिलित करते हैं जो समूह के सदस्यों को एक-दूसरे से बाँधे रखते है'' पारिवारिक विघटन केवल पति-पत्नी के बीच तनाव पैदा होना ही नहीं है बल्कि माता-पिता व बच्चों के सम्बन्धों में तनाव उत्पन्न होना भी पारिवारिक विघटन है। इस प्रकार पारिवारिक विघटन का अर्थ पारिवारिक बन्धनों की नियंत्रण शक्ति में कमी आना तथा सदस्यों के बीच मतैक्य का समाप्त हो जाना ही है।

3.2 पारिवारिक विघटन का अर्थ एवं परिभाषा

पारिवारिक विघटन का तात्पर्य पारिवारिक अव्यवस्था से है, चाहे यह पारिस्परिक निष्ठा और पारिवारिक नियंत्रण की कमी से संबंधित हो, अथवा व्यक्तिवादिता की वृद्धि से। एलिएट और मैरिल के शब्दों में कहा जा सकता है कि, ''पारिवारिक विघटन में हम किन्ही भी उन बंधनों की शिथिलता, असामंजस्य अथवा पृथ्ककरण को

सम्मिलित करते हैं, जो समूह के सदस्यों को एक-दूसरे से बाँधे रखते है" इस प्रकार पारिवारिक विघटन का अर्थ केवल पति-पत्नी के बीच तनाव पैदा होना ही नहीं है, बल्कि माता पिता और बच्चों के संबंधों में तनाव उत्पन्न होना भी परिवार के लिए उतना ही अधिक घातक है।

मॉरर के अनुसार "पारिवारिक विघटन का अर्थ पारिवारिक सम्बन्धों में बाधा पड़ना है, अथवा यह संघर्षो की श्रृखला का वह चरम रूप है जो परिवार की एकता के लिए खतरा पैदा कर देता है। ये संघर्ष किसी भी प्रकार का हो सकते हैं लेकिन संघर्षो की इस श्रृंखला को पारिवारिक विघटन कहा जा सकता है।" इस कथन से स्पष्ट होता है कि पारिवारिक सम्बन्धों में सामान्य तनाव होना पारिवारिक विघटन नहीं है, बल्कि परिवार के सदस्यों के बीच पारिस्परिक तनाव जब सयम-समय पर अनेक संघर्ष उत्पन्न करते रहते हैं, तभी इस दशा को हम पारिवारिक विघटन कहते है।

मार्टिन न्यूमेयर के शब्दो के अनुसार, " पारिवारिक विघटन का अर्थ परिवार के सदस्यों में मतैक्य और निष्ठा का समाप्त हो जाना, अथवा बहुधा पहले के सम्बन्धों का टूट जाना ,पारिवारिक चेतना का समाप्त हो जाना अथवा पृथक्ता में विकास हो जाना है।" पारिवारिक विघटन का यह अर्थ विघटन की प्रकृति के कारणों का ध्यान में रखते हुए दिया गया है। सामान्य शब्दों में कहा जा सकता है कि परिवार में जिस चेतना और निष्ठा के आधार पर सदस्य एक-दूसरे से बँधे रहते है और असीमित दायित्व की भावना को महसूस करते हैं, उसी चेतना और निष्ठा का कम हो जाना अथवा इसमें कोई गम्भीर बाधा पड़ना ही पारिवारिक विघटन है।

उपर्युक्त परिभाषाओं से कुछ महत्वपूर्ण तथ्यों पर प्रकाश पड़ता हैः-

(क) पारिवारिक विघटन का अर्थ परिवार में सदस्यों के सम्बन्धों का टूट जाना है|

(ख) पारिवारिक विघटन का सम्बन्ध केवल पति-पत्नी के सम्बन्ध में उत्पन्न तनाव से ही नहीं है|

(ग) सम्बन्धों का टूटना ही नहीं, बल्कि परिवार के प्रति निष्ठा का भंग होना भी परिवार के संगठन के लिए उतना ही अधिक घातक है|

(घ) परिवार में आकस्मिक रूप से उत्पन्न होने वाला कोई विवाद अथवा तनाव पारिवारिक विघटन की दशा को स्पष्ट नहीं करता बल्कि दिन-प्रतिदिन उत्पन्न होने वाले संघर्ष जब परिवार की स्थिरता के लिए खतरा पैदा कर देते हैं, तभी हम इस दशा को पारिवारिक विघटन कहते हैं।

वास्तविकता यह है कि पति-पत्नी के स्नेह-सम्बन्ध इतने आंतरिक होते हैं कि परिवार को इन्ही सम्बन्धों में सुरक्षा प्राप्त होती है। इन सम्बन्धों कें कोई भी शिथिलता आने पर अधिकांश अवसरों पर परिवार विघटित हो जाते हैं। बहुत से व्यक्ति का विचार यह है कि पारिवारिक विघटन का रूप पति या पत्नी द्वारा दूसरे को छोड़ देना, विवाह विच्छेद, पारस्परिक सहायता करने में असफलता तथा शारीरिक उत्पीड़न आदि के रूप में देखने को मिलता है। वास्तव में ये दशाएँ स्वयं में महत्वपूर्ण जरूर हैं, लेकिन परिवार को आवश्यक रूप से विघटित नहीं करती। ऐसे बहुत से परिवार देखने को मिलेंगे जो आन्तरिक रूप से पूर्णतया विघटित हैं लेकिन उनमें बाह्य रूप से ऐसी दशाएँ देखने को नहीं मिलतीं। बहुत से पति-पत्नी एक-दूसरे से बिल्कुल असहमत होते हुए भी उपर्युक्त दशाएँ इसलिए उत्पन्न नहीं होने देते, क्यों कि उनके धार्मिक विश्वास (जैसा भारत में) या कुछ सामाजिक –सांस्कृतिक दशाएं उन्हें ऐसा करने से रोकती हैं अथवा उनके आर्थिक स्वार्थ (जैसा की पश्चिमी देशो में) उन्हें ऊपरी रूप से एक-दूसरे से बाँधे रखते हैं| इस प्रकार पारिवारिक विघटन का अर्थ पारिवारिक बन्धनों की नियंत्रण शक्ति में कमी आना तथा सदस्यों के बीच मतैक्य का समाप्त हो जाना ही है।

3.3 पारिवारिक विघटन के कारण

परिवार का सर्वव्यापी संस्था है। प्रत्येक समाज में इसके द्वारा समाज की मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति होने के बाद भी विभिन्न समाजो में इसका रूप एक जैसा नहीं होता। यही कारण है कि पारिवारिक संगठन को विघटित करने वाले कारणों की भी कोई सामान्य सूची नहीं बनाई जा सकती। भारत में महिलायें पर पति के बड़े से बड़े अत्याचार, या प्रतिकूल दशाएँ भी परिवार को बहुत कम विघटित कर पाते हैं जबकि पश्चिमी देशों में पुरूषों की अपेक्षा स्त्रियाँ अधिक अधिकारों की आकाक्षां करती हैं और उनके प्राप्त न होने की दशा में अक्सर पारिवारिक विघटन की समस्या उत्पन्न हो जाती है। इसका तात्पर्य है कि सामाजिक मूल्यों की भिन्नता के अनुसार प्रत्येक समाज में पारिवारिक विघटन के कारण पृथक-पृथक हो जाते हैं। इस प्रकार प्रस्तुत विवेचन में हम अनेक सम्भावित कारणों का उल्लेख करेंगे जो परिवार को विघटित कर सकते हैं। कूगर ने पारिवारिक तनावों को पारिवारिक विघटन का प्रमुख कारण माना है। ये तनाव अनेक परिस्थितियों में उत्पन्न हो सकते हैं जिन्हें इस प्रकार स्पष्ट किया जा सकता हैः-

(1) परिवार के सदस्यों में उद्देश्यों की एकता समाप्त हो जाना तथा वैयक्तिक स्वार्थो का प्रभाव बढ़ जाना।

(2) सहयोगी प्रयत्नों में बाधा पड़ना अथवा उनका समाप्त हो जाना।

(3) एक-दूसरे के हित में होने वाले सेवाओं का अवरूद्ध हो जाना

(4) परिवार का अन्य सामाजिक समूहों से सम्बन्ध-विच्छेद हो जाना अथवा उसकी प्रकृति में परिवर्तन हो जाना।

(5) पति-पत्नी के संबंधों में स्नेह, मधुरता और सहानुभूति जैसी विशेषताओं का समाप्त हो जाना।

(6) पति और पत्नी की संवेगात्मक मनोवृत्तियों में विरोध हो जाना अथवा उदासीनता आ जाना।

इलिएट और मैरिल के अनुसार

इलिएट और मैरिल ने पारिवारिक विघटन के विभिन्न कारणों का विस्तृत विवेचना किया है। सामान्यतया इन कारणो को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है- (1) समाज की संरचना में परिवर्तन (2) परिवार के कार्यो में परिवर्तन,(3) वैयक्तिक तथा सामाजिक तनाव। इन्ही पारिवारिक कारणों के आधार पर पारिवारिक विघटन की दिशा को अधिक व्यवस्थित रूप से समझा जा सकता है।

सामाजिक ढाँचे का निर्माण उन बहुत सी स्थितियों और भूमिकाओं से होता है जिनके अनुसार व्यक्ति एक-दूसरे से अपने सम्बन्धों की स्थापना करते हैं। व्यक्ति की प्रस्थिति तथा भूमिकाओं में अनिश्चितता उत्पन्न होने से सामाजिक संरचना बदनले लगती है। यही स्थिति पारिवारिक विघटन का प्रमुख कारण है। उदाहरण के लिये, विवाह के क्षेत्र में व्यक्तियों की स्थिति और भूमिका में आज बहुत से तेजी परिवर्तन हो रहें हैं और सच तो यह है कि पति और पत्नी की वर्तमान स्थिति उनकी परम्परागत स्थिति से बिलकुल ही भिन्न हो गयी है। वे उन भूमिकाओं को पूरा नहीं कर पाते जिनकी समाज के वृद्ध व्यक्ति उनसे आशा रखते हैं। इसके फलस्वरूप वे यह निर्णय नहीं कर पाते कि पत्नी को जीविकापार्जन करना चाहिए या नहीं, घर की आर्थिक व्यवस्था का अधिकार किसे मिलना चाहिए, अथवा बच्चे पति के नियन्त्रण में रहें या पत्नी के , आदि।

यद्यपि पति अथवा पत्नी में से किसी की भी प्रस्थिति और भूमिका में असन्तुलन होने से परिवार विघटित हो जाता है लेकिन आधुनिक युग में स्त्री की स्थिति विशेष रूप से इतनी जटिल हो गयी है कि वह अपनी विभिन्न

भूमिकाओं का निर्वाह कठिनता से ही कर पाती है। इसका कारण स्त्री की स्वभाव सम्बन्धी दुर्बलता अथवा जैविकीय अकुशलता नहीं है। बल्कि वे संक्रमणकालीन दशाएँ हैं जिनसे अभियोजन करना बहुत कठिन हो गया है।

वर्तमान समाजों में उत्पन्न इस प्रवृत्ति के अतिरिक्त कुछ दूसरे दशाएँ भी व्यक्ति की स्थिति और भूमिका में असन्तुलन उत्पन्न करके परिवार के जीवन को विघटित कर रही हैं। ये दशाएँ इस प्रकार हैः

(क) भूमिकाओं की बहुलता

आज विभिन्न सामाजिक वर्गों में स्त्रियों से एक-दूसरे से भिन्न व्यवहारों की आशा की जाती है। निम्न वर्ग में स्त्रियों से मां, गृहिणी और आजीविका उपार्जित करने वाली स्त्री की भूमिका का साथ-साथ निर्वाह करने की आशा की जाती है जबकि उच्च वर्ग स्त्री से साथी, सलाहकार, प्रेमिका आदि बनने की आशा रखता है। माध्यम वर्ग में, इन सबसे अलग पत्नी में यह सभी विशेषताएं होने की आशा की जाती है। इन परिस्थितियों में बहुत-सी स्त्रियाँ परिवार के अन्य सदस्यों से अभियोजन करने में कठिनाई महसूस करती है और अनुकूलन न कर पाने की दशा में उनका परिवार विघटित हो जाता है।

(ख) भूमिका से असन्तोष

स्त्री-शिक्षा में निरन्तर वृद्धि होने से वे पुरूषों के समान विभिन्न व्यवसायों में कार्य करने के योग्य हो गयी है। लेकिन साथ ही उन्हें घर के कार्य भी करने पड़ते हैं जिनसे आजीविका उपर्जित करने के बाद उन्हें छूट मिल जानी चाहिए थी। इस स्थिति ने कुछ परिवारों में इतना असन्तोष उत्पन्न कर दिया है कि वे बिल्कुल ही विघटित दिखाई देने लगे हैं।

(ग) विभिन्न भूमिकाओं के बीच संघर्ष

सामान्यतया पति और पत्नी की भूमिकाओं में संघर्ष होने की स्थिति में भी परिवार विघटित हो जाता है। पति अपनी पत्नी के ऐसे प्रत्येक कार्य को अवांछनीय समझता है जिसे परम्परागत रूप से वह अपना अधिकार मानता रहा था। पत्नी द्वारा अधिक कार्य करने अथवा आर्थिक जीवन में पति से अधिक सफल होने पर भी वह अक्सर परिवार में कोई अधिकार प्राप्त नहीं कर पाती। पति साधारणतया यह समझता है कि स्त्री का कार्य-क्षेत्र केवल खाना पकाना और बच्चों की देख-रेख करना है जबकि पत्नी प्रत्येक क्षेत्र में समान अधिकारों का दावा कर सकती है। भूमिकाओं का यह संघर्ष जब एक सीमा के बाहर निकल जाता है, तब परिवार विघटित हो जाता है।

3.4 भारत में पारिवारिक विघटन

भारत में पारिवारिक विघटन आज हमारी महत्वपूर्ण समस्याओं में से एक है। औद्योगिक क्रान्ति से पहले तक भारतीय परिवारों का रूप संयुक्त था लेकिन औद्योगीकरण, नगरीकरण, शिक्षा तथा पश्चिमी जीवन दर्शन के प्रभाव से भारतीय परिवारों की संरचना और प्रकार्यों में तेजी से परिवर्तन होने लगा। इस परिवर्तनों में न केवल परिवार की संरचना को अन्संतुलित बना दिया बल्कि सदस्यों के पारस्परिक सम्बन्धों, सामंजस्य की प्रक्रिया, परिवार के अनुशासन तथा व्यवहार प्रतिमानों को विघटन करनेके लिए भी यही परिवर्तन सबसे अधिक उत्तरादायी सिद्ध हुए। भारत में आज परिवार में अनेक समस्यायों ने जन्म ले लिया है जिनके आधार पर भारतीय परिवारों को विघटन प्रक्रिया की ओर अग्रसर माना जा सकता है| भारत में पारिवारिक विघटन से संबंधित प्रमुख समस्याएँ हैं:-

(1) पति-पत्नी के बीच असामंजस्य

यह वर्तमान भारतीय परिवारों की सबसे विषम समस्या हैं। परम्परागत रूप से संयुक्त परिवारों के अनुशासन, स्त्रियों में अनुभव तथा बाल विवाहों के कारण पति-पत्नी के बीच असामंजस्य की समस्या अनुभव नहीं की जाती थी। हमारे धर्मशास्त्र तथा सामाजिक मूल्य बचपन से ही स्त्रियों के अपने पति को 'देवता' तथा 'स्वामी' के रूप में मानने का प्रशिक्षण देते थे। आज स्त्रियों में शिक्षा का तेजी से प्रसार हुआ है, संयुक्त परिवारों के स्थान पर एकाकी परिवारों की स्थापना हुई है तथा आर्थिक क्षेत्र में स्त्रियों का सहभागिता बढ़ती जा रहा है। इस स्थिति में एक ओर पुरूष ऊपर से भले ही समानता और स्वतंत्रता का ढोंग रचाते रहें लेकिन मानसिक रूप से वे आज भी पत्नी को एक आश्रित नारी, सेविका, गृहणी तथा बच्चों की संरक्षिका के रूप में देखना चाहते है। इस स्थिति में पति-पत्नी की प्रत्याशाओं तथा व्यवहारों में असन्तुलन पैदा हो जाने के कारण अधिकांश परिवारों में कलह, संघर्ष ,अविश्वास तथा पृथक्करण सामान्य सी घटनाएं बनती जा रही हैं।

(2) विवाह विच्छेद की दर में निरन्तर वृद्धि

विवाह विच्छेद भारतीय परिवारों में विघटन की एक अन्य अभिव्यक्ति है। आज पारस्परिक त्याग, सहिष्णुता तथा विवाह बन्धन की पवित्रता के मूल्य कमजोर पड़ गये हैं। विवाह को एक ऐसे समझौते के रूप में देखा जाने लगा है जिसका उद्देश्य आर्थिक सुरक्षा तथा योनिक सुख प्राप्त करना है। इसके फलस्वरूप नगरीय क्षेत्रों में आज तलाक की संख्या में तेजी से वृद्धि हो रही है। ग्रामीण क्षेत्रों में भी पृथक्करण की समस्या आज पहले से अधिक गम्भीर है।

(3) बच्चों के समुचित पालन-पोषण का अभाव

यह हमारे परिवारों की एक स्थायी विशेषता बनती जा रही है| परम्परागत रूप से भारतीय परिवार बच्चों के समाजीकरण का आदर्श केन्द्र थे जहाँ उन्हें सामाजिक, सांस्कृतिक, नैतिक, शैक्षणिक तथा अन्य सभी प्रकार की शिक्षा देना परिवार के सदस्यों का नैतिक दायित्व था। आज परिवार में व्यक्ति का जीवन आत्म-केन्द्रित, अत्यधिक व्यस्त तथा भौतिक सुखों की ओर उन्मुख है। अधिकांश माता-पिता अपने दायित्व को भूलकर शिक्षा संस्थाओं को ही बच्चे का अन्तिम संरक्षक मानने लगे हैं। परिवार में बच्चों को नैतिक व सांस्कृतिक प्रशिक्षण के स्थान पर सदस्यों से तिरस्कार और उदासीनता का व्यवहार मिलने लगा है। इसके फलस्वरूप परिवार में ही तनाव तथा कलह में वृद्धि नहीं हुई हैं बल्कि बच्चों की अनुशासहीनता सामाजिक जीवन को भी विषाक्त करने लगी है।

(4) परिवार के नियन्त्रण में कमी

आधुनिक युग में व्यक्ति इस बारे में आश्वस्त हो गया है कि परिवार की परम्पराओं तथा मर्यादाओं को तोड़कर ही वह जीवन में सभी सुख-सुविधाएँ प्राप्त कर सकता है। परिवार के हास्य, व्यंग्य अथवा तिरस्कार का व्यक्ति के जीवन में कोई महत्व नही है। दूसरी ओर, वर्तमान परिवार व्यक्ति के लिए वे कार्य भी नहीं कर रहे हैं जिसके कारण उसके जीवन पर परिवार का नियन्त्रण बना हुआ था। आज व्यक्ति अपनी सामजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, शैक्षणिक, मनोरंजनात्मक और यहाँ तक कि जैविकीय आवश्यताओं के लिए भी अन्य संस्थाओं पर निर्भर हो गया है| अतः परिवार एक संस्था न रहकर एक सुविधापूर्ण तथा हित-प्रधान समिति के रूप में परिवर्तित हो रहे हैं।

(5) परिवार में संस्तरण का भंग हो जाना

परम्परागत रूप से भारतीय परिवारों में प्रत्येक सदस्य की प्रस्थिति दूसरे सदस्य की तुलना में पूर्व-निर्धारित थी। यह संस्तरण परिवारिक अनुशासन , सामाजिक अनुशासन तथा सामाजिक सीख की प्रक्रिया को प्रभाव पूर्ण बनाये रखने में भी बहुत सहायक था। आज अनियमित स्वतन्त्रता तथा व्यक्तिवादी मनोवृत्तियों के कारण परिवार का प्रत्येक सदस्य अधिक से अधिक अधिकारों की माँग करने लगा है। आयु, नातेदारी तथा नैतिकता के सभी आधार धूमिल पड़ गये हैं। परिवार में वृद्ध सदस्यों का तिरस्कार करना तथा उन्हें सुविधाओं से वंचित रखना आम बात माना जाता है । इस स्थिति ने एक ऐसी पारिवारिक संरचना का निर्माण किया है जिसमें सभी सदस्य परिवार में शासक और अधिनायक की स्थिति में है लेकिन किसी की भी रूचि दूसरे के कल्याण में नहीं है।

(6) गृहणियों की स्थिति तथा भूमिका में संघर्ष

भारत में आज मध्यम और उच्च वर्ग के परिवारों में शायद ही कोई परिवार ऐसा जिसे जिसमें स्त्रियां अपनी स्थिति से सन्तुष्ट हों तथा पुरूष स्त्रियों की भूमिका में प्रति आश्वस्त हों। आज स्त्रियां शिक्षित होने के बाद सार्वजनिक जीवन में प्रवेश करना चाहती है, बच्चों के प्रशिक्षण तथा घरेलू प्रबन्धक में वे पुरूष को बराबर का सहयोगी बनाना चाहती हैं तथा सामजिक स्वतन्त्रता एवं भौतिक सुखों में उनकी रूचि निरन्तर बढ़ रही है। पुरूष वर्ग इन आकांक्षाओं के अनुरूप स्त्रियों की स्थिति को मान्यता देने के लिए तैयार नहीं है। इसके फलस्वरूप भारत में पारिवारिक विघटन का खतरा निरन्तर बढ़ता जा रहा है।

(7) नैतिकता के नए मापदण्ड

परिवार में आज नैतिकता के परम्परागत मूल्यों का प्रभाव धीरे-धीरे कम होता जा रहा है। सबसे अधिक ह्रास यौन सम्बन्धी मूल्यों में देखने को मिलता है। आज माता-पिता के सामने ही परिवार के अविवाहित युवा सदस्यों द्वारा विषमलिंगय मित्रों से धनिष्टता प्रदर्शित कराना तथा उत्तेजक साहित्य का अध्ययन करना बुरा नहीं समझा जाता। विवाह को मात्र यौन सुख प्राप्त करने का साधन समझने के कारण यह अपने मूल उद्देश्यों से दूर हटता जा रहा है तथा प्रेम पर आधारित विवाह करना आधुनिकता की कसौटी बनती जा रही है| फ्रॉयडवादी विचारों तथा पश्चिमी जीवन -दर्शन के अनुसार ऐसे व्यवहार भले ही अच्छे मान लिए जायें लेकिन भारतीय जीवन-पद्धति में इन व्यवहारों ने अनेक नयी समस्याओं को जन्म देकर हजारों परिवारों को विघाटित कर दिया है।

(8) परिवार में व्याप्त रूढ़ियाँ

इनके दुष्परिणाम हमारे समाज में परिवारिक विघटन का ज्वलन्त उदाहरण है| भारत में आज ग्रामीण तथा नगरीय क्षेत्रों के अधिकांश परिवार अन्धविश्वासों, कुरीतियों, अनुपयोगी कर्मकण्डों तथा विघटनकारी प्रथाओं के बीच जीवन व्यतीत कर रहे हैं| जिन परिवारों में प्रत्येक सदस्य भाग्य की दुहाई देता हो,बाल-विवाह, दहेज, जाति भेद, कुलीनता तथा वैधव्य जीवन की निर्योग्यताओं को अपने लिए आदर्श समझता हो, ऋण लेकर भी कर्मकण्ड़ो को पूरा करना अनिवार्य समझता हो तथा पुरूषों द्वारा स्त्रियों का एवं वृद्ध स्त्रियों द्वारा नव-विवाहित स्त्रियों का शोषण किया जाता हो,उन्हें किस प्रकार संगठित परिवार कहा जा सकता है|

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि भारत में पारिवारिक व्यवस्था आज संक्रमण के दौर से गुजर रही है कुछ विद्वानों का विचार है कि इस परिवर्तनशील दशा को पारिवारिक विघटन नहीं मानना चाहिए लेकिन वास्तविकता यह है कि आज भारतीय परिवारों में अभूतपूर्व संकट की समस्या उत्पन्न हुई है इसे विघटन की दशा न मानने से तो पारिवारिक पुनर्गठन की सम्भावना और भी कम रह जायेगी।

17.4.1 भारत मे पारिवारिक विघटन के कारण

हम पारिवारिक विघटन के कारणों को विस्तार से स्पष्ट कर चुके है लेकिन इनके अतिरिक्त कुछ ऐसे कारणों का भी उल्लेख किया जाना आवश्यक है जो मुख्यतः भारत में परिवारों की विघटित करने के लिए अधिक उत्तरदायी सिद्ध हुए है। ये कारण निम्नलिखित हैं :-

1. औद्योगीकरण तथा नगरीकरण

औद्योगीकरण के कारण आज आजीविका उपार्जित करने का क्षेत्र बहुत व्यापक हो गया है| गाँवों से लाखों श्रमिक प्रतिदिन उद्योगों में काम करने के लिए नगरों में आते हैं जहाँ स्थान की कमी के कारण परिवार के साथ स्थायी रूप से रह सकना सम्भव नहीं हो पाता । इसके फलस्वरूप गाँव में उनके बच्चे अपने पिता के नियन्त्रण से मुक्त हो जाते हैं| स्नेह के अभाव में परिवार के नियम उनके व्यवहारों की नियन्त्रित नहीं कर पाते अक्सर नगर की चकाचैध तथा मानसिक तनाव पुरूष को अपने परिवार के प्रति उदासीन बना देते है| यह स्थिति कभी -कभी स्त्रियों को भी अनैतिकता की ओर ले जाती है| ऐसे परिवारों का विघटित हो जाना कोई आश्चर्य की बात नहीं है।

2. दोषपूर्ण शिक्षा

शिक्षा की वर्तमान व्यवस्था युवा पीढी में शारीरिक श्रम तथा ग्रामीण रहन-सहन के प्रति घृणा पैदा करके भौतिक जीवन को प्रोत्साहन दे रही है| भारत में जहाँ लाखों युवक विवाह पश्चात् भी नगर में शिक्षा ग्रहण करने आते हैं| धीरे-धीरे अपने ग्रामीण परिवार से उदासीन हो जाते हैं, माता-पिता भी बच्चे में उच्च संस्कारों की अपेक्षा कृत्रिम व्यवहारों की सीख को ही शिक्षा की सार्थकता के रूप में देखते है| यही बच्चे बाद में जब परिवार के आदर्श नियमों, प्रथाओं, मर्यादाओं तथा अनुशासन को तोडना है तो परिवार विघटित होना आरम्भ हो जाता है| वर्तमान शिक्षा ने आकांक्षाओं, आन्दोलनकारी प्रवृत्तियों तथा व्यक्तिवादिता को जन्म दिया है| उसमें भारतीय परिवारों में पहले से विद्यमान त्याग , आत्म-संयम तथा स्नेह के गुण समाप्त होते जा रहे हैं | इसी से परिवार विघटित रहे हैं।

3. आर्थिक तनाव

भारत में आर्थिक तनाव आज अपनी चरम सीमा पर है जिसका परिवारों के संगठन पर बहुत प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है| एक ओर हमारे देश में आज लगभग तीन करोड़ व्यक्ति बेरोजगार है तो दूसरी ओर लगभग आधी जनसंख्या निर्धनता की सीमा-रेखा से नीचे की जिन्दगी व्यतीत कर रही है| आर्थिक विषमताओं के बाद भी स्त्रियों द्वारा जीविका उपार्जित करना अच्छा नही समझा जाता| यह आर्थिक तनाव पारस्परिक अविश्वास को प्रोत्साहन देकर, परिवार में कलह को बढाकर, पुरुषों को मद्य तथा जुए की ओर प्रवृत्त करके तथा कभी-कभी स्त्रियों को अनैतिक कार्यो के लिए बाध्य करके परिवार को विघटित कर रहे है।

4. पश्चिमी मनोवृत्तियाँ

भारतीय परिवारों विघटित करने में पश्चिमी मनोवृत्तियाँ बहुत प्रभावपूर्ण सिद्ध हुई है। पश्चिमी जीवन-दर्शन ने हमारे समाज में धीरे-धीरे यह विचारधारा विकसित की कि केवल एकाकी परिवारों के द्वारा ही व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का विकास कर सकता है और यह कि परिवार में युवा सदस्यों की स्थिति वृद्ध सदस्यों से कम महत्वपूर्ण नहीं, इसके अतिरिक्त स्त्री स्वतन्त्रता को प्रोत्साहन देकर परम्परागत मूल्यों को रूढिकर सिद्ध करके तथा आचरण के नये तरीकों को लोकप्रिय बनाकर भी पश्चिमी जीवन-दर्शन ने हमारे परिवारों की स्थिरता को कम किया है| पश्चिम

की व्यक्तिवादी तथा सुखवादी मनोवृत्तियों का ही परिणाम है कि आज बीमारी, बेकारी, अपंगता , वृद्धावस्था ,वैधव्य अथवा किसी अन्य संकट की दशा में व्यक्ति अपने परिवार में ही स्वयं को अकेला और असहाय महसूस करने लगा है।

5. सामाजिक संरचना में परिवर्तन

हमारी परम्परागत सामाजिक संरचना में उत्पन्न होने वाले वर्तमान परिवर्तन भी पारिवारिक विघटन के लिए उत्तरदायी है उदाहरण के लिए विवाह आज परिवार का दायित्व न होकर व्यक्ति की इच्छा का विषय बन गया है| संयुक्त सम्पत्ति की धारणा का लोप हो चुका है| धर्म आचरण की शुद्धता से सम्बन्धित न रहकर एक संगठित व्यवसाय बनता जा रहा है| नैतिक मूल्य निरन्तर टूट रह है| विभिन्न वर्गों के लोगों की स्थिति तथा भूमिका का संतुलन लगभग नष्ट हो चुका है| शिक्षा में सामाजिक व सांस्कृतिक सीख का कोई स्थान नही है तथा आर्थिक विकास को ही सामाजिक संगठन का सबसे महत्वपूर्ण आधार समझा जाने लगा है| सामाजिक संरचना में उत्पन्न ये सभी परिवर्तन परिवार की पवित्रता को नष्ट करके इसे विघटन की ओर ले जा रहे है।

6. नये सामाजिक अधिनियम

भारत में स्वतन्त्रता के बाद बनने वाले सामाजिक अधिनियमों का मुख्य उद्देश्य रूढ़ियों तथा कुरीतियों के प्रभाव को कम करके सामाजिक न्याय में वृद्धि करना था, लेकिन दुर्भाग्य से यही अधिनियम पारिवारिक विघटन का भी महत्वपूर्ण कारण बन गये । हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम के फलस्वरूप परिवार की सम्पत्ति अथवा संयुक्त कोष की धारणा समाप्त हो गई तथा भारत जैसे खेतिहर देश में भूमि के विभाजन को प्रोत्साहन मिला । हिन्दू विवाह अभिनियम ने विवाह विच्छेद को प्रोत्साहन देकर बच्चों को आर्थिक संरक्षण तो दिया लेकिन उन्हें कहीं अधिक उच्छृखल तथा अनुशासनहीन भी बना दिया ।

7. धर्म के प्रभाव के ह्रास

परम्परागत रूप से भारतीय परिवारों में धार्मिक दायित्वों को पूरा करना वह सबसे दृढ आधार था जो परिवार के सदस्यों को एक-दसरों से बाँधे रखता था वर्तमान युग में धर्म की व्याख्या दायित्व -बोध के आधार पर न करके भ्रान्त तर्को तथा वैयेक्तिक स्वार्थों के आधार पर की जाने लगी है| इसके फलस्वरूप धर्म तथा अर्थ का निर्वाह परिवार का कार्य न रहकर व्यक्तिगत कार्य बन गया है| संस्कारों को रूढियों के रूप में देखा जाने लगा है तथा अनुष्ठानों की पूर्ति को परिवार में आवश्यक नही समझा जाता है| इसके फलस्वरूप परिवार के संगठन का आधार भावनात्मक न रहकर सुविधा के सम्बन्धों पर आधारित हो गया। यही वह स्थिति है जिसने परिवार में तरह-तरह के तनावों संघर्षो तथा वैमनस्य को जन्म देकर इसे विघटित कर दिया।

उपर्युक्त कारण भारतीय परिवारों को विघटित करने वाले कुछ प्रमुख कारण है| इनके अतिरिक्त वर्तमान परिवारों में सदस्यों के कार्यो की बहुलता, परिवार के कार्यों का दूसरी समितियों को हस्तान्तरण, सांस्कृतिक मिश्रण के कारण पति-पत्नी के व्यवहारों में भिन्नता बच्चों के प्रति बढती हुई उदासीनता, नैतिक मूल्यों में संघर्ष हित प्रधान सम्बन्धों में वृद्धि तथा स्थानीय गतिशीलता आदि वे सहयोगी दशाएँ जो भारत में पारिवारिक विघटन में निरन्तर वृद्धि कर रही है।

3.5 सारांश

इस इकाई में सर्वप्रथम पारिवारिक विघटन के अर्थ तथा परिभाषा का अध्ययन किया गया |इसके पश्चात् पारिवारिक विघटन के कारणों के विषय में जानकारी प्राप्त की तथा उक्त में भारत में पारिवारिक विघटन तथा विघटन के कारणों के विषय में अध्ययन किया।

3.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. पारिवारिक विघटन की अवधारणा को समझाइये।
2. पारिवारिक विघटन के कारणों पर प्रकाश डालिए।
3. भारत में पारिवारिक विघटन के स्वरूप का वर्णन कीजिए।
4. भारत में पारिवारिक विघटन के कारणों की व्याख्या कीजिए।

3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. सिंह, अरुण कुमार सिंह, समाजशास्त्र की मूलभूत अवधारणायें, न्यू रायल बुक कम्पनी, लखनऊ, 2009।
2. हसनैन, नदीम, समकालीन भारतीय समाज: एक समाजशास्त्रीय परिदृश्य, भारत बुक सेंटर, लखनऊ, 2007।
3. चन्द्र, एस.एस. (2002) भारत में सामाजिक समस्याएं: कनिष्का पब्लिशर्स: नई दिल्ली
4. दोषी, एस. एल. एवं जैन, पी.सी. (2005) भारतीय समाज, नेशनल पब्लिसिंग हाउसः जयपुर
5. शर्मा, आर.एन.एवं. शर्मा, आर. के. (2002) सामाजिक विघटन, एटलांटिक पब्लिशर्स एवं डिस्ट्रीब्यूटस
6. लवानिया, एम.एम. एवं राठौड़, ए.एस. (1999) भारतीय समाज, रिसर्च पब्लिकेशनः जयपुर
7. गुप्ता, एम.एल. एवं शर्मा, डी.डी. (2004) समकालीन भारतीय सामाजिक विचारक एवं सामाजिक आन्दोलन, साहित्य भवन पब्लिकेशनः आगरा
8. लवानिया, एम.एम. एवं पडियार, जी. (2010) भारत में सामाजिक समस्यायें, रिसर्च पब्लिकेशनः जयपुर
9. गुप्ता, एम. एल. एवं शर्मा डी.डी., मानव समाज, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा, 2001।
10. आहूजा, राम, सामाजिक समस्याऐं, रावत पब्लिकेशन्स, द्वितीय संस्करण, जयपुर एवं नई दिल्ली, 2000।
11. अहूजा, आर. एवं. अहूजा एम. (2008) समाजशास्त्र: विवेचना एवं परिप्रेक्ष्य, रावत पब्लिकेशन्सः जयपुर
12. चन्द्र, एस.एस. (2002) भारतीय सामाजिक संरचना, कनिष्का पब्लिशर्स: नई दिल्ली

इकाई–4

निर्धनता

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

4.01 प्रस्तावना

4.02 निर्धनता अर्थ एवं अवधारणा

4.03 निर्धनता सापेक्षिक दृष्टिकोण

4.04 निर्धनता के स्वरूप

4.05 निर्धनता के कारण

4.06 निर्धनता के माप

4.07 निर्धनता के दुष्प्रभाव

4.08 भारत में के उन्मूलन हेतु पंचवर्षीय योजनाओं में किये गये प्रयास

4.09 निर्धनता उन्मूलन हेतु सुझाव

4.10 सारांश

4.11 बोध–प्रश्न

4.12 सन्दर्भ ग्रन्थ

4. 0 उद्देश्य

इस पाठ को पढ़कर आप

- निर्धनता की अवधारणा का अर्थ एवं अवधारणा को समझ सकेंगे।
- निर्धनता के सापेक्षिक दृष्टिकोण को जान सकेंगे।
- निर्धनता के स्वरूप का जान सकेंगे।
- निर्धनता के कारणों एवं प्रभावों की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।
- निर्धनता के मापन को समझ सकेंगे तथा अन्त में निर्धनता के निवारण के उपायों को जान सकेंगे।

4.01 प्रस्तावना

निर्धनता एक ऐसी सामाजिक समस्या है, जिससे विकसित, विकासशील अविकसित तथा साम्यवादी देश पीड़ित हैं। वर्तमान समय में जनसंख्या वृद्धि एवं अशिक्षा गरीबी को प्रश्रय दे रही है। रूपये का अवमूल्यन, वस्तुओं की आपूर्ति में कमी तथा मूल्यों में वृद्धि एवं आय का असमान वितरण निर्धनता की वृद्धि में महत्वपूर्ण

भूमिका का निर्वहन कर रहे हैं। निर्धनता के कारण लोगों को दो वक्त का पर्याप्त भोजन, तन ढकने के लिए कपड़ा तथा रहने के लिए मकान की समस्याओं से जूझना पड़ रहा है।

स्वतंत्रता के पश्चात भारत ने अनके क्षेत्रों में प्रगति की है तथा वर्तमान समय में आर्थिक विकास की गति सम्मानजनक कही जा सकती है। यद्यपि, प्राकृतिक एवं मानवीय संसाधनों का. वैज्ञानिक ढंग से दोहन नहीं हुआ है, जिसके फलस्वरूप भारत को आर्थिक दृष्टि से कम विकसित देश कहा जा सकता है। वर्तमान समय में विकास की समस्या भारत निर्धनता ही नहीं वरन् विश्व के अन्य राष्ट्रों के लिए चिन्ता एवं चिन्तन का विषय है। यह एक निर्विवाद सत्य है कि भारत एक कृषि प्रधान देश है परन्तु कृषि क्षेत्र की अवस्था भी काफी शोचनीय है। किसान इतने गरीब हैं कि कृषि क्षेत्र अनार्थिक एवं पिछडी अवस्था में विद्यमान है। हालांकि भारत का औद्योगिक ढाँचा विकास कर रहा है परन्तु वैश्विक दृष्टि से अभी भी हम अन्य देशों की तुलना में पिछडे हुए हैं।

भारत में बेरोजगारी, जनसंख्या वृद्धि, गाँवों से शहरों की ओर पलायन, इत्यादि निर्धनता की ओर इशारा करते हैं। भारत को सही मायने में विकसित होने के लिए निर्धनता की समस्या पर नियंत्रण स्थापित करना होगा, जिसके लिए समग्र प्रयासों की महती आवश्यकता है। निर्धनता एक ऐसी जटिल अवधारणा हैं, जिसकी व्याख्या करना कठिन है। वस्तुत: निर्धनता एक ऐसी स्थिति है जिसमें कोई व्यक्ति जीवनयापन से सम्बन्धित मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु वांछित आय अर्जित करने में सक्षम नहीं हो पाता। निर्धनता सापेक्ष एवं तुलनात्मक अवधारणा है। यह तुलना व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामूहिक, राष्ट्रीय एवं अन्तर्राट्रीय सार पर की जा सकती है। प्रस्तुत इकाई में हम निर्धनता को समझने का प्रयास करेंगे। इस इकाई में निर्धनता की परिभाषा, अर्थ, मापन, निवारण इत्यादि विषयों की विवेचना भी की जायेगी।

निर्धनता : ऐतिहासिक अवलोकन.

निर्धनता एक ऐसी आर्थिक एवं सामाजिक समस्या है जो सम्पूर्ण विश्व में व्याप्त है और समृद्ध तथा विकसित देश भी इससे प्रभावित हैं। गरीबी एड्स नामक बीमारी से भी ज्यादा। भयावह है। विश्व में गरीब देशों की संख्या कितनी है कि उन्हें 'तीसरी दुनिया' के नाम से अभिहित किया जाता है। तीसरी दुनिया के लोगों को संतुलित आहार, पहनने को पर्याप्त वस्त्र एवं रहने के लिए आवास उलझन नहीं हैं। कमोबोश भारत में भी स्थिति काफी खराब है। भारत के लाखों परिवार ऐसे हैं जो गरीबी की रेखा से मचिए जीवनयापन कर रहे है जिन्हें दो वक्त की रोटी भी नसीब नहीं है, परन्तु सरकारी प्रयासों के द्वारा विशिष्ट रूप से रोजगार गारन्टी योजना' के माध्यम से गरीबी की भयावहता पर अंकुश लगाने का प्रयास किया गया 'है।

प्राचीन समय में गरीबी समाज में एक अभिशाप के रूप में विद्यमान नबी थी, वर्तमान समय में गरीब और अमीर के बीच एक गहरी खाई दिखाई देती है। गरीब और अमीर के बीच व्याप्त असमानता को जन्म देने में औद्योगिक क्रान्ति ने महत्ती भूमिका निभाई है। औद्योगिक क्रान्ति ने समाज में तीव्रगति से आर्थिक एवं सामाजिक परिवर्तन लाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। माशीनीकरण ने जहाँ एक ओर समाज में प्रचुर मात्रा में वस्तुऐं उपलब्ध करवाई हैं एवं विकास तथा समृद्धि को बढ़ाने में सहयोग किया है, वहीं दूसरी ओर एक ऐसे विश्व को स्थापित किया है जिसे तीसरी दुनिया' के नाम से अभिहित किया जाता है, जो गरीबी और अभावों से जूझ रहा है। यहाँ पर यह उल्लिखित करना समीचीन होगा कि औद्योगिकीकरण और माशीनीकरण का आगाज पश्चिमी देशों में हुआ था। पश्चिमी के दोशों ने अपनी औद्योगिक माँगों की पूर्ति के लिए एाशिया, अफ्रीका, दक्षिण अमेरिका आदि महाद्वीप के देशों को अपना गुलाम बनाकर औपनिवेशिक साम्राज्य की स्थापना की और वहाँ के प्राकृतिक संसाधनों का शोषणयुक्त पद्धति से दोहन किया। जिसके परिणामस्वरूप इन देशों में गरीबी बढ़ी। इन्होंने अपने उद्योग जगत की पूर्ति हेतु औपनिवेशिक देशों की अर्थव्यवस्था को छिन्न–भिन्न कर डाला। भारत में अंग्रेजों ने

अपने कुशासन के दौरान परम्परागत भारतीय अर्थव्यवस्था की विशेष कर ग्रामीण अर्थव्यवस्था को कमजोर कर दिया।

4.02 निर्धनता : अर्थ एवं अवधारणा

निर्धनता समाज की आर्थिक स्थिति का द्योतक होने के साथ–साथ सामाजिक प्रस्थिति का भी परिचायक है, क्योंकि व्यक्ति की आर्थिक स्थिति का घनिष्ठ सम्बन्ध सामाजिक वर्ग से भी है। गिलिन एवं गिलिन का मत है कि गरीबी एवं अमीरी तुलनात्मक सम्बोधन हैं। आमजन को भाषा में गरीबी का तात्पर्य आर्थिक असमानता, आर्थिक पराश्रित तथा आर्थिक अकुशलता से समझा जाता है। निर्धनता को केवल आर्थिक अभाव के रूप में समझने का अर्थ होगा, इसे संकुचित अर्थ देना। प्रमुख समाज वैज्ञानिकों हारा प्रस्तुत निर्धनता की परिभाषाएं निम्नांकित हैं:–

बीवर लिखते हैं कि गरीबी एक ऐसे जीवन स्तर के रूप में परिभाषित की जा सकती है कि जिसमें स्वास्थ्य एवं शारीरिक क्षमता बनी नहीं रहती।

गोडार्ड निर्धनता के इस प्रकार परिभाषित करते हैं ' 'निर्धनता उन वस्तुओं की अपर्याप्त पूर्ति की वह दशा है, जिनकी एक व्यक्ति को अपने तथा आश्रितों के स्वास्थ्य एवं शक्ति को बनाए रखने के लिए आवश्यकता होती है।

''गिलिन एवं गिलिन के अनुसार, "निर्धनता वह दशा है जिसमें एक व्यक्ति या तो अपर्याप्त आय अथवा मूखर्तापूर्ण व्यय के कारण अपने जीवन स्तर को इतना ऊँचा नहीं रख पाता कि उसकी, शारीरिक एवं मानसिक क्षमता बनी रह सके और उसको तथा उसके प्राकृतिक आश्रितों को अपने समाज के स्तरों के अनुरूप उपयोगी ढंग से कार्य करने के योग्य बनाये रख सकें। "इस प्रकार उपर्युक्त वर्णित परिभाषाओं में निर्धनता या गरीबी को इस आधार पर समझने का प्रयास किया है कि किसी व्यक्ति को जीवनयापन करने के लिए न्यूनतम कितना रूपया चाहिए तथा इस न्यूनतम सीमा से कम आय वाले व्यक्ति को निर्धन करार दिया जा सकता है।

प्रो. योगोश अटल के अनुसार "गरीबी की अवधारणा का सम्बन्ध सापेक्ष रूप से वंचित रहने के तथ्य से है। "इस प्रकार योगोश अटल वे गरीबी को तुलनात्मक दृष्टि से राष्ट्रीय आय से वंचित रहने के रूप में परिभाषित करते हैं। जब हम गरीब को राष्ट्रीय आय के पैमाने के द्वारा समझने का प्रयास करते हैं तब इसका तात्पर्य यह नहीं होता कि वह आय दोष के सभी लोगों में समान रूप से वितरित होती है, वरन् राष्ट्रीय आय में से जिन लोगों को कम भाग मिलता है, गरीब कहलाते हैं तथा जिन्हें अधिक हिस्सा मिलता है, धनवान वर्ग में सम्मिलित किए जाते हैं। इस दृष्टि से गरीबी एक तुलनात्मक तथ्य है।

माईकल हैरिंगटन के अनुसार, "निर्धनता भोजन, स्वास्थ्य, घर, शिक्षा तथा मनोरंजन के उन न्यूनतम स्तरों का वंचन है जो एक विशिष्ट समाज की समकालीन प्रौद्योगिकी, विश्वास तथा मूल्यों के अनुसार होता है।

"मिलर तथा रोबी के अनुसार "निर्धनता एक प्रकार की असमानता है जो निर्धनों की जीवन–दशा तथा उनके जीवित रहने की सम्भावनाओं पर आय की असमानता से पड़ने वाले प्रभावों को स्पष्ट करती है। जिनके पास जीवन की अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए साधन अथवा सामर्थ्य नहीं है, वे निर्धन कहलाते हैं तथा जो लोग आयक्रम के निम्नतम तल पर होते हैं, वे निर्धनों की श्रेणी के अन्तर्गत समाविष्ट किए जाते हैं। "उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर निर्धनता के सन्दर्भ में यह निष्कर्ष निकलता है:–

- निर्धनता जीवनयापन करने के लिए न्यूनतम आय का प्रतिबिम्ब है।
- निर्धनता निम्नतम जीवन निर्वाह के स्तर का परिचायक है।
- निर्धनता जीवनयापन करने के लिए अनिवार्य आवश्यकताओं की पृष्ठ को दर्शाती है।

- ♦ निर्धनता समय एवं स्थान सापेक्षिक जीवन स्तर को दर्शाती है।
- ♦ निर्धनता प्रचलित मानदण्डों के अनुसार न्यूनतम जीवन स्तर है।
- ♦ निर्धनता असमानता तथा वंचना के आधार पर समझी जा सकती है।

4.03 निर्धनता : सापेक्षिक दृष्टिकोण

निर्धनता आर्थिक एवं सामाजिक दृष्टिकोण से एक सापेक्ष अवधारणा है। आय के दृष्टिकोण से निर्धन वर्ग के लोगों की आय इतनी ही होती है कि वे अधिक से अधिक अपने जीवनयापन के मूलभूत पदार्थ ही जुटा पाते हैं, न कि ऐश्वर्य के साधन। गरीबी को वस्तुओं के चयन करने एवं पसन्द करने की सीमा के रूप में भी परिभाषित किया जा सकता है। इसी प्रकार एक राष्ट्र जिसे हम निर्धन कहेंगे, उसे अन्य राष्ट्र धनवान भी कह सकते हैं। भारत में निर्धनता की रेखा वह नहीं है जो अमेरिका या अन्य विकसित देशों में है। प्रत्येक राष्ट्र की एक संस्कृति होती है। जिसके अनुसार वहाँ के लोग जीवन–शैली का एक आदर्श स्थापित करते हैं और उसी प्रकार आदर्श के अनुसार अपना आचरण करते हैं। जीवन स्तर किसी राष्ट्र के प्रथाओं, परम्पराओं, रीति–रिवाजों, मानदण्डों एवं मूल्यों पर आधारित होता है। संरचित जीवन स्तर के आदर्श प्रारूप से नीचे जीवन व्यतीत करने वालों का सापेक्षिक रूप से निर्धन एवं ऊँचा जीवन व्यतीत करने वालों को सापेक्षिक रूप से धनवान कहा जाता है। ठीक इसी प्रकार उचित जीवन स्तर को प्राप्त करने के पर्याप्त सुविधा–साधन तो उपलब्ध होते हैं, परन्तु इनका उचित एवं वांछित तरीके से सदुपयोग न करके दुरूपयोग किया जाता है। उदाहरण के लिए कोई व्यक्ति अपनी आय सट्टा लगाने, लॉटरी खेलने, शराब पीने एवं जुआ खेलने में अपव्यय कर देता है एवं अपने जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु वांछित संसाधन नहीं जुटा पाता है।

निर्धनता की सापेक्षता का सन्दर्भ केवल दो राष्ट्रों तक ही सीमित नहीं है, वरन् एक राष्ट्र में निवास करने वाले विभिन्न वर्गो, जातियों, उपजातियों, समूहों, समुदायों, व्यवसायों, प्रान्तों, क्षेत्रों, संस्कृतियों, धर्मो को मानने वाले लोगों से भी है। उदाहरण के लिए जीवन जीने का स्तर जो डूंगरपुर के ग्रामीण खेतिहर आदिवासियों का है वही स्तर पढ़े लिखे नौकरीपेशा आदिवासियों का नहीं होगा। इसी प्रकार, पंजाब के लोगों के जीवन स्तर से झारखण्ड राजस्थान अथवा केरल में रहने वाले लोगों का जीवन स्तर भिन्न होगा। किसी संस्कृति विशेष में निर्धनता के मापने के आधार अन्य संस्कृतियों पर प्रयुक्त नहीं किए जा सकते हैं। इस प्रकार अगर हम किसी संस्कृति में निर्धनता को मापना चाहते हैं तो इसके लिए हमें सांस्कृतिक सापेक्षवादात का दृष्टिकोण अपनाना होगा तथा स्वकेन्द्रीतवाद दृष्टिकोण को त्यागना होगा। गिलिनिन एवं गिलिन का मत है कि निर्धनता का सम्बन्ध एक ही सांस्कृतिक समूह से तुलनात्मक है और उसी आधार पर व्यक्ति की स्थिति निश्चित की जाती है कि वह निर्धन है या अमीर है।

जीवन स्तर प्रत्येक समाज, समूह, समुदाय, जाति, प्रजाति एवं धर्मो भिन्न–भिन्न होता है। जीवन–स्तर को निर्धारित करने वाले तीन प्रमुख घटक निम्न प्रकार से हैं–

1. विवेकपूर्ण सामाजिक–सांस्कृतिक प्रथाएँ एवं परम्पराएँ।
2. निर्णय लेने की बुद्धि।
3. आय

इन तीनों घटकों में आय सर्वोच्च एवं महत्वपूर्ण स्थान रखती है क्यों गरीब लोगों की आय सिर्फ इतनी होती है कि वे अपने जीवन के अस्तित्व को ही बनाए रख पाते हैं। वे बचत करने में सक्षम नहीं होते। डब्ल्यू.डब्ल्यू. वीवर का यह कथन इस सन्दर्भ में समीचीन है कि "निर्धनता को ऐसी स्थिति के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसमें वित्तीय बचत अनुपस्थित रहती है।"

सामाजिक एवं सांस्कृतिक रीति–रिवाज, प्रथाएँ, खान–पान, पहनाता, सोचने का ढंग किसी समूह एवं समुदाय तथा धर्म के लोगों के जीवन स्तर का निर्णय करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। अधिकांशतः ब्राह्मण शाकाहारी भोजन करते हैं तो इसाई एवं मुसलमान मांसाहारी भोजन खाने में प्राथमिकता प्रदान करते हैं। डूँगरपुर–बाँसवाड़ा क्षेत्र के ग्रामीण आदिवासी अपरिग्रह युका सादा जीवन जीना पसन्द करते हैं। तीज–त्यौहारों एवं उत्सवों के सुअवसर पर खान–पान, वस्त्र–आभूषण पहनने का निर्णय सांस्कृतिक परम्पराएँ एवं प्रथाएँ करती हैं। किसी व्यक्ति की पसन्द और नापसन्द को निर्धारित करने में उसकी बुद्धि और निर्णय लेने की क्षमता का भी महत्वपूर्ण स्थान है। वस्तुओं के क्रय सम्बन्धी निर्णयों के लिए तार्किक बुद्धि महत्वपूर्ण होती है। साधारण जीवनयापन करने वाले प्रोफेसर के लिए मारूति कार से काम चल सकता है परन्तु अगर पति–पत्नी दोनों कार्यरत हैं तो महँगी गाड़ी रखना प्रस्थिति प्रतीक बन जाता है। वर्तमान समय में ' 'ऋण–व्यवस्था' ' इतनी आसान हो गई है कि कुछ वर्षो पूर्व जिन वस्तुओं को खरीदने के लिए लोग केवल सपने जिया करते थे। उनकी आपूर्ति के लिए आज सिर्फ एक मोबाईल करने की जरूरत है, वांछित वस्तुएँ आपके घर में उपलब्ध हो जायेंगी। परन्तु यहाँ पर ध्यान देने योग्य तथ्य यह है कि किसी भी वस्तु को ऋण व्यवस्था के अन्तर्गत लेना तो बहुत आसान होता है परन्तु ऋण चुकाने के लिए किश्तों की व्यवस्था करना थोडा कठिन हो है।

आय जीवन स्तर का निर्णय करने में सर्वोच्च स्थान रखती है। कम आय होने पर केवल जीवन–निर्वहन के लिए अपरिहार्य वस्तुओं की पूर्ति करना सर्वोच्च लक्ष्य होगा, जबकि अधिक आय होने पर विलासिता की वस्तुओं पर सहज रूप से खर्च किया जा सकता है। आय का प्रत्यक्ष सम्बन्ध आय के स्रोत एवं परिवार के आय अर्जन करने वाले सदस्यों से भी होता है। अगर, पति–पत्नी दोनो कमाते है और दोनों में सौहार्दपूर्ण सम्बन्ध हैं तो दोनों की सम्मिलित आय से उच्च जीवन स्तर जिया जा सकता है।

उपर्युक्त विवेचन से हम यह कह सकते हैं कि निर्धनता एक सापेक्ष अवधारणा है जिसका सम्बन्ध किसी राष्ट्र. समाज, संस्कृति, समुदाय, व्यवसाय एवं पारम्परिक पोशों में प्रचलित जीवन स्तर के आदर्शो से होता है। किसी भी समाज में जीवन–स्तर का आदर्श यह समकालीन सामाजिक–सांस्कृतिक मान्यताओं, परम्पराओं एवं प्रथाओं, व्यक्ति की तार्किक बुद्धिमता, निर्णय लेने का कौशल तथा आय पर निर्भर करता है। निर्धनता के निर्धारण में धन का महत्वपूर्ण स्थान है परन्तु हम दैनिक जीवन में ऐसा देखते हैं कि कई जातियाँ एवं मत–मतान्तर को मानने वाले लोग धनी तो होते हैं, परन्तु यह आवश्यक नहीं है कि जितना उनके पास धन है उसी अनुपात में उनका जीवन स्तर भी होगा। इस प्रकार हम देखते हैं कि अनेक धनी लोग निम्न जीवन स्तर व्यतीत करते हैं। इससे यह सिद्ध होता है कि निर्धनता केवल आर्थिक तथ्य और सत्य ही नहीं है वरन् यह एक सामाजिक तथ्य भी है, जिसका समाजशास्त्रीय पद्धति के द्वारा अध्ययन किया जा सकता है।

4.04 निर्धनता के स्वरूप

समाज वैज्ञानिकों ने विभिन्न आधारों पर निर्धनता का वर्गीकरण निम्न प्रकार से किया जा सकता है.

1. **बीएस. राउण्ट्री** ने निर्धनता को दो भागों में विभक्त किया है:–

(अ) प्राथमिक निर्धनता एवं (ब) द्वैतीयक निर्धनता।

(अ) प्राथमिक निर्धनता

प्राथमिक निर्धनता का तात्पर्य लोगों की आय का इतना कम होना है कि वे जीवनयापन करने के लिए अपरिहार्य आवश्यकताओं की भी पूर्ति नहीं कर सकते। इस प्रकार की निर्धनता में जीवनयापन करने वाले लोगों को गरीबी रेखा के नीचे का जीवन व्यतीत करने वालों की श्रेणी में सम्मिलित किया जाता है। गरीबी रेखा भौतिक वस्तुओं के मूल्यों में होने वाले परिवर्तनों के साथ–साथ परिवर्तित होती है।

(ब) द्वैतीयक निर्धनता

द्वैतीयक निर्धनता में मानव शरीर का अस्तित्व बनाए रखने के लिए अपरिहार्य आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए उपयुक्त आय तो होती है परन्तु इस आय को अतार्किक एवं अविवेकपूर्ण तरीके से अपव्यय करने के कारण निर्धनता बनी रहती है। उदाहरण के लिए – किसी व्यक्ति का जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के स्थान पर अपनी आय को अयाशी, जुआ, मद्यपान, धूम्रपान इत्यादि में खर्च कर देना। द्वैतीयक निर्धनता के अन्तर्गत आय की सीमा निश्चित नहीं होती तथा इसलिए व्यक्ति अपनी मूलभूत आवाश्यकताओं की पूर्ति के बाद शेष आय को उपयोगी एवं अनुपयोगी, दोनों तरीकों से व्यय कर सकता है।

2. **डब्ल्यू. डब्ल्यू.** वीवर ने दो प्रकार की निर्धनता का उल्लेख किया है –

(अ) दीर्घकालिक निर्धनता एवं (ब) अल्पकालिक निर्धनता।

(अ) दीर्घकालिक निर्धनता

इस श्रेणी के अन्तर्गत उस निर्धनता को सम्मिलित किया जाता है, जो कई पीढ़ियों से चली आ रही होती है। इस प्रकार की निर्धनता में जीवनयापन करने वाले लोग अपनी आवश्यकताओं और आदतों में इस प्रकार का अनुकूलन कर लेते हैं जिससे उन्हें समाज द्वारा हेय दृष्टि से देखे जाने वाले कार्य को करने में शर्म महसूस नहीं होती। उदाहरण के लिए, भीख माँगना।

(ब) अल्पकालिक निर्धनता

इस प्रकार की निर्धनता का सामना उन कारणों से होता है जिस पर का नियंत्रण नहीं रहता। उदाहरण के लिए बीमारी पर अत्यधिक खर्च होना, बेरोजगारी, व्यापार में मंदी, में दीवाला निकल जाना भारत विभाजन के दौरान भारतीय शरणार्थियों में व्याप्त अंशिक निर्धनता इत्यादि। इस प्रकार की निर्धनता में परिवर्तन सम्भव है। नये व्यवसाय के मिल जाने पर, राजनीतिक–आर्थिक में सुधार होने पर अल्पकालिक निर्धनता का अंतरमन हो जाता है।

3. जे.एम.शेपार्ड एवं एच.एल.वॉस ने निर्धनता के दो प्रकारों का निम्न प्रकार से किया है:–

(अ) निरपेक्ष निर्धनता एवं (ब) सापेक्ष निर्धनता।

(अ) निरपेक्ष निर्धनता

निरपेक्ष निर्धनता वह दशा है जिसमें किसी व्यक्ति के पास जीवनयापन करने के लिए मूलभूत आवश्यक वस्तुओं – मकान, भोजन, चिकित्सा सुविधा का पूर्ण अभाव रहता है। शेपार्ड ' वाँस ने निरपेक्ष निर्धनता को सामान्य जीवनयापन करने के लिए अपरिहार्य आधारभूत आवश्यकताओं रूप में परिभाषित किया है। अमेरिका में निर्धनता को पूर्णता की पद्धति के द्वारा मापा जाता है। इसके गरीबी का माप वार्षिक आय स्तर होता है। निर्धारित वार्षिक आय से जिन लोगों की आय कम होती है, उन्हें निर्धन की श्रेणी में वर्गीकृत किया जाता है।

(ब) सापेक्ष निर्धनता

सापेक्ष निर्धनता की अवधारणा किन्हीं दो समयों, दो स्थानों एवं भिन्न व्यक्तियों की तुलनात्मक दशा का मूल्यांकन करती है। सापेक्ष निर्धनता का माप समाज के निम्नतम के लोगों की स्थिति के आधार पर किया जाता है। इस प्रकार नेपाल में जिस दशा को गरीबी कहा जायेगा, स्थिति भारत में गरीबी नहीं कहलायेगी। किसी देश के जीवन स्तर में वृद्धि के साथ–साथ निर्धनता का भी परिवर्तित होता रहता है।

4.05 निर्धनता के कारण :

निर्धनता अनेक कारकों की मिली जुली पारस्परिक क्रिया एवं अन्त: का परिणाम है। निर्धनता के। अनेक कारण होते हैं, जिनमें प्रमुख निम्नानुसार है:–

(1) भौतिक पर्यावरण

भौतिक पर्यावरण से हमारा तात्पर्य प्रकृति द्वारा प्रदत्त जलवायु, प्राकृतिक सम्पदा, खनिज, उपजाऊ भूमि नदियाँ, झीलें इत्यादि को सम्मिलित किया जाता हैं। यदि किसी राष्ट्र में प्राकृतिक भण्डारों व खनिज पदार्थो का अभाव है। भूमि अनुपजाऊ है, रेगिस्तान में वर्षा की कमी है। वर्ष पर्यन्त बहने नदियों का अभाव है, इत्यादि तो ऐसी स्थिति में उस भू–भाग पर निवास करने वाले लोगों को अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करने में मुश्किलों का सामना करना पड़ेगा। अत: उक्त भू–भाग पर रहने वाले लोगों में देखने को मिलेगी। इसी प्रकार इसके ठीक विपरीत परिस्थितियों वाले राष्ट्र में समृद्धि देखने को मिलती है। लोग सुखी एवं धनवान होते हैं। मौसम की अनिश्चितता के कारण अत्यधिक गर्मी, सर्दी, अल्पवृष्टि, ' आतेवृष्टि के कारण फसलों का नुकसान हो जाता है तथा लोग अभाव एवं निर्धनता में जीवन जीने के लिए हो जाते हैं। आसाम, बिहार पश्चिम बंगाल, उत्तर–प्रदेश इत्यादि राज्यों में मौसम के कारण जान और की हानि होती है। इसी प्रकार समुद्र के किनारे रहने वाले लोगों को तूफान एवं कुसमय की वर्षा का सामना 'करना पड़ता है, जिससे जान और माल का भारी नुकसान होता है तथा लाखों लोग बेघर हो जाते हैं। कीडे–मकोड़े जीव–जन्तु इत्यादि फसलों और उद्योगों को नुकसान कर देते हैं तथा फलों, कागज, कपास, लकडी रेशम इत्यादि को नष्ट कर देते हैं। इससे इन उद्योगों से सम्बन्धित लोगों को निर्धनता का सामना करता है।

(2) वैयक्तिक कारण

जे.फिगिन ने अमेरिका में निर्धनता के कारणों को मालूम करने के लिए एक अध्ययन किया। जिसमें निर्धनता के लिए लोगों ने व्यक्ति को ही दोषी ठहराया। इन लोगों का मत है कि कोई भी व्यक्ति निर्धन इसीलिए है क्योंकि उसमें योग्यता, इच्छाशक्ति एवं प्रतिस्पर्धात्मक युग में जीवनयापन करने की प्रेरणा का अभाव पाया जाता है। ऐसे लोग अपनी दरिद्रता के लिए स्वयं उत्तरदायी होते हैं। व्यक्ति की अयोग्यता निर्धनता को जन्म देती है। शारीरिक निर्बलता, वंशानुगत बीमारियां, दुर्घटना, मानसिक योग्यता, नैतिक पतन, अविवेकपूर्ण खर्च इत्यादि, व्यक्ति की निर्धनता के लिए व्यक्तिगत कारण होते हैं। अल्पकालिक और दीर्घकालिक बीमारियां परिवार में निर्धनता उत्पन्न करती हैं। इसी प्रकार किसी व्यक्ति की दुर्घटना ग्रस्त होने पर, अंग भंग ' होने पर, लूला–लंगड़ा अथवा अन्य किसी शारीरिक अक्षमता होने पर आर्थिक दशा प्रभावित होती है। बीमारी, बुढ़ापा, दुर्घटना, अपंगता इत्यादि शारीरिक क्षमताओं पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है, जिसके कारण व्यक्ति अर्थोपार्जन नहीं करने के फलस्वरूप अन्य लोगों पर निर्भर रहता है।

(3) सामाजिक कारण.

सामाजिक कारणों के अन्तर्गत शैक्षणिक दोष, स्वास्थ्य संबंधी सुविधाओं का स्थान, आवास की अनुपालता, विवाह और पैतृक ज्ञान का अभाव इत्यादि को सम्मिलित करते हैं। दोषयुक्त शिक्षा व्यवस्था ने शिक्षित बेरोजगारी को जन्म दिया है। वर्तमान समय में विद्यमान शिक्षा–व्यवस्था रोजगारोन्मुखी न होकर डिग्री प्रदाता बन गई है, जिसके कारण बेकारी पनपी है। आधुनिक विज्ञान ने अनेक खोजों एवं अन्वेषण के द्वारा पूर्व में असाध्य बीमारियों पर नियंत्रण कर लिया है। फिर भी भारतवर्ष में लोगों के स्वास्थ्य रक्षण हेतु समुचित सुविधाओं का अभाव नजर आता है, जिसके कारण लोग अकाल मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं तथा परिवार को गरीबी का सामना करना पड़ता है। गन्दी बस्तियाँ, दवा, बिजली–पानी व प्रकाश का अभाव, भीड–भाड युका घर व्यक्ति के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल असर डालते हैं। जो कि अन्ततोगत्वा निर्धनता को जन्म देते हैं। भारतवर्ष में बच्चों का विवाह

कम उस में कर दिया जाता है। जिसके कारण वे पारिवारिक दायित्वों का निर्वहन करने में असमर्थ रहते हैं तथा ये पराश्रित को जन्म देते हैं। 'औद्योगिक क्रान्ति, वैश्वीकरण, निजीकरण एवं स्वतंत्रता के विचारों ने नारी स्वातंत्रय है' पर बल दिया है, जिसके कारण आर्थिक उपार्जन के लिए घर की देहली लांघ कर बाहर काम करने के लिए तैयार हो जाती हैं। माता–पिता तथा बच्चों एवं पति–पत्नी के मध्य पारस्परिक सम्बन्धों में व्यक्ति केन्द्रित भावना के अभ्युदय के कारण सम्बन्धों में शिथिलता देखने को मिलती है। भारत में जाति व्यवस्था, संयुक्त परिवार प्रणाली तथा धार्मिक अन्ध–विश्वास भी गरीबी के उद्भव के लिए उत्तरदायी होते हैं। संयुक्त परिवार तथा जाति प्रथा व्यक्ति की गतिशीलता में बाधा उत्पन्न करते हैं तथा अपने सदस्यों को घर से बाहर जाने पर अंकुश लगाते हैं। जाति व्यवस्था के अन्तर्गत लोग परम्परागत पेशों पर ही अपना जीवनयापन करना पसन्द करते हैं तथा नवीन व्यवसाय को स्वीकार करने में संकोच एवं झिझक महसूस करते हैं। धार्मिक अन्धविश्वासों, कर्मवाद के सिद्धान्त तथा पूर्वजन्म के सिद्धान्तों के गलत निर्वचन ने लोगों को भाग्यवादी दृष्टिकोण अपनाने में मदद की है, जिसके कारण उनमें उद्यमशील प्रकृति एवं जोखिम लेने की प्रवृत्ति का अभाव पाया जाता है।

(4) **आर्थिक कारक.**

आर्थिक आयाम के अन्तर्गत निर्धनता का सम्बन्ध आय और व्यय के सन्दर्भ में किया जाता है। अपर्याप्त उत्पादन, असमान वितरण, आर्थिक उतार–चढ़ाव, गरीबी का दुष्चक्र।, मन्दी, बेरोजगारी इत्यादि निर्धनता को जन्म देने के प्रमुख कारक हैं। भारत कृषि प्रधान देश है। यहाँ पर कृषि एवं कुटीर उद्योगों में उत्पादन के लिए परम्परागत साधनों को प्रयुक्त किया जाता है। इन क्षेत्रों में आय सीमित ही होती है। अनेक बार मौसम के प्रतिकूल होने की स्थिति में उत्पादन पर्याप्त नहीं हो पाता। इसके आतिरिक्त उत्पादन के साधनों पर सीमित लोगों का एकाधिकार होने के कारण निर्धन व्यक्ति की आर्थिक दशा सुधरने की सम्भावना गौण ही रहती है। इस प्रकार सम्पत्ति तथा आय का असमान वितरण, बेरोजगारी की अवस्था एवं व्यापारिक मन्दी निर्धनता को जन्म देती है।

(5) **सांस्कृतिक कारक** :

सनातन संस्कृति में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष रूपी पुरूषार्थों की प्राप्ति। हेतु समन्वयक प्रयास करने पर बल दिया। केवल अर्थ की प्राप्ति हेतु जीवन को प्रयुक्त करना एकांगी दृष्टिकोण खैर, जिसे पूर्ण रूप से नकार दिया गया है। अत: भारतीय सांस्कृतिक तत्वों में संतोष धन' को सबसे महत्वपूर्ण माना गया है। इस सन्दर्भ में भारतीय संस्कृति में कुछ मत एवं विचारधाराएँ एवं जीवन शैली ऐसी भी है जो येन–केन–प्रकरण धन कमाने पर ही बल देती हैं।

(6) राजनीतिक कारक :

राजनैतिक उथल–पुथल एवं अस्थिरता निर्धनता को जन्म देने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करती है। इस प्रकार की स्थिति समाज में मुनाफाखोरी, जमाखोरी, कालाबाजारी एवं सूदखोरी अपनी चरम सीमा पर होती है। वर्तमान भारतीय राजनीति में केन्द्र में विद्यमान अस्थिरता केन्द्र सरकार को म,महँगाई नियन्त्रण करने में शिथिल कर देती है। सरकार की आर्थिक नीतियाँ एवं अन्तर्राष्ट्रीय मुद्दे सरकार को अस्थिर बनाते हैं और इससे अर्थव्यवस्था पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। केन्द्र में अगर गठबंधन सरकार अस्तित्व में हो तो स्थिति बद से बदतर हो जाती है।

सरकार की कर नीति, आयात–निर्यात नीति, उत्पादन एवं वितरण व्यवस्था किसी भी राष्ट्र के लोगों की आर्थिक दशा को प्रभावित करती है। ब्रिटिश साम्राज्य ने भारत का जमकर आर्थिक शोषण किया हैं। इंग्लैण्ड के कारखानों की पूर्ति हेतु कच्चा माल भारत से निर्यात होता था एवं तैयार माल बिकने के लिए भारत ही आता था। अंग्रेजों ने भारतीय वसुंधरा पर कल–कारखाने एवं उद्योगों की स्थापना को कभी महत्व प्रदान नहीं किया।

(7) **युद्ध** :

युद्ध के दौरान आर्थिक अपव्यय बहुत ज्यादा होता है। किसी भी राष्ट्र को युद्ध के अवश्यभावी परिणाम के रूप में गरीबी रूपी बीमारी को सहन करना पड़ता है। विगत दो विश्वयुद्धों ने पश्चिमी देशों को आर्थिक पतन के कगार पर खड़ा कर दिया था। जर्मनी–जापान तो पूरी तरह नष्ट हो चुके। युद्ध के समय में अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को गम्भीर क्षति होती है क्योंकि व्यापारिक मार्ग अवरूद्ध हो जाते हैं। व्यापारिक क्षति का दुष्परिणाम गरीबी के रूप में दृष्टिगोचर होता है।

(8) **परम्परागत कृषि** :

भारतीय कृषि व्यवस्था मानसून पर आधारित होने के कारण इसे का जुआ' कहा जाता है। वर्षा की पर्याप्त मात्रा से निर्धन किसानों का भरण–पोषण सुचारू रूप से होने की होती है, अन्यथा ग्रामीण निर्धनों को भूखमरी का सामना करना पड़ता है। भारत में पर्याप्त सिंचाई के,साधनों का अभाव, उन्नत खाद, बीज एवं तकनीकी की जानकारी का अभाव एवं परम्परागत कृषि करने के तरीकों पर अत्यधिक बल देने के कारण कृषि की उपज कम होती है।

(9) **बेरोजगारी** :

बेरोजगारी व्यक्ति को पराश्रित बना देती है। वांछित आय के अभाव में बेरोजगार व्यक्ति में कुंठाओं का जन्म होता है और उसे "अलगाव'' का सामना करना पड़ता है। बेरोजगारी व्यक्ति की आवश्यकताओं को न्यून कर, निम्न जीवन स्तर जीने के लिए बाध्य कर देती है। अनेक बार बेरोजगार स्वयं का और अपने परिवार का भरण–पोषण भिक्षावृत्ति के माध्यम से करने में भी संकोच नहीं करता। इस प्रकार बेरोजगारी निर्धनता को जन्म देती है।

(10) जनसंख्या में विस्फोटक वृद्धि :

भारत की जनसंख्या प्रतिवर्ष ऑस्ट्रेलिया की जनसंख्या के बराबर बढ़ है। जनाधिक्य निर्धनता को जन्म देता है। जिस तीव्र गति से भारत में जनसंख्या की वृद्धि हो रही है, उसी में जीवनयापन के लिए वांछित एवं उपयुक्त संसाधनों एवं सुविधाओं में वृद्धि नहीं होती, जिसके परिणामस्वरूप लोगों को बेरोजगारी, बेकारी एवं भूखमरी का सामना करना पड़ता है। माल्थस ने अत्यधिक जनसंख्या वृद्धि को निर्धनता के लिये उत्तरदायी माना है। जब जनसंख्या वृद्धि के अनुपात में उत्पादन की मात्रा में वृद्धि नहीं हो जाती, तब तक राष्ट्र का आर्थिक सन्तुलन चरमरा जाता है। माँग और पूर्ति के असन्तुलन के फलस्वरूप मूल्यों में वृद्धि होने के साथ–साथ महँगाई भी बढ़ जाती है, जिससे लोगों की क्रय शक्ति घट जाती है। अत: लोग अपनी आवश्यकताओं की समुचित पूर्ति नहीं कर पाते और उन्हें निर्धनता की स्थिति में जीवनयापन करना पड़ता है।

(11) सूदखोरी प्रथा :

भारतीय ग्रामीण क्षेत्र में सहकारी समितियाँ पूर्ण रूप से विकसित नहीं हो पाई हैं। किसानों को अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु सूदखोरों के पास जाना पड़ता है। सूदखोर ग्रामीण किसानों की मजबूरी एवं अज्ञानता का फायदा उठाकर उनका आर्थिक, शारीरिक एवं मानसिक शोषण करते हैं। ऋण के दुष्चक्र से गरीब किसान एवं आदिवासी लोग मुक्त नहीं हो पाते। उनकी पीढ़ियाँ सूदखोर के ऋण चुकाने में अपना जीवन खपा देती हैं। डूँगरपुर–बाँसवाड़ा के ग्रामीण आँचल में सूदखोरों का ' खतरनाक ' जाल है। एक बार इन सूदखोरों के चुंगल में कोई आदिवासी परिवार फंस जाता है तो ये सूदखोर उसका आर्थिक एवं मानसिक शोषण कर उसे निर्धनता की पराकाष्ठा पर खड़ा कर देते हैं। भारत को आजाद हुए छ: दशक बीत चुके हैं परन्तु वर्तमान समय तक इन सूदखोरों पर अंकुश लगाने का प्रभावशाली कानून नहीं बना है।

राजस्थान में कुछ समय पूर्व तक सागड़ी प्रथा 'प्रचलन में थी। इस प्रथा के अनुसार उधार लेने वाले व्यक्ति अथवा परिवार को सूदखोर साहूकार के घर तब तक मुफ्त सेवाओं के रूप में कार्य करना पड़ता था, जब तक वह

उस साहूकार के ऋण से उऋण न हो जाए। एक बार साहूकार के चुंगल में फँसने पर उससे मुक्ति असंभव थी और निर्धन व्यक्ति एवं उसका परिवार निर्धन एवं पराश्रित ही बना रहता था।

(12) अशिक्षा और अज्ञान :

भारत में शिक्षा का प्रतिशत काफी कम है। गाँवों में तो स्थिति भयावह है। शिक्षा की कमी के कारण लोग साहूकारों एवं सूदखोरों के चंगुल में फँस जाते हैं तथा अशिक्षा इन्हें अन्ध विश्वास एवं अवांछित परम्पराओं की पालना करने और करवाने में सहायक सिद्ध होती है। अशिक्षा के कारण इनमें वैज्ञानिक, तार्किक एवं बोधपरक बुद्धि का विकास नहीं हो पाता जिसके कारण निर्धन लोग उन सामाजिक एवं सांस्कृतिक परम्पराओं का निर्बाध गति से पालन करते रहते हैं, जिनका वर्तमान युग में किसी भी प्रकार का महत्व नहीं रह गया है। ग्रामीण परिवेश में अशिक्षा का लाभ उठाकर सूदखोर और आधुनिक जमींदार निर्धन लोगों का आर्थिक एवं शारीरिक शोषण करते है।

(13) **सामाजिक कुरीतियाँ** :

वर्तमान हिन्दू सामाजिक एवं सांस्कृतिक संरचना में अनेक कुरीतियों का समावेश है जैसे मृत्युभोज, दहेज प्रथा, खर्चीला विवाह एवं जन्म से लेकर मृत्युपर्यन्त तक अनेक संस्कार। इन रीति–रिवाजों को पूरा करने के लिए व्यक्ति अपनी आर्थिक क्षमता से अधिक खर्चा लेकर इसलिए करता है। जिससे कि समाज में उसकी प्रतिष्ठा बनी रहे। इसके लिए वह ऋण लेता है तथा अपनी भूमि, भवन, अन्य सम्पत्ति तथा आभूषण गिरवी रखने के कारण मजदूरी के द्वारा जीवनयापन करना पड़ता है। सूदखोरों एवं साहूकारों की ब्याज दरें इतनी अधिक होती हैं कि एक बार ऋण के दुष्चक्र में फँसने के बाद कई पीढ़ियों को ऋण होने के लिए सागडी प्रथा के अन्तर्गत मजदूरी करनी पड़ती है अथवा कम दर पर सूदखोर के यहाँ काम करना पड़ता है। महज इतना ही नहीं निर्धन लोग गरीबी को ईश्वर की देन भी मानते हैं। ये लोग सामाजिक सांस्कृतिक एवं धार्मिक कुरीतियों को अन्धविश्वास, अज्ञान एवं रूढ़िवादिता के कारण त्यागते नहीं हैं एवं निर्धनता की चादर को अनवरत अपने ऊपर ओढ़े रहते हैं।

(14) नरम राज्य :

गुन्नार मिर्डल समस्त अविकसित राष्ट्रों में व्याप्त निर्धनता का एक कारण 'नरम राज्य' को मानते हैं। मिर्डल का नरम राज्य से अभिप्राय उस सामाजिक अनुशासनहीनता से है जो विभिन्न स्वरूपों में दृष्टिगोचर होती है, यथा कानून की कमियाँ एवं सीमाएँ तथा कानून का क्रियान्वयन करने में व्यापक खामियाँ, भिन्न–भिन्न स्तरों पर प्रशासकीय अधिकारियों द्वारा इन नियमों एवं निर्देशों की बृहत् स्तर पर अवहेलना, जिनके क्रियान्वयन का उन पर उत्तरदायित्व होता है। वस्तुत: इन अधिकारियों के सम्बन्ध (अनैतिक) एवं साठ–गांठ उन से अन्त एवं सत्ताधीश वर्ग एवं जाति के लोगों से होते हैं, जिनके विपथगामी व्यवहार एवं आपराधिक आचरण को नियमित एवं रोकने की जिम्मेदारी इन्हीं अधिकारियों पर होती है, जो कि असंभव है। नरम राज्य की संकल्पना में भ्रष्टाचार भी समाहित है। नरम राज्य में सामाजिक, आर्थिक एवं. राजनीतिक संभ्रान्त निर्धन लोगों का षोशण करते हैं और समाज तथा राज्य के नियमों एवं मानदण्डों के विरूद्ध आचरण करते हैं। भ्रष्टाचार के कारण उच्च वर्ग निम्न वर्ग का शोषण करता है और निम्न वर्ग इनके खिलाफ वांछित कार्यवाही करने में संकोच करता है। वह यथास्थिति की पालना करते हुए निर्धनता में जीवनयापन करता है।

(15) औद्योगिकीकरण एवं पूँजीवाद :

औद्योगिकीकरण एवं पूँजीवाद ने एक ऐसी नई सामाजिक–आर्थिक व्यवस्था को जन्म दिया है। जिनके मूल में व्यक्तिगत मुनाफा एवं शोषण की मानसिकता निहित है। आधुनिक कल–कारखाना लगाने वाले पूँजीपतियों ने अपनी आर्थिक सत्ता के बल पर बड़े–बड़े कल–कारखाने स्थापित किए, परिणामस्वरूप ग्रामीण कुटीर उद्योग नष्टप्राय: हो गए और कुटीर व्यवसाय को संचालित करने वाला वर्ग मजदूर हो गया। नई व्यवस्था ने परम्परागत

व्यवसायों को समाप्त कर बेरोजगारों की फौज खड़ी कर दी और इस नई व्यवस्था ने गरीबी के एक नए स्वरूप को जन्म दिया। नवीन उद्योग व्यवस्था ने समाज में मजदूर एवं मालिक दो ऐसे वर्ग खड़े कर दिए जो परस्पर विचारधारा में विरोधी थे। उत्पादन के साधनों पर नियन्त्रण करने वाले उद्योगपतियों ने ' का शोषण किया। इन्होंने गरीबों को और अधिक गरीब बना दिया।

4.06 निर्धनता के माप

1. किसी भी राष्ट्र में गरीबी को मापने के राष्ट्रीय आय प्रति व्यक्ति आय एवं प्रति व्यक्ति उपभोग खर्च के तथ्य संकलित किए जाते हैं। राष्ट्रीय आय मालूम करने के लिए किसी वर्ष विशेष में उपभोग के लिए उपलब्ध वस्तुओं एवं सेवाओं की वांछित सूचनाएं संग्रह की जाती हैं। राष्ट्रीय आय मालूम करके हम देश की आर्थिक प्रगति और आर्थिक कल्याण का निर्धारण कर सकते हैं।
2. आय की भाँति ही किसी देश के लोगों द्वारा उपभोग पर किए जाने वाले खर्च के आधार पर गरीबी को मापा जा सकता है। इस दृष्टिकोण से यह जानकारी ली जाती है कि कुल राष्ट्रीय उपभोग का कितना प्रतिशत भाग उच्च वर्ग के लोगों द्वारा प्रयुक्त किया जाता है और कितना प्रतिशत' निम्न वर्ग के लोगों द्वारा। इसके साथ–साथ नगरों एवं ग्रामीण क्षेत्र में प्रति व्यक्ति उपभोग खर्च की वांछित सूचना लेकर नगरीय एवं ग्रामीण क्षेत्रों में व्याप्त आर्थिक विषमता को भी मालूम किया जाता है। भारत में निर्धनता से सम्बन्धित समस्त तथ्य भोजन पर होने वाले खर्च पर आधारित हैं। पी.डी ओझा का मत है कि भारत में ग्रामीण आँचल में प्रत्येक व्यक्ति को प्रतिदिन 518 ग्राम और शहरी क्षेत्र में 432 ग्राम भोजन चाहिए। वी.एम. डाण्डेकर, नीलकान्त रॉय, बी.एस।मिन्हास इत्यादि अर्थशास्त्रियों ने ' गरीबी को मापने के लिए 'पोषण के आदर्श' का आधार के रूप में स्वीकार किया है। इन अर्थशास्त्रियों का मत है कि भारत में प्रत्येक व्यक्ति को प्रतिदिन 2250 कैलोरी शक्ति प्रदान करने वाला भोजन जीवित रहने के लिए आवश्यक है। इससे कम ऊर्जा प्रदान करने वाले भोजन को ग्रहण करने वाले लोग गरीबी की श्रेणी में सम्मिलित किए जाते हैं। मुद्रा के सन्दर्भ में गरीब लोग वे हैं, जिनके पास इतनी क्रय शक्ति (रूपए) नहीं होती कि वे इतनी भोजन सामग्री जुटा सकें, जिससे प्रतिदिन प्रति व्यक्ति 2250 ऊर्जा पैदा हो सके। ऐसे लोग गरीबी रेखा से नीचे का जीवन व्यतीत कर रहे हैं। प्राथमिक निर्धनता के अन्तर्गत भौतिक क्षमताओं को बनाए रखने के लिए न्यूनतम आय का निर्धारण किया जाता है।
3. समाज में गरीबी निर्धारण का एक आधार 'प्रति व्यक्ति व्यक्तिगत आय' भी है। इससे तुलनात्मक गरीबी को मापा जा सकता है।

इस प्रकार हम किसी राष्ट्र में गरीबी का निर्धारण राष्ट्रीय आय, प्रति व्यक्ति उपभोग खर्च और पोषण का आदर्श तथा प्रति व्यक्ति आय के आधार पर माप सकते है।

4.7 निर्धनता के दुष्प्रभाव.

निर्धनता दुनिया में सबसे बड़ा अभिशाप है। निर्धनता किसी देश के लोगों के निम्न जीवन स्तर के लिए महत्वपूर्ण उत्तरदायी कारक है। निर्धनता के कारण लोगों में किसी कार्य के प्रति समर्पण, साहस एवं जोश की भावना का लोप हो जाता है। वैश्वीकरण के वर्तमान दौर में चहुँ ओर निजीकरण एवं खुलेपन की विचारधारा का प्रबल स्वरूप देखने को मिल रहा है। प्रत्येक व्यक्ति अपना जीवन स्तर उठाने के लिए अधिक से अधिक धन अर्जन के लिये प्रयासरत है। धन सब कुछ नहीं है, परन्तु बहुत कुछ धन ही है। निर्धनता की स्थिति में व्यक्ति को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इसके कारण व्यक्ति के व्यक्तित्व के समस्त आयामों पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि निर्धनता समस्त बुराइयों की अमर बेल निम्नलिखित आधारों पर निर्धनता के दुष्प्रभावों को बिन्दुवार समझने का प्रयास किया गया है

1. **शारीरिक दुष्प्रभाव** :

निर्धनता की अवस्था में व्यक्ति वांछित पोशाक तत्वों एवं सन्तुलित आहार को अपने भोजन में सम्मिलित नहीं कर पाता। इसीलिए अनेक बीमारियों का जन्म निर्धनता से ग्रस्त सामाजिक परिवेश में देखने को मिलता है। मूलत: क्षय रोग (टीबी) को गरीबों की बीमारी की मान्यता मिली हुई है। दीर्घावधि तक रोगग्रस्त रहने के कारण व्यक्ति की कार्य करने ,की क्षमता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। धन के अभाव में निर्धन लोग उचित चिकित्सा सुविधा नहीं ले पाते तथा मृत्यु का अनचाहे वरण करते है। इसलिए निर्धनता का सम्बन्ध मृत्यु दर की वृद्धि से भी है। धनवान लोगों की अपेक्षा निर्धन लोगों के बच्चों की मृत्यु दर, गर्भपात दर तथा मृत बच्चे जन्म लेने की संख्या अधिक होती है। निर्धन देशों में माताएँ एवं गर्भस्थ महिलाएँ कुपोषण का शिकार होती हैं। अत: कुपोषण से शिकार महिलाओं के बच्चे भी निश्चित रूप से कुपोषित ही होते हैं। निर्धनता व्यक्ति की कार्य क्षमता को प्रभावित कर व्यावसायिक थकान पैदा करती है। निर्धन लोगों को वांछित धनाभाव के कारण चिकित्सा के प्रति उपेक्षा, दुर्गन्ध एवं गन्दगी युक्त आवासों में निवास, मनोरंजन का अभाव, अस्वस्थता, छूत एवं कुपोषण पर आधारित बीमारियों का सामना करना पड़ता है। निर्धनता के कारण जलवायु परिवर्तन के अनुरूप अपने एवं अपने बच्चों के बचाव के लिए निर्धन लोग उचित वस्त्रों की व्यवस्था भी नहीं करवा पाते।

2. **मानसिक दुष्प्रभाव** :

निर्धनता अनेक बीमारियों को जन्म देकर व्यक्ति के मानसिक असन्तुलन का कारण बनती है। निर्धनता कुपोषण का कारण बनती है तथा कुपोषण मानसिक व्याधियों को जन्म देता है। इसी प्रकार निर्धन बच्चों का कुपोषण एवं वांछित शारीरिक पुष्टि कारक तत्वों के अभाव में बौद्धिक स्तर निम्न रहने की प्रबल सम्भावना रहती है। ठीक इसी प्रकार निर्धनता के कारण गरीब लोग अपने बच्चों को उचित शिक्षा की व्यवस्था नहीं करवा पाते जिसके कारण उनके समुचित बौद्धिक विकास पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। सरकार के द्वारा पिछड़े वर्गो के लोगों के उन्नयन एवं विकास के लिए अनेक प्रकार की योजनाओं का क्रियान्वयन कर उनके समुचित विकास के लिए प्रयास किये जा रहे हैं।

3. सामाजिक दुष्प्रभाव.

निर्धनता प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से सामाजिक पद, प्रतिष्ठा एवं मान–सम्मान को प्रभावित करती हैं। निर्धनता का सामान्य आशय निम्न सामाजिक प्रस्थिति से निम्न सामाजिक परिस्थति व्यक्ति के व्यक्तित्व पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है। निर्धनता बाल अपराध, अपराध, भगोड़ेपन आवारागर्दी एवं मानसिक असन्तुलन को जन्म देती हैं। निर्धनता निर्धन लोगों की समस्त समस्याओं की जड़ है। गरीबी लोगों में मानसिक हीनता को जन्म देती है और इस प्रकार के व्यक्तित्व समाज में स्वस्थ प्रतिस्पर्द्धा करने में स्वयं को असमर्थ पादे हैं।

4. अपराधग्रस्तता :

निर्धनता किसी व्यक्ति से समाज एवं कानून विरोधी कार्य करवाने में सक्रिय भूमिका का निर्वहन करती है। अपराध एवं बाल अपराध करने वाले अधिकांश अपराधी समाज के निर्धन वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं। इन लोगों के पास सामान्य जीवनयापन करने की मूलभूत सुविधाओं का अभाव रहता है। निर्धन लोगों के पास पोषण, स्वास्थ्य एवं आवास की पर्याप्त सुविधाऐ विद्यमान नहीं रहती। ये लोग अपनी तथा अपने परिवार की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए चोरी, डकैती, जेब–तराशी, सेंधमारी इत्यादि कानून विरूद्ध कृत्य करते हैं।

5. पारिवारिक विघटन :

निर्धनता समाज में पारिवारिक विघटन को जन्म देने में प्रमुख भूमिका का निर्वहन करती है। निर्धनता के कारण माता–पिता को धन अर्जन के लिए घर से बाहर जाना पड़ता है तथा बच्चे भी पारिवारिक आय में मदद करने के लिए कुछ न कुछ कार्य करते हैं। यहाँ तक कि निर्धनता से निवृत्ति पाने के लिए घर की लड़कियाँ तथा

स्त्रियाँ वेश्यावृत्ति तथा कॉल गर्ल की भूमिका अनचाहे वरण करती हैं। आर्थिक अभाव परिवार के सदस्यों के मध्य तनाव मनमुटाव, संघर्ष एवं झगड़ों की स्थिति पैदा करता है। गरीब परिवारों के बच्चे आयरा, भगोड़े बाल–अपराधी हो जाते हैं। इन परिवारों की समाज में निम्न स्थिति होती है। निर्धनता गरीबों में व्यवस्था के प्रति रोष एवं असंतोष पैदा करती है तथा सुदृढ़ पारिवारिक संगठन एवं सामाजिक व्यवस्था के लिए खतरा उत्पन्न करती है। इस प्रकार गरीबी पारिवारिक विघटन करने के साथ–साथ गरीबों में निराशा, कुण्ठा, हीनता एवं निराशा के नकारात्मक भावों को जन्म देती है।

6. भिक्षावृत्ति '

निर्धनता भिक्षावृत्ति को जन्म देने के लिए उत्तरदायी कारण है। निर्धन लोगों के पस आय के पर्याप्त साधन नहीं होने के कारण उनके लिए भीख माँगना ही आय अर्जन का एक सरलतम जरिया होता है। इन लोगों का व्यावसायिक प्रशिक्षण एवं शिक्षा के अभाव में रोजगार प्राप्त करना मुश्किल होता है। ' अत: परिवार के भरण–पोषण के लिए भिक्षा को आय का जरिया बनाते हैं।

7. दुर्व्यसनों में वृद्धि

निर्धनता के कारण लोग मानसिक अवसाद, चिन्ता एवं निराशा के शिकार हो जाते हैं। इनसे मुक्ति पाने के लिए अनेक दुर्व्यसनों को अपने व्यक्तित्व का अभिन्न अंग बना लेते हैं। ये लोग अपने तनावों, कुण्ठाओं एवं निराशाओं का शमन करने के लिए मद्यपान, जुआ एवं वैश्यावृति का सहारा लेते हैं।

8. चारित्रिक हास :

निर्धनता की अवस्था में उच्च चरित्र बनाये रखना सम्भव नहीं हो पाता क्योंकि हम भूखे व्यक्ति से ईमानदार एवं शतक बने रहने की अपेक्षा नहीं कर सकते, क्योंकि बुभुक्षं किं न करोती पापं (भूखा व्यक्ति कौन–सा पाप नहीं करता) आर्थिक अभाव के कारण परिवार के भरण–पोषण के लिए घर की लड़कियाँ एवं महिलाएँ तक वैश्यावृत्ति को आय का साधन बना कर पैसा कमाती हैं।

यहाँ पर यह लिखना उपयुक्त होगा कि निर्धनता एक ऐसा चक्रव्यूह है जो अनेक व्याधियों एवं सामाजिक बुराईयों को अपने अन्दर समाहित कर लेता है। निर्धनता एक कुचक्र है। अधिकांश लोग निर्धन हैं क्योंकि वे बेरोजगार हैं और अधिकांश लोग बेरोजगार हैं, क्योंकि वे निर्धन हैं। सामान्यत: निर्धन व्यक्ति शारीरिक, मानसिक, चारित्रिक एवं आध्यात्मिक रूप से सम्पन्न एवं सशक्त नहीं होते। निर्धनता एक कुचक्र सामाजिक आर्थिक समस्या है जो अनेक समस्याओं की जननी है। यह भुखमरी, बेरोजगारी, बाल–अपराध, अपराध, पारिवारिक विघटन एवं सामाजिक अव्यवस्था तथा क्रान्ति के लिए उत्तरदायी सिद्ध होती है। निर्धनता के कारण समाज में अपराधों की दर बढ़ जाती है एवं लोग कुपोषण का शिकार हो जाते है, जिससे उनकी कार्य क्षमता घट जाती है तथा जीवन स्तर गिर जाता है।

4.08 भारत में निर्धनता के उन्मूलन हेतु पंचवर्षीय योजनाओं में किये गये प्रयास

भारत सरकार ने निर्धनता को समाप्त करने के लिए विशेष प्रयत्न किये हैं तथा गाँवों की दशा सुधारने के लिए सामुदायिक विकास योजनाएँ प्रारम्भ की गई हैं। जिनमें कृषि, पशु–पालन, कुटीर उद्योग, लघु उद्योग, सहकारी समितियाँ, शिक्षा, यातायात आदि अनेक विषयों के विकास पर जोर दिया गया है बेकारी को दूर करने के लिए रोजगार के नये अवसर प्रदान किये गये हैं तथा विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में निर्धनता व बेकारी को दूर करने, लोगों के जीवन–स्तर को उन्नत करने, उत्पादन और राष्ट्रीय आय में वृद्धि करने आदि के लिए योजनाबद्ध प्रयत्न किये गए हैं। आवास, बिजली, पानी, स्वास्थ्य, शिक्षा आदि की सुविधाएँ उपलब्ध कराने तथा अनुचित जातियों, जनजातियों एवं अन्य पिछड़ा वर्ग के लोगों के कल्याण कार्यक्रमों पर जोर दिया गया है।

प्रथम पंचवर्षीय योजना में किये गये प्रयास :

प्रथम पंचवर्षीय योजना में 2378 करोड़ रूपये विभिन्न कार्यक्रमों पर खर्च करने के लिए रखे गये। प्रथम पंचवर्षीय योजना में मुद्रा–स्फीति को रोकने एवं खाद्य सामग्री के अभाव को दूर करने, लोगों का जीवन–स्तर ऊँचा करने और उन्हें अच्छा जीवन व्यतीत करने की सुविधाएँ देने आदि के लक्ष्य तय किये गये। कृषि श्रमिकों की स्थिति में सुधार के लिए कई कार्य किये गये, जैसे कम मजदूरी वाले क्षेत्र में न्यूनतम मजदूरी तय करना, भूमिहीन श्रमिकों के लिए पुनर्वास योजना बनाना, श्रमिक सहकारिताओं का संगठन, निवास स्थान के सम्बन्ध में श्रमिकों को दखली अधिकार देना आदि। बढती हुई बेरोजगारी को दूर करने के लिए 309 करोड रूपयों की अतिरिक्त व्यवस्था करके रोजगार देने का प्रावधान किया गया। इस योजना काल में 45 लाख लोगों को प्रत्यक्ष रूप से रोजगार दिया गया।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना में किये गये प्रयास :

इस योजना काल में उद्योगों के विकास पर जोर दिया गया और योजना की 20 प्रतिशत रकम उद्योगों पर खर्च करने का प्रावधान किया गया। देश का औद्योगीकरण करने के लिए 690 करोड़ रूपये खर्च करने का प्रावधान रख कर तीव्र औद्योगिक विकास का कार्यक्रम तैयार किया गया तथा एक करोड़ लोगों को रोजगार देने का प्रावधान था जिसमें से 65 लाख लोगों को गैर–कृषि क्षेत्र में लाभान्वित किया गया।

तृतीय पंचवर्षीय योजना में किये गये प्रयास :

तृतीय पंचवर्षीय योजना का लक्ष्य राष्ट्रीय आय में 5 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से वृद्धि करना तथा प्रति वर्ष उपभोग को 4 प्रतिशत से अधिक बढ़ाना था। खाद्य–सामग्री के क्षेत्र में आत्म–निर्भर होने तथा औद्योगिक माँगों के लिए कृषि की उपज बढ़ाने. तथा आय व सम्पत्ति की असमानता को समाप्त करने आदि का लक्ष्य रखा गया। इस योजनाकाल में कृषि–श्रमिकों की स्थिति सुधारने पर पर्याप्त जोर दिया गया। इसके लिए विभिन्न विकास कार्यक्रमों जैसे कुटीर एवं लघु उद्योगों का विकास, ग्रामीण विद्युतीकरण, ग्रामीण आवास, जल सिंचाई, कृषि उत्पादन में वृद्धि तथा शिक्षा आदि पर जोर दिया गया।

चतुर्थ पंचवर्षीय योजना में किये गये प्रयास :

चौथी योजना में कुल 24882 करोड़ रूपये खर्च करने का प्रावधान था। इस योजना के तीन प्रमुख उद्देश्य थे,। आत्म–निर्भरता प्राप्त करना, 2. विकास के लाभों का समान रूप से वितरण 3. विकास के लाभों में समान रूप से वृद्धि करना। इस योजना काल में भूमिहीन कृषि मजदूरों को भूमि वितरण तथा उन्हें पशुपालन उद्योग में लगाने का कार्यक्रम भी रखा गया।

पांचवी पंचवर्शीय योजना.

इस योजना में गरीबी दूर करने के लिए प्रति व्यक्ति उपभोग बढ़ाने एवं कीमतों को स्थिर रखने के प्रयासों पर जोर दिया गया। इस योजना में 69000 करोड़ रूपये खर्च करने का प्रावधान रखा गया। कृषि एवं उससे सम्बन्धित कार्यो पर 4643 करोड, उद्योग एवं खनिजों पर 10200 करोड़, सामाजिक एवं सामुदायिक सेवाओं पर 4,760 करोड़ तथा पर्वतीय एवं जनजातीय क्षेत्रों के विकास के लिए 450 करोड़ रूपये खर्च करने का प्रावधान रखा गया। तत्कालीन प्रधानमंत्री ने केवल राष्ट्रीय आय की वृद्धि करने के स्थान पर गरीबी का अन्त करने के लिए उचित वितरण नीति पर जोर दिया। उन्होंने अपना नया नारा दिया 'गरीबी हटाओ। ' इस नयी नीति में कई बातें तय की गयी, जैसे – (1) यदि हम निर्धनता हटाने का प्रयास करेंगे, तो राष्ट्रीय आय में स्वत: वृद्धि होगी। (2) उत्पादन के आयोजन के स्थान पर उपभोग के आयोजन पर अधिक जोर दिया गया। (3) उत्पादन बढ़ाने के साथ–साथ उसका उचित वितरण किया जाये। (4) रोजगार के अवसर को प्राथमिकता दी जाये। (5)प्रत्येक व्यक्ति को जिसकी

आय एक निश्चित सीमा से कम है, सरकार प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में सहायता देकर उसे निर्धारित सीमा तक लाने का प्रयास करे। (6) देश के पिछड़े क्षेत्रों का विकास क्रिया जाय ताकि उन्हें कम से कम उपभोग स्तर तक पहुँचाया जा सके। इसके लिए शिक्षा, स्वास्थ्य, पानी आदि की पिछड़े क्षेत्रों में सुविधाएँ प्रदान की गई तथा समाज कल्याण सेवाओं पर जोर दिया गया।

छठी पंचवर्षीय योजना में किये गये प्रयास.

इस योजना में गरीबी को समाप्त करने के लिए विशेष प्रावधान किये गये। 'न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम' बनाया गया। इस योजना में पीने के पानी की सुविधा, गृह–विहीन लोगों के लिए मकान बनाने के लिए भूमि देने, गाँवों को मुख्य सडकों से जोड़ने, ग्रामीण गरीबों को प्राथमिक शिक्षा देने, ग्रामीण स्वास्थ्य सेवा में विस्तार करने, गाँवों में बिजली उपलब्ध कराने, गन्दी बस्तियों का पर्यावरण सुधारने, पोषण की सुविधाएँ जुटाने एवं प्रौढ़ शिक्षा आदि के कार्यक्रमों को सम्मिलित किया गया। निर्धनता को दूर करने के लिए कृषि में सुधार एवं उन्नति करने बेरोजगारी को समाप्त करने, कुटीर व्यवसायों को प्रोत्साहन देने एवं भूमि–सुधार आदि के कार्यक्रम अपनाये गये। भारत में निर्धनता का केन्द्रीयकरण अनुसूचित जातियों, जनजातियों एवं पिछड़े वर्गो में पाया जाता है। अत: न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम में पिछड़े वर्गो एवं अन्य लोगों के बीच जो दूरी विद्यमान है उसे कम करने का प्रयास किया गया।

नयी छठी पंचवर्षीय योजना में किये गये प्रयास :

नयी छठी पंचवर्षीय योजना में निर्धनता उन्मूलन के लिए अनेक कार्यक्रमों की व्यवस्था की गयी। खाली समय में रोजगार देने, एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम, राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम तथा अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों के कल्याण कार्यक्रमों के लिए पर्याप्त धनराशि की व्यवस्था की गयी थी।

सातवी पंचवर्षीय योजना में किये गये प्रयास.

सातवीं पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत सरकार का लक्ष्य गरीबी–रेखा से 'जीवन व्यतीत कर रहे लोगों का प्रतिशत 23 तक लाना था। इस योजना में गरीबी समाप्त करने के लिए ने काम के बदले अनाज योजना शुरू की थी। 1981 में इस योजना का नाम बदल कर राष्ट्रीय ग्रामीण नियोजन कार्यक्रम कर दिया गया और इसे सातवीं योजना का आवश्यक कार्यक्रम बना दिया गया। इसका प्रमुख उद्देश्य ग्रामीण श्रमिकों को खाली समय में रोजगार प्रदान करना है।

अन्त्योदय योजना – इस योजना के तहत प्रत्येक गाँव से पाँच निर्धनतम परिवारों का चयन किया जाता है और उन्हें आत्मनिर्भर बनने एवं व्यवसाय करने आदि के लिए सरकार द्वारा आर्थिक सहायता प्रदान की जाती है। इस योजना का शुभारम्भ सर्वप्रथम राजस्थान सरकार ने 2 अक्टूबर 1978 में किया।

पंचवर्षीय योजनाओं में देश में निर्धनता को समाप्त करने के लिए अनेक योजनाबद्ध कार्य किये गये है। इसके अतिरिक्त भी कुछ इस प्रकार के प्रयास किये गये हैं

कृषि का विकास – निर्धनता दूर करने के लिए कृषि उत्पादन बढ़ाने, पड़त भूमि को जोतने एवं बंजर भूमि को उपजाऊ बनाने के प्रयास किये गये हैं। इसके लिए उन्नत बीज, उर्वरक, वैज्ञानिक यन्त्र एवं नवीन सिंचाई के साधनों का प्रयोग किया जा रहा है। (ब) प्रत्येक पंचवर्षीय योजना में रोजगार के अधिकाधिक अवसर उपलब्ध कराये गये हैं। (स) परिवार नियोजन के विभिन्न कार्यक्रमों द्वारा बढ़ती जनसंख्या पर रोक लगायी गयी है। (द) ग्रामीण विकास के लिए सरकार ने सामुदायिक विकास योजनाएँ प्रारम्भ की, जिनका उद्देश्य ग्रामीण निर्धनता को समाप्त करने के लिए पशु–पालन, कृषि का विस्तार, सिंचाई, भूमि–सुधार आदि कार्यो में वृद्धि लाना है। (य) सरकार ने देश के विभिन्न भागों में बड़े–बड़े उद्योगों की स्थापना की, जिससे कई लोगों को रोजगार प्राप्त हुआ।

4.09 निर्धनता उन्मूलन हेतु सुझाव

यद्यपि निर्धनता का उन्मूलन करना असम्भव सा कार्य प्रतीत होता है तथापि इस सामाजिक–आर्थिक समस्या के समाधान हेतु निम्नलिखित सुझावों को मस्तिष्क पटल पर रख कर ईमानदारी से प्रयास किये जा सकते है। :–

1. जनसंख्या विस्फोट पर प्रभावी नियन्त्रण स्थापित करना।
2. कृषि व्यवस्था में वैज्ञानिक एवं तकनीकी सुधार करने के लिए असक्षम किसानों की मदद करना।
3. बेरोजगारी का उन्मूलन करने के लिए उत्पादकता से सम्बद्ध श्रम जुटाने की व्यवस्था करना।
4. संसाधनों का उचित वितरण करने के लिए प्रभावशाली तंत्र की स्थापना करना।
5. कुटीर एवं लघु उद्योगों का समुचित विकास करना।
6. रोजगारोन्मुखी शिक्षा–प्रणाली का वैज्ञानिक तरीके से विकास करना।
7. सामाजिक कुप्रथाओं को प्रभावशाली कानून के द्वारा नियंत्रित करना।
8. भ्रष्टाचार का उन्मूलन करना।
9. सामाजिक बीमा योजना को भारत के गरीब लोगों तक पहुँचाना।
10. प्राकृतिक विपदाओं से सुरक्षा के पुख्ता प्रबन्ध करना।
11. 11 मद्यपान को पूर्णत: समाप्त करना।
12. गन्दी बस्तियों के स्थान पर साफ–सुथरे आवास की व्यवस्था करना।
13. मुफ्त चिकित्सा सुविधा उपलब्ध करवाना।
14. ग्रामीण क्षेत्रों में यातायात एवं सड़क सम्पर्क स्थापित करना।
15. बचत की आदत को प्रोत्साहन देना।

4.10 सारांश

निर्धनता एक ऐसी सामाजिक–आर्थिक चुनौती है, जिसके निराकरण के लिए समन्वित प्रयासों की जरूरत है क्योंकि इसकी उत्पत्ति के लिए अनेक शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक एवं प्राकृतिक कारक उत्तरदायी होते हैं। इस समस्या के निराकरण हेतु राजकीय एवं गैर सरकारी संगठनों द्वारा विभिन्न योजनाओं का क्रियान्वयन करने के प्रयास किये जा रहे हैं। भारत में निर्धनता की समस्या बड़ी विकट है इसका समाधान करने के लिए रोजगारोन्मुखी शिक्षा–प्रणाली को विकसित करने के साथ–साथ इसका औद्योगिक तंत्र के साथ समन्वय एवं तालमेल होना अनिवार्य है। इसके अतिरिक्त जनसंख्या को कारगर तरीके से नियन्त्रण करना, कृषि एवं भूमि सुधार करना, सामाजिक बीमा योजना लागू करना, सामाजिक चेतना विकसित करना, भ्रष्टाचार पर अंकुश लगाना इत्यादि प्रयास आन्तरिक प्रबल इच्छा शक्ति से सकारात्मक सोच के साथ किए जाने की महत्ती आवश्यकता है। निर्धनता को दूर करने के लिए विकास का लाभ समाज के निर्धनतम लोगों तक उचित वितरण प्रणाली के माध्यम से पहुँचना भी चाहिए।

4.11 बोध–प्रश्न

1. निर्धनता से आप क्या समझते हैं?
2. निर्धनता के प्रमुख स्वरूपों की व्याख्या कीजिये?
3. निर्धनता के कौन–कौन से कारण है?
4. निर्धनता के दुष्प्रभावों को लिखिये?

5. भारत में निर्धनता के उन्मूलन हेतु किये गये प्रयासों पर प्रकाश डालिये?
6. भारत में ग्रामीण एवं नगरीय निर्धनता के बारे में प्रकाश डालिये?

4.12 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. W Wallace Weaver: Social Problems
2. Roab Earl and G.J.Selznick : Mojor Social Problems
3. Paul H Landis : Social Prblems
4. Paul B.Horton and Gerald R Leslie: The Sociology of Social problems
5. Marry E. Walsh and Paul H. Furfey : Social Problems and Social Action
6. E.R. Mowrer : Disorganization – Personal and Social
7. Alex lnkles : what is Sociology
8. Elliott and Merrill : Social Disorganization
9. Martin H. Newmeyer : Social Problems and the Changing Society
10. Noel Timms: A sociological Approach to Social Problems

इकाई –5

बेरोजगारी

इकाई की रूपरेखा :

5.0 उद्देश्य

5.01 प्रस्तावना

5.02 बेरोजगारी की अवधारणा, अर्थ एवं विशेषताएँ

5.03 बेरोजगारी के प्रमुख तत्त्व

5.04 बेरोजगारी के स्वरूप

5.05 बेरोजगारी के प्रमुख कारण

5.06 बेरोजगारी के दुष्प्रभाव

5.07 बेरोजगारी दूर करने हेतु विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के प्रयास

5.08 बेरोजगारी दूर करने के दीर्घकालिक एवं अल्पकालिक उपाय

5.09 शारीरिक एवं मानसिक कमियों के निराकरण के उपाय

5.10 भगवती समिति के सुझाव

5.11 राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारन्टी योजना

5.12 राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी अधिनियम, 2005

5.13 सारांश

5.14 बोध प्रश्न

5.15 सन्दर्भ ग्रन्थ

5.0 उद्देश्य :

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- बेरोजगारी की अवधारणा एवं इसका अर्थ समझ सकेंगे।
- बेरोजगारी के विभिन्न स्वरूपों की जानकारियाँ भी पढ़ने को मिलेगी।
- बेरोजगारी के व्यक्ति एवं समाज पर पड़ने वाले दुष्प्रभावों का विश्लेषण।,
- सरकार द्वारा बेरोजगारी के निराकरण हेतु प्रमुख उपायों की चर्चा प्रस्तुत अध्याय में पढ़ने को मिलेगी।

◆ राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम, 2005 के प्रमुख प्रावधानों की चर्चा इस अध्याय में की गई है।

5.01 प्रस्तावना :

हम 21वी सदी में प्रवेश कर चुके हैं। 21वी शताब्दी में प्रवेश करने से पूर्व हमने इसके लिए वृहत् तैयारी की थी। इन तैयारियों में एक नया दृष्टिकोण एवं दृढ़ इच्छा शक्ति समाहित है। सामाजिक विचारकों एवं नियोजनकर्ताओं ने समानता, स्वतंत्रता, बन्धुत्व, न्यायपरकता के आधार पर समाज को एक नई दिशा एवं दशा प्रदान करने का–संकल्प लिया है। भारतीय समाज को इन विचारों के आधार पर ऊँचा उठाने के लिए अनेक चुनौतियों का सामना भी करना पड़ रहा है। भारत की जनसंख्या एक अरब से भी. अधिक हो चुकी है. जो कि चीन के बाद दूसरे स्थान की दर बढ़ती पर है। भारत में जनसंख्या विस्फोटक स्थिति में पहुँच रही है। यह राष्ट्र निर्माताओं के लिए प्रमुख चुनौती, चिन्ता एवं चिन्तन का विषय है। भारत की 65 प्रतिशत से अधिक आबादी ग्रामीण अंचल से सम्बद्ध होने के कारण प्रमुख रूप से. कृषि क्षत्र में कार्यरत है। ग्रामीण जनसंख्या मुख्य रूप से गरीबी, बेरोजगारी एवं अशिक्षा से त्रस्त है। शिक्षा के अभाव में वह आधुनिकीकरण की प्रक्रिया के साथ ताल–मेल बिठाने में असमर्थ एवं असहाय महसूस करती है। जिस राष्ट्र की आधी जनसंख्या अशिक्षित हो, उसे आधुनिक विकास की दौड़ में परमावश्यक चुनौतियों का सामना किस प्रकार करना पड़ रहा है, यह 'सहज ही समझा जा सकता है। भारत में लगभग 52 करोड़ श्रम शक्ति उपलब्ध है, जिसमें से 3 करोड़ लोगों को रोजगार की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त मानवीय एवं क्षेत्रीय विषमताएं स्थायी समस्या के रूप में विद्यमान है जो कि हमारे राष्ट्र की एकता एवं विकास के लिए खतरा उत्पन्न कर रही हैं।

नोबल पुरस्कार प्राप्त प्रमुख अर्थशास्त्री अमृत्य सेन ने अर्थव्यवस्था एवं सामाजिक उत्तरदायित्व के मध्य समुचित सामंजस्य स्थापित करने वाली नीतियों को अपनाने, पर बल दिया है। भारतीय अर्थव्यवस्था के समक्ष गरीबी एवं बेरोजगारी सर्वोच्च प्राथमिकता से निराकरण करने वाली चुनौती है, जिसका त्वरित गति से समाधान करना होगा अन्यथा ये भारतीय समाज को छिन्न–भिन्न कर सकती है। मूलत: गरीबी और बेरोजगारी एक सिक्के के दो पहलू हैं। इसे हम इस तरह समझ सकते हैं एक व्यक्ति गरीब है क्योंकि वह बेरोजगार है और वह बेरोजगार है इसलिए गरीब है। भारतीय समाज के ग्रामीण एवं नगरीय परिवेश में बेरोजगारी की समस्या का समाधान करना एक महत्वपूर्ण चुनौती के साथ–साथ नैतिकता के उत्तरदायित्व को भी रेखांकित करता है। बेरोजगारी की भयावहता को दर्शाते हुए प्रमुख समाज विज्ञानी एवं अर्थशास्त्री 'जनसंख्या विस्फोट' की भाँति ' 'बेरोजगारी विस्फोट' ' की अवधारणा पर चिन्तन कर रहे हैं। आजादी के पश्चात् भारत ने इस ओर समुचित प्रयास किए हैं। हमारे नीति निर्माताओं ने गरीबी उन्मूलन को सर्वोच्च प्राथमिकता प्रदान की है। लाखों लोगों को रोजगार देने की व्यवस्था की है और तीव्र गति से बढ़ रही श्रम शक्ति के लिए रोजगार के अवसर जुटाने के प्रयास भी किए जा रहे हैं।

वर्तमान में बेरोजगारी एक गंभीर सामाजिक एवं आर्थिक समस्या है। बेरोजगारी ने विकसित. अर्द्ध–विकसित एवं विकासशील राष्ट्रों को किसी न किसी रूप में प्रभावित किया है। बेरोजगारी का स्वरूप अनेक प्रकार की अर्थव्यवस्थाओं में अलग–अलग रूपों में देखा जा सकता है। पूँजीवादी अर्थव्यवस्थाओं में इसकी प्रकृति साम्यवादी अर्थव्यवस्थाओं से भिन्न हो सकती है। इसी प्रकार अफ्रीका के अति पिछड़े राष्ट्रों में इसके कारण, अविकसित राष्ट्रों में व्याप्त बेरोजगारी से भिन्न हो सकते हैं। बेरोजगारी स्वयं में तो एक समस्या है ही परन्तु यह अनेक समस्याओं का कारण भी है। गरीबी, भिक्षावृत्ति, बाल–अपराध, वेश्यावृत्ति, छात्र–असंतोष. युवा आंदोलन एवं अपराध इत्यादि समस्याओं की पृष्ठभूमि में बेरोजगारी एक प्रमुख कारण है। वर्तमान में वैश्वीकरण की विचारधारा के अभ्युदय के फलस्वरूप, विश्व के सभी राष्ट्र मिलजुलकर इस समस्या के निदान के लिए प्रयासरत

हैं। प्रजातांत्रिक लोक कल्याणकारी शासन व्यवस्था बेरोजगारी को दूर करने के लिए अनेक कार्यक्रमों का नियोजन एवं क्रियान्वयन करती है।

स्वतंत्रता के पश्चात् से ही भारत में बेरोजगारी एक प्रमुख चुनौती के रूप में सदैव विद्यमान रही है। भारत में प्रत्येक पंचवर्षीय योजना में पूर्व सिंचित (एकत्रित) बेरोजगारी का खजाना अत्यधिक होने के साथ–साथ निरन्तर तीव्र गति से बढ़ रहा है। सन् 1951 से 1981की अवधि के बीच में औसतन वार्षिक रोजगार वृद्धि दर 2.1 प्रतिशत रही है और इसी अवधि के दौरान वार्षिक श्रम शक्ति की वृद्धि दर 2.5 प्रतिशत थी। बड़ी संख्या में ग्रामीण एवं नगरीय, स्त्री एवं पुरूष इस समूह में सम्मिलित हो रहे हैं। निम्न तालिका संख्या। विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में बेरोजगारों की संख्या में वृद्धि को प्रदर्शित करते हैं।

तालिका 1

विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में बेरोजगारी (मिलियन –, दस लाख)

.सं	**पंचवर्षीय योजना की अवधि**	**योजना के प्रारम्भ में बेरोजगारी**	**योजना के अंत तक अतिरिक्त श्रम शक्ति**	**योग (I+II)**	**नये रोजगार**	**कुल रोजगार**
1.	प्रथम योजना 1951-56	3.3	9.0	12.3	7.0	5.3
2.	द्वितीय योजना 1956-61	5.3	11.8	17.1	10.0	7.1
3.	तृतीय योजना 1962-67	7.1	17.0	24.1	14.5	9.6
4.	चतुर्थ योजना 1969-74	12.6	20.4	33.0	19.0	14.0
5.	पाँचवी योजना 1974-79	14.0	22.0	36.0	15.4	20.6
6.	छठी योजना 1980-85	20.6	35.4	56.0	46.8	9.2
7.	सातवीं योजना 1986-91	9.2	39.4	46.6	40.0	8.6
8.	आठवीं योजना 1992-97	23.0	35.0	58.0	50.0	8.0
9.	नवीं योजना 1997-2002	8.0	41.0	49.0		

Ref%&Indian Economy in the Twenty First Centry, B.N. Singh, M.P.Shrivastava N. Prasad, 2000

5.02 बेरोजगारी की अवधारणा : अर्थ एवं विशेषताएँ

बेरोजगारी की अवधारणा को स्पष्ट करने से पूर्व 'रोजगार' शब्द के अर्थ को समझना उपयुक्त होगा। मूलत: रोजगार शब्द से अभिप्राय किसी भी व्यवसाय से संबंधित कार्य को इस प्रकार करना है जिससे कि कार्य के प्रतिफल (परिणाम) के रूप में या तो धन (रुपये) मिल जाये अथवा उक्त कार्य के बदले न्याय सम्मत वस्तुएं मिल जाए। इस प्रकार से अर्जित धन उन वस्तुओं तथा सेवाओं के उत्पादन से होता है जिनको बाजार में खरीदा या बेचा जा सकता हो। बेरोजगारी की अवधारणा को समझने के लिए हम प्रमुख विद्वानों द्वारा प्रस्तुत की गई विभिन्न परिभाषाओं का अवलोकन करेंगे :–

- काल प्रिब्राम (Kall Pribram us Encyclopedia of Social Sciences में लिखा है कि "बेरोजगारी श्रम बाजार की वह "दशा" है जिसके अन्तर्गत श्रमशक्ति की पूर्ति कार्य करने के स्थानों की संख्या से अधिक होती है।"
- जी. आर. मदान का मत है कि "जब स्वस्थ शरीर वाले ऐसे व्यक्तियों को मजदूरी के सामान्य स्तर पर कार्य नहीं मिल पाता है तो वह स्थिति बेरोजगारी की स्थिति मानी जा सकती है।"
- फेयर चाइल्ड के अनुसार :– "बेरोजगारी वह स्थिति है जिसमें सामान्य दशाओं तथा सामान्य वेतन–दर पर किसी व्यक्ति को बलपूर्वक एवं अनैच्छिक रूप से वेतन के कार्य से अलग कर दिया जाता है।"
- एसी.पीगू का दृष्टिकोण है कि – "बेकारी का तात्पर्य वेतन अर्जित वर्ग में विद्यमान बेरोजगारी से है और इसका सम्बन्ध केवल मजदूरी कार्य से ही होता है।
- बैंक ऑफ बड़ौदा द्वारा सम्पादित "वीकली रिव्यू नमक पत्रिका में बेरोजगारी को श्रम शक्ति की पूर्ति तथा श्रम शक्ति की मांग के मध्य पाए जाने वाले अन्तर को माना है।

इंटरनेट पर उपलब्ध बेरोजगारी को निम्नांकित रूप से परिभाषित किया है :–

- जब पूर्व में कार्यरत श्रमिक को कार्य से हटा दिया जाता है अथवा स्वैच्छिक रूप से आर्थिक लाभप्रद रोजगार में संलग्न नहीं रहता।
- श्रमिकों का वह माप जिसमें ये (श्रमिक) कार्य तो करना चाहते हैं परन्तु इनके पास कार्य उपलब्ध नहीं है।
- बेरोजगारी उस वक्त उत्पन्न होती है जब उत्पादन के किसी भी एक साधन – श्रम, भूमि, पूँजी एवं उद्यमशीलता, को वस्तुओं एवं सेवाओं के उत्पादन में नियोजित नहीं किया जाता। बेरोजगारी उस परिस्थिति में उत्पन्न होती है जब श्रम (उत्पादन के साधन के रूप में) को उपयुक्त कार्य के अभाव में पूर्ण रूप से इस्तेमाल नहीं किया जाता।
- वे लोग जो किसी कार्य में संलग्न नहीं हैं परन्तु क्रियाशील रूप से कार्य करना चाहते हैं तथा इसके लिए सतत् प्रयासरत रहते हैं।
- एक ऐसी स्थिति जिसमें किसी व्यक्ति के पास उपयुक्त कार्य उपलब्ध नहीं है;
- बेरोजगारी किसी व्यक्ति की वह दशा होती है जिसमें वह प्रतिफल के रूप में आय प्रदान करने वाले कार्य की तलाश में रहता है परन्तु उसे उपयुक्त कार्य नहीं मिलता। बेरोजगारी के अंतर्गत पूर्णकालिक छात्र, सेवानिवृत,

बच्चे अथवा वे लोग जो आय प्रदान करने वाले कार्य की तलाश नहीं करते, को सम्मिलित नहीं किया जा सकता।

5.03 बेरोजगारी के प्रमुख तत्व :

उपर्युक्त वर्णित समस्त परिभाषाओं के सार रूप में बेरोजगारी के पाँच प्रमुख तत्वों की पहचान की जा सकती है। ये हैं –

(1) **इच्छाशक्ति.** किसी व्यक्ति की कार्य करने की चाहत।

(2) **शारीरिक**–मानसिक योग्यता किसी दिए हुए कार्य को सम्पादित करने के शारीरिक एवं मानसिक गुण। इन गुणों के अभाव में व्यक्ति कार्य नहीं कर सकता। अत: किसी व्यक्ति की कार्य करने की पूर्ण इच्छा है परन्तु योग्यता नहीं है तब हम उसे बेरोजगार नहीं कह सकते। उदाहरण के लिए शारीरिक–मानसिक रूप से पूर्ण विकलांग, दीर्घावधि की असाध्य बीमारी, अति वृद्ध तथा मानसिक रूप से स्थाई विक्षिप्त भी बेरोजगारों की श्रेणी में सम्मिलित नहीं किये जा सकते हैं।

(3) **वांछित प्रयास** : केवल मात्र इच्छा शक्ति तथा शारीरिक एवं मानसिक योग्यता को धारण करने के बावजूद वांछित कार्य का नहीं मिलना बेरोजगारी के अन्तर्गत सम्मिलित नहीं किया जा सकता है। शारीरिक एवं मानसिक क्षमता के अनुकूल प्रयास करने के उपरान्त भी जब किसी व्यक्ति को कार्य नहीं मिले तभी उसे बेरोजगार कहा जा सकता है, अन्यथा वह बेरोजगारी की श्रेणी में शामिल नहीं किया जा सकता है।"

(4) **आर्थिक ध्येय** : किसी भी व्यक्ति का कार्य करने का उद्देश्य धन अर्जन करना होना चाहिए। अगर किसी व्यक्ति को अन्यत्र कहीं काम नहीं मिलता है और वह स्वयं के अथवा अपने परिवार के सदस्यों के उस कार्य को करता है जिसके करने से वह बाजार में धन अर्जित कर सकता है. ऐसी स्थिति भी बेरोजगारी की स्थिति कहलाएगी।

(5) **योग्यतानुसार कार्य.** किसी व्यक्ति ने इच्छा शक्ति, शारीरिक मानसिक योग्यता के साथ–साथ वांछित प्रयास भी किए हों और उसका उद्देश्य भी धन कमाना हो, परन्तु इन समस्त गुणों के उपरान्त भी वह व्यक्ति अपनी योग्यता से निम्न श्रेणी के पद पर, कम आय में कार्य करता है तो उस व्यक्ति को आशिक रोजगार प्राप्त व्यक्ति ही कहा जायेगा। उदाहरण के लिए किसी व्यक्ति ने व्याख्याता पद के लिए वांछित योग्यताएँ – NET UGC, SLET RPSC) की परीक्षा उत्तीर्ण कर ली हैं तथा वह M.Phill अथवा Ph.D की उपाधि धारक भी है और उसे व्याख्याता की नौकरी नहीं मिल रही है तथा वह व्यक्ति स्कूल में शिक्षण का कार्य कर रहा है। तब ऐसी स्थिति को आशिक बेरोजगारी की स्थिति के नाम से अभिहित किया जा सकता है।

प्रो. राजकृष्ण ने बेरोजगारी के चार प्रमुख आधारों की चर्चा की है। ये हैं :– 1. समय; 2. आय 3. कार्य करने की इच्छा शक्ति तथा 4. उत्पादनशीलता। इनका मत है कि एक व्यक्ति बेरोजगार अथवा आशिक बेरोजगार तब कहा जाएगा जब वह पूर्ण रोजगार अवधि द्वारा परिभाषित अवधि से कम समय के लिए, एक साल में कम से कम वांछित आय से भी कम कमाता हो तथा वह वर्तमान में जितना कार्य कर रता है उससे अधिक कार्य करने की इच्छा रखता हो, तब वह व्यक्ति पूर्ण रोजगार प्राप्त व्यक्ति नहीं माना जा सकता है। जिस कार्य में व्यक्ति वर्तमान में संलग्न है, यदि उसे उस कार्य रो हटा दिया जाता है और इसका प्रभाव सामान्य उत्पादन पर नहीं पड़ता है तो इसका अर्थ यह है कि उस व्यक्ति की सीमान्त उत्पादकता कुछ भी नहीं है।

यहाँ पर यह उल्लिखित करना उपयुक्त। होगा कि थामस माल्थस ऐसे पहले विद्वान हैं जिन्होंने स्पष्ट रूप से बेरोजगारी को श्रम बाजार की समस्याओं से विभेदीकृत किया है और बेरोजगारी के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है।

5.04 बेरोजगारी के स्वरूप :

1. **संक्रमणकालीन ' त्रिशंकू बेरोजगारी** :

बेरोजगारी की वह अवस्था जब कोई व्यक्ति एक स्थान पर किसी दिए हुए समय में किसी कार्य को पूर्ण करने के पश्चात् उसे कार्य का अभाव रहता है तथा वह अन्य स्थान पर कार्य की तलाश में क्रियाशील रहता है। बेरोजगारी की इस अवस्था को दो कार्यो के बीच की उस समय अवधि के सन्दर्भ में परिभाषित कर सकते हैं जिसमें व्यक्ति कार्य की तलाश तो करता है परन्तु कार्य उपलब्ध नहीं होता है। उदाहरण के लिये, माना कि एक व्यक्ति ने किसी कार्य स्थान से स्वेच्छा से काम करना छोड़ दिया अथवा उसे नौकरी से निकाल दिया गया हो अथवा कार्य पूर्ण हो गया हो ओर वह अन्य काम की तलाश कर रहा हो, तब हम उक्त अवधि, जिसमें उसे कार्य नहीं मिल रहा है, को संक्रमणकालीन बेरोजगारी कहेंगे। उदाहरण के लिए भवन निर्माण श्रमिक नल–बिजली फिटिंग कारीगर।

सामान्य रूप से किसी व्यक्ति को एक काम पूरा करने के पश्चात् दूसरा काम खोजने में समय लग जाता है। इस प्रकार वह व्यक्ति दो कार्यो के मध्य त्रिशंकू की भाँति रहता है। इसे ही संक्रमणकालीन बेरोजगारी या तलाश बेरोजगारी से अभिहित किया जा सकता है। वैश्वीकरण के प्रतिस्पर्धा–युक्त वर्तमान समय में पुराने उद्योग व्यवसाय बन्द हो जाते हैं अथवा इनमें आधुनिक तकनीकी के अनुकूल श्रमिकों की आवश्यकता होती है। पुराने व्यवसाय में संलग्न श्रमिक नए व्यवसायों को सीखने की अवधि में बेरोजगार रह सकते हैं।

2. चक्रीय बेरोजगारी

चक्रीय बेरोजगारी का सम्बन्ध व्यापारिक उतार–चढ़ाव से होता है। मंदी के दौरान श्रम शक्ति की आवश्यकता कम हो जाती है। इस प्रकार, अल्प अवधि के दौरान, श्रम शक्ति की मांग में कमी बेरोजगारी की स्थिति उत्पन्न करती है। इस प्रकार की बेरोजगारी को चक्रीय बेरोजगारी कहा जाता है। चक्रीय बेरोजगारी की अवधारणा में श्रम शक्ति की अतिरिक्त उपलब्धता का बोध निहित है।

3. संरचनात्मक बेरोजगारी :

बेरोजगारी का यह स्वरूप वृहद् स्थिति में देखने को मिलता है। जब नियोक्ता की आवश्यकताओं और श्रम शक्ति के मध्य अनुकूलन की स्थिति नहीं होती। इस प्रकार की बेरोजगारी उन परिस्थितियों में भी देखने को मिलती है जब कुशल श्रमिक कार्य की खोज में संलग्न होते हैं परन्तु वांछित पद रिक्त नहीं होते। इस प्रकार की स्थिति किसी भी राज्य की तीव्र से रूपांतरित अर्थव्यवस्था की संरचना में वांछित रिक्तियाँ और कुशल श्रमिकों के बीच बेमेलता को प्रदर्शित करती है। संरचनात्मक बेरोजगारी पूंजीवादी अर्थव्यवस्था में हो रहे आमूल–चूल परिवर्तनों का परिणाम होती है।

उदाहरण के लिए, वर्तमान संदर्भ में, जब आधुनिक पूंजीवादी व्यवस्था में तीव्र गति से तकनीकी परिवर्तन हो रहे होते हैं और उनके अनुकूल श्रम बाजार में गतिशीलता का अभाव होता है, तब बेरोजगारी का जो स्वरूप देखने को मिलता है उसे संरचनात्मक बेरोजगारी की अवधारणा से अभिहित किया जाता है। 'तकनीकी बेरोजगारी' जो कि मानव श्रम की अपेक्षा रोबोट पर आधारित होती है, को संरचनात्मक बेरोजगारी में सम्मिलित किया जा सकता है। इसी प्रकार "मौसमी बेरोजगारी" भी संरचनात्मक बेरोजगारी का ही एक स्वरूप है, क्योंकि यह बेरोजगारी भी विशिष्ट प्रकार के कार्यो से सम्बद्ध होती है। उदाहरण के लिए, निर्माण कार्य, खेतों में कार्य करने वाले प्रवासी श्रमिक इत्यादि।

4. आवृत प्रच्छन्न ' छिपी बेरोजगारी

आवृत अथवा प्रच्छन्न बेरोजगारी उन सम्भावित श्रमिकों को दर्शाती है जिन्हें शासकीय (Official) बेरोजगारों को प्रदर्शित करने वाले सांख्यिकीय आकड़ों में दर्शाया नहीं जा सकता। अनेक देशों में वे व्यक्ति जिनके पास करने के लिए कोई कार्य नहीं है परन्तु सक्रिय रूप से किसी कार्य की खोज में जुटे हुए हैं, को बेरोजगारों की सूची में सम्मिलित किया जाता है परन्तु जिन्होंने काम खोजने की तलाश को बंद कर दिया है, को भी शासकीय (Official) रूप से बेरोजगारों की श्रेणी में नहीं रखा जाता।

इस प्रकार की बेरोजगारी का स्वरूप उन लोगों में भी देखने को मिलता है जो समय से पहले रिटार्यमेंट (सेवा मुक्ति) इस कारण से ले लेते हैं कि उनके नियोक्ता उन्हें कार्य छोड़ने के लिए कह सकते हैं या बाध्य कर सकते हैं, परन्तु ये लोग कार्य करना पसंद करते हैं। इसी प्रकार हम देखते है कि सांख्यिकीय आकड़े अल्प बेरोजगारी (Under employment) की भी गणना नहीं करते है। अल्प बेरोजगारी से तात्पर्य मौसमी कार्य (Seasonal job) अथवा आशिक समय कार्य (Part time job) करने से है। अल्प रोजगारी में व्यक्ति कुछ समय की अवधि में ही कार्य करता है।

5. तकनीकी बेरोजगारी.

समाज में तकनीकी बेरोजगारी उस स्थिति में होती है जब नवीन खोजों एवं आविष्कारों के फलस्वरूप मानव श्रम का उपयोग घट जाता है। उत्पादन से संबंधित अनेक कार्य स्वचालित मशीनों एवं रोबोट के द्वारा किए जाते हैं तथा इसमें संलग्न श्रमिकों की संख्या कम हो जाती है। आधुनिक वैश्वीकरण के दौर में श्रमिकों को इस स्थिति का सामना करना पड़ रहा है जिसके परिणाम स्वरूप बेरोजगारी की समस्या में निरन्तर वृद्धि हो रही है। नए आविष्कार पुराने उद्योगों एवं व्यवसायों को बन्द करके बेरोजगारी की समस्या को जटिल बना देते हैं तथा नए बाजारों के क्षेत्रों को समाप्ति के कगार पर पहुँचा देते हैं। तथापि नवीन प्रौद्योगिक क्रान्तियाँ एवं खोजें एक नए व्यवसाय एवं रोजगार का सृजन तो अवश्य करते हैं, परन्तु इस प्रकार की मशीनीकृत क्रान्तियाँ, रोजगारी एवं बेरोजगारी दोनों को जन्म देती है। बड़े एवं आधुनिक उद्योगों की स्थापना कुटीर एवं हाथकरघा उद्योगों में कार्यरत श्रमिकों के सामने बेरोजगारी की समस्या को जन्म देते हैं। उद्योगों में नवीन तकनीकी का अभिनव प्रयोग, गला–काट प्रतिस्पर्धा एवं समय–समय पर उद्योग जगत में आर्थिक मन्दी के कारण भी बेरोजगारी की समस्या विकराल रूप धारण कर लेती है।

6. अस्थायी बेरोजगारी

अस्थायी बेरोजगारी का सामना उन शिक्षित एवं प्रशिक्षित व्यक्तियों को करना पड़ता है जिन्हें अपनी शिक्षा एवं प्रशिक्षण समाप्त करने के तत्काल बाद रोजगार उपलब्ध नहीं होता। रोजगार प्राप्त होने तक ये लोग अस्थायी रूप से बेरोजगारी का सामना करते हैं। उदाहरण के लिए B.Ed. की डिग्री मिलने के पश्चात् शिक्षक की नौकरी नहीं मिलने के कारण इस डिग्री के धारकों को अस्थायी बेरोजगारी की स्थिति से गुजरना पड़ता है। नौकरी मिलने के पश्चात् यह बेरोजगारी स्वत: ही समाप्त हो जाती है।

7. ऐच्छिक बेरोजगारी

ऐच्छिक बेरोजगारी की स्थिति तब उत्पन्न होती है जब कोई व्यक्ति वांछित क्षमताओं एवं गुणों के होने के उपरान्त भी आलस्य वश कम वेतन या वेतन में कटौती इत्यादि कारणों से कार्य करना नहीं चाहता है तो उसे ऐच्छिक बेरोजगार माना जाएगा।

8. शिक्षित बेरोजगारी

शिक्षा एवं वांछित प्रशिक्षण प्राप्त करने के पश्चात् भी जब व्यक्ति होता है तब इस प्रकार की बेरोजगारी को शिक्षित बेरोजगारी की अवधारणा से रेखांकित किया जाता है। के लिए B.A, M.A, B.Ed., NET,SLET,

MBBS या B.E. करने के पश्चात् किसी व्यक्ति का होना शिक्षित बेरोजगारी के अन्तर्गत समाहित किया जायेगा। शिक्षित बेरोजगारी की अवधारणा अस्थाई बेरोजगारी की अवधारणा के बोध से सामिप्य रखती है। '

5.05 बेरोजगारी के प्रमुख कारण.

इलियट एवं मेरिल ने अपनी पुस्तक "Social Disorganization" में के कारणों को दो प्रमुख भागों में विभाजित किया है।

(1) व्यक्तिगत कारण।

(2) अवैयक्तिक कारण

(1) व्यक्तिगत कारण :

इलियट एवं मेरिल ने बेरोजगारी के व्यक्तिगत कारणों में किसी व्यक्ति की शारीरिक व मानसिक अक्षमता को उत्तरदायी माना है। व्यक्तिगत कारणों में आयु, व्यावसायिक उपयुक्तता तथा बीमारी एवं शारीरिक अक्षमता को सम्मिलित किया जाता है।

प्रस्तुत अध्याय में हम बेरोजगारी के अवैयक्तिक कारणों पर विस्तार से चर्चा करेंगे।

(2) अवैयक्तिक कारण

1. **जनसंख्या वृद्धि :–** भारत में बेरोजगारी का सबसे महत्वपूर्ण कारण जनसंख्या का विस्फोटक गति से बढ़ना है। जिस अनुपात में भारत में जनसंख्या की वृद्धि होती है उसी अनुपात में रोजगार के अवसर नहीं बढ़ते क्योंकि रोजगार के अवसरों, यथा – नये उद्योग, व्यवसाय, नौकरियाँ इत्यादि स्थापना में कुछ समय लगता है। इस प्रकार जनसंख्या वृद्धि ओर रोजगार के अवसरों के मध्य एक अंतर स्थापित हो जाता है, जिसकी भरपाई करना लगभग असंभव सा है।
2. जलवायु एवं प्राकृतिक आपदायें :– भारत कृषि प्रधान देश है। भारतीय कृषि मानसून की वर्षा पर निर्भर करती है तथा मानसून की अनिश्चित एवं अनियमितता के फलस्वरूप फसल नष्ट हो जाती है। प्राकृतिक रूप से अतिवृष्टि, अनावृष्टि, चक्रवात, ओले पडना, शीत लहर, टिड्डियों का हमला, विषाणुओं का आक्रमण इत्यादि कारण कृषि–उत्पादन को गंभीर रूप से प्रभावित करते हैं, जिसके कारण को गरीबी एवं बेरोजगारी का सामना करना पडता है।
3. **भूमि का सीमित आकार :–** जनसंख्या वृद्धि के फलस्वरूप प्रति व्यक्ति कृषि योग्य भूमि में निश्चित रूप से कमी हो जाती है। बटवारे के कारण भी कृषि–जोत में कमी आती है, जिसके परिणाम–स्वरूप भूमि का सीमित भाग अपनी क्षमता के अनुरूप उत्पादन नहीं दे पाता। भूमि पर परिवार के सभी सदस्य कार्य करते हैं जो कि प्रच्छन्न बेरोजगारी को प्रश्रय प्रदान करते हैं।
4. **कृषि का पिछड़ापन –** भूमि का सीमित आकार एवं परम्परागत सांस्कृतिक मूल्यों एवं आर्थिक सीमाओं (गरीबी) के कारण खेतों पर कृषि परम्परागत औजारों एवं यन्त्रों की सहायता से की जाती है। गरीबी और अशिक्षा के कारण भारतीय किसान उन्नत किस्म की तकनीकों एवं वैज्ञानिक विधियों से परिचित रहता है, जिससे कृषि उत्पादन में वांछित वृद्धि नहीं हो पाती। कृषि का पिछड़ापन बेरोजगारी को उत्पन्न करता है।
5. **दोषयुक्त भूमि व्यवस्था –** सैकड़ों वर्षो से भारत में दोषयुक्त भूमि व्यवस्था चली आ रही है। वर्तमान समय में समाज के अल्पसंख्यक लोगों के पास उपजाऊ युक्त अधिक भूमि है तथा अधिसंख्यक कृषक मजदूर भूमि विहिन हैं। बड़े–बड़े भू–स्वामी वैज्ञानिक पद्धतियों का सहारा लेकर कृषि उत्पादन करते हैं जिसके कारण कृषि मजदूर बेरोजगारी की समस्या से पीड़ित हो जाते हैं।

6. **अविकसित उद्योग जगत :– भारत तीव्र गति से औद्योगिक विकास के लिए दृढ़** संकल्प है परन्तु विस्फोटक गति से बढ़ती जनसंख्या के अनुपात में उद्योग जगत की प्रगति नहीं हो रही, जिससे कि बढ़ती जनसंख्या के लिए रोजगार के पर्याप्त अवसर सृजित नहीं हो पा रहे। वैज्ञानिक एवं तकनीकी विकास ने बेरोजगारी के संदर्भ में कोढ़ में खाज का काम किया है। बड़ी–बड़ी फैक्टरियाँ एवं उद्योग धन्धे नगरों तक सीमित हो गये हैं। काम करने की इच्छा से ग्रामीण समुदाय शहरों में पलायन करता है जो कि श्रम की पूर्ति बढ़ा देता है। श्रमिकों की बेतहाशा वृद्धि के कारण सभी इच्छुक श्रमिकों को रोजगार उपलब्ध नहीं हो पाता।
7. **श्रमिकों में दक्षता का अभाव** :– वर्तमान समय में जिस तीव्र गति से आविष्कार, खोजें एवं तकनीकी विकास हो रहा है, उसी के अनुरूप वांछित प्रशिक्षण केन्द्रों की स्थापना नहीं हो पा रही, जिससे कि उद्योगों में दक्ष एवं कुशल कारीगरों का अभाव रहता है, इसी कारण अकुशल श्रमिकों को उद्योगों एवं तकनीकी के क्षेत्र में रोजगार नहीं मिल पाता और बेरोजगारी का सामना करना पड़ता है'
8. **पारम्परिक मूल्य एवं गतिशीलता का अभाव** – भारतीय संस्कृति प्रधानत: स्थानीयता, पारम्पारिकता नातेदारी, प्रान्तीयवाद भाषा एवं धर्म के मूल्यों से गूंथे हुए संरचित ताने–बाने के जैसी है। इस ताने–बाने को तोड़कर बाहर निकलना, भारतीय जनमानस के लिए एक गंभीर चुनौती है। भारतीय लोग अर्थ अभाव की मानसिकता में जीवनयापन करना पसन्द करते हैं तथा धनोपार्जन के लिए दूरस्थ क्षेत्रों में कार्य करने की उपेक्षा करते हैं। इस कारण परम्परागत सांस्कृतिक मूल्य बेरोजगारी को प्रश्रय प्रदान करते हैं।
9. **औद्योगिक जगत में अभिनव प्रयोग** एवं आधुनिक क्रान्तिकारी तकनीकी की स्थापना।
10. हाथकरघा एवं कुटीर उद्योगों का पतन एवं सार्वभौमिक शिक्षा का अभाव।
11. गैर व्यावसायिक शिक्षा दोषयुक्त शिक्षा प्रणाली।
12. उद्योग जगत की अस्थिरता के कारण श्रम की माँग व पूर्ति में असन्तुलन।
13. व्यवसाय एवं उद्योग धन्धों में मौसम का प्रभाव।
14. उत्थान एवं पतन युक्त व्यापारिक चक्र।
15. व्यापारिक जगत एवं औद्योगिक जगत में अनुकूलनशीलता एवं सामंजस्य का अभाव।
16. विभिन्न उद्योग एवं व्यापारों के मध्य पारस्परिक निर्भरता।
17. उद्योग एवं व्यापारिक जगत के उन्नयन के लिए वांछित पूंजी का अभाव।
18. वस्तुओं की माँग एवं पूर्ति का समय एवं स्थान सापेक्षिक होना।
19. दोषयुक्त कर प्रणाली।
20. भिन्न–भिन्न राजनीतिक दलों की सरकारों की अलग–अलग औद्योगिक नीतियाँ।
21. औद्योगिक जगत में तनाव, हड़ताल एवं तालाबन्दी।

योजना आयोग ने बेरोजगारी के प्रमुख रूप से निम्नांकित कारण बताये हैं:–

1. जनसंख्या में तीव्र गति से वृद्धि होना।
2. हाथकरधा ग्रामीण एवं कुटीर व्यवसायों का पतन।
3. शरणार्थियों की समस्या।
4. कृषि के अतिरिक्त अन्य क्षेत्रों में रोजगार के अवसरों का अनुपयुक्त विकास।
5. कृषि क्षेत्र में पारम्परिक एवं गैर–वैज्ञानिक पद्धतियों का प्रचलन।

5.06 बेरोजगारी के दुष्प्रभाव :

बेरोजगारी एक ऐसा अभिशाप है जो अन्य सामाजिक एवं आर्थिक बुराइयों को जन्म देती है। समस्त सामाजिक दुष्परिणामो का कारण गरीबी है और इस गरीबी का मूल कारण बेरोजगारी है। बेरोजगार व्यक्ति मानसिक हीनता की भावना का शिकार होता है तथा उसकी समाज में प्रतिष्ठा धूमिल हो जाती है, रिश्तेदार, आस–पड़ोस तथा परिवार के सदस्य बेरोजगार व्यक्ति को उचित सम्मान नहीं प्रदान करते। बेरोजगारी पराश्रित एवं गरीबी को बढ़ावा देती है तथा व्यक्ति में आक्रामक प्रवृत्ति एवं तनावयुक्त प्रकृति को जन्म देती है। वैयक्तिक असंतोष एवं दुश्चिन्तायें पारिवारिक तनाव को पैदा करती हैं और दीर्घ अवधि में ये स्थितियाँ राजनैतिक उथल–पुथल एवं क्रान्तिकारी स्थितियों को जन्म देती है। प्रधानत: बेरोजगारी के निम्नांकित दुष्प्रभाव समाज में देखने को मिलते हैं :–

1. **बरोजगारी एवं वैयक्तिक विघटन :–** बेरोजगारी की अवस्था में बेरोजगार व्यक्ति को समाज में उपयुक्त सम्मान नहीं मिलता तथा उसके व्यक्तित्व में चिड़चिड़ापन तनाव समाहित हो जाता है। औद्योगिक जगत में मन्दी के दौरान सम्पत्ति सम्बन्धी अपराधों की वृद्धि हो जाती है तथा बेरोजगारी की अवस्था में भिक्षावृत्ति, गुण्डागिर्दी, आवारागिर्दी को बढ़ावा मिलता है। विवाहों की दर घट जाती है एवं अनैतिक सम्बन्धों का समाज में प्रचलन होने लगता है तथा मानसिक रोगियों की संख्या भी बढ़ जाती है। बेरोजगारी से व्यक्ति के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। उसके मस्तिष्क में विकृत दृष्टिकोण पनपने लगता है एवं कार्यक्षमताओं में कमी होने लगती है। व्यक्ति अपनी असफलता एवं बेरोजगारी का जिम्मेदार समाज को मानता है। बेरोजगारी की अवस्था में व्यक्ति ऋणग्रस्तता का शिकार भी हो जाता है।

वैयक्तिक विघटन के दृष्टिकोण से बेरोजगार व्यक्तियों को चार भागों में विभाजित किया जा सकता है :–

(अ) शिक्षण एवं प्रशिक्षण समाप्त करने वाले नवयुवक, जिन्हें वांछित योग्यता एवं उपाधि प्राप्त करने के बाद तत्काल कार्य नहीं मिलता, जिसके कारण उनमें निराशा की भावना का प्रादुर्भाव होने लगता है। अगर सही समय पर इन नवयुवकों को कार्य नहीं मिलता तो ये गैर–सामाजिक गतिविधियों में संलग्न हो जाते हैं।

(ब) किन्हीं कारणवश जब कोई व्यक्ति बेरोजगार हो जाता है तब उसे एवं उसके परिवार को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। ये व्यक्ति बीमारी एवं मानसिक विकार से ग्रसित? हो जाते हैं तथा अपने परिवार के लालन–पालन के लिए ऋण एवं उधारी से अपना घर चलाते हैं तथा सामाजिक एवं नैतिक दृष्टि से अवांछित एवं अनुचित कार्य करने लगते हैं।

(स) पाश्चात्य देशों में वृद्धावस्था में व्यक्ति को भोजन एवं रूग्णता की स्थिति में दवाओं की व्यवस्था की चिन्ता सताने लगती है, जिसके परिणाम घातक होते हैं। वृद्ध व्यक्ति मानसिक रूग्णता के कारण आत्म–हत्या तक कर लेते हैं। इस प्रकार शारीरिक अक्षमता के कारण ये बेरोजगारी की अवस्था का सामना करते हैं तथा इनका वैयक्तिक विघटन तीव्र गति से होता है।

(द) मन्दीकाल के दौरान जब किसी व्यक्ति को अपनी योग्यता के अनुसार कार्य नहीं मिलता; तब वह अनेक मानसिक विकृतियों का शिकार हो जाता है जो कि उसके व्यक्तित्व में विघटन की प्रवृत्तियों को जन्म देता है। आर्थिक मन्दी के दौरान श्रमिकों को कम वेतन मिलता है जिससे उनका एवं उनके परिवार का उचित लालन–पालन, शिक्षा एवं चिकित्सा का प्रबन्ध नहीं हो पाता, जो कि कर्ता पर अतिरिक्त मानसिक दबाव डालता है। इसके कारण परिवार का रोजगार युक्त मुखिया मानसिक विघटन का शिकार हो जाता है।

2. **पारिवारिक विघटन एवं बेरोजगारी** – बेरोजगारी एक सामाजिक' तथ्य है जिसका विघटनकारी प्रभाव परिवार पर पड़ता है। बेरोजगारी की स्थिति में पारिवारिक जमा पूँजी स्थापना हो जाती है, जमीन–गहने इत्यादि गिरवी रख दिये जाते हैं या बेच दिये जाते हैं तथा परिवार ऋणग्रस्तता का शिकार हो जाता है। परिवार के भरण–पोषण की समस्या उत्पन्न होने लगती है तथा परिवार के बीमार सदस्यों की उचित चिकित्सकीय सेवायें नहीं हो पाती हैं। बच्चों की शिक्षा–दीक्षा में प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है तथा उन्हें भी आय–अर्जन करने के किसी न किसी कार्य में संलग्न होना पडता है। परिवार के सफल संचालन के लिए माता–पिता दोनों को ही अर्थोपार्जन हेतु घर से बाहर जाना पड़ता है, ऐसी स्थिति में बच्चे आवारा हो जाते हैं। वे अनैतिक कार्य करने लगते हैं तथा समाज विरोधी गतिविधियों में संलग्न हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त परिवार की स्त्रियाँ भरण–पोषण के लिए वैश्यावृत्ति का सहारा भी ले लेती हैं। पारिवारिक सदस्यों में तनाव होने संघर्ष की स्थिति पैदा हो जाती है। कई बार परिवार के समस्त सदस्य आत्म–हत्या तक कर लेते हैं।

3. **सामाजिक विघटन एवं बेरोजगारी** :– बेरोजगारी के परिणामस्वरूप सामाजिक संरचना में अव्यवस्था पनपने लगती है जो अन्ततोगत्वा समाज के विघटन के लिए असरदायी होता है। परिवार एवं समुदाय के लोगों के सामाजिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों में धीरे–धीरे पतन होने लगता है तथा समाज में अनेक सामाजिक समस्याओं का प्रचलन भी बढ़ जाता है। उदाहरण के लिए बेरोजगारी की दशा में भ्रष्टाचार, बेईमानी, रिश्वतखोरी, व्यभिचार, वैश्यावृत्ति, भिक्षावृत्ति इत्यादि सामाजिक समस्याओं का प्रचलन बढ़ जाता है।

4. **बेरोजगारी एवं जनस्वास्थ्य** – बेरोजगारी की अवस्था में व्यक्ति के स्वास्थ्य में. गिरावट आने लगती है। आमजन में सामान्य रूप से विद्यमान बेरोजगारी की स्थिति के कारण इनके स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

अर्थाभाव के कारण स्वास्थ्यप्रद आवासीय व्यवस्था नहीं हो पाती एवं व्यक्ति सीलनयुक्त गन्दी बस्तियों में निवास करते हैं जिसके कारण उनके व उनके परिवाए के सदस्यों के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। ये लोग रूग्ण अवस्था में वांछित दवाओं एवं अन्य सुविधाओं को जुटाने में असमर्थ हो जाते हैं तथा शीघ्र ही मृत्यु दर में इजाफा करवाने में सहायक सिद्ध होते हैं।

बेरोजगारी जनित अन्य सामाजिक समस्याएँ निम्नांकित हैं

5. नैतिक एवं चारित्रिक पतन एवं बेरोजगारी
6. आर्थिक दुष्प्रभाव (गरीबी, ऋणग्रस्तता, उद्योगों का पतन आदि) एवं बेरोजगारी
7. राजनैतिक विद्रोह एवं क्रान्तियों का जन्म एवं बेरोजगारी
8. सांस्कृतिक परम्पराओं एवं मूल्यों का पतन एवं बेरोजगारी

5.07 बेरोजगारी दूर करने हेतु विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के प्रयास

प्रथम पंचवर्षीय योजना में भारत में बेरोजगारी की समस्या के निराकरण हेतु वांछित प्रयास नहीं किया गया। सन् 1953 में योजना आयोग ने बेरोजगारी की समस्या की गंभीरता को समझते हुए इसके निराकरण हेतु 300 करोड़ रुपये से ऊपर खर्च करने के प्रावधान रखे। योजना आयोग ने रोजगार प्रदान करने के लिए 11 सूत्रीय कार्यक्रम रखा, जिसके अन्तर्गत विभिन्न प्रकार के प्रशिक्षण देने की सुविधा, लघु उद्योगों एवं व्यवसायों के लिए आर्थिक सुविधा आदि कार्य सम्मिलित किये गये। इस योजना में 75 लाख लोगों को कार्य देने का लक्ष्य रखा गया, परन्तु लगभग 54 लाख लोगों को ही काम दिया जा सकता। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में नये बेरोजगार समूह को रोजगार देने का लक्ष्य रखा गया और पुराने बेरोजगारों के लिए अलग से योजना बनाने हेतु कहा गया। तृतीय पंचवर्षीय योजना में जनसंख्या वृद्धि के कारण बेरोजगारी की समस्या ने गंभीर रूप ले लिया। इस योजना के

अन्तर्गत रोजगार की सुविधा प्रदान करने के लिए औद्योगिकीकरण के लिए व्यापक कार्यक्रम चलाये गये लेकिन अथक प्रयासों के बावजूद 2 करोड़ 30 लाख लोगों को ही रोजगार दिया जा सका।

चतुर्थ पंचवर्षीय योजना में गैर कृषि कार्य में वृद्धि करने, कृषि का तीव्र विकास करने, ग्रामीण विद्युतीकरण, शिक्षा, स्वास्थ्य, परिवार–नियोजन, खनिज एवं निर्माण उद्योग आदि क्षेत्रों में विस्तार करने का प्रावधान रखा गया। सन् 1971 में क्रेश योजना के द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार प्रदान करने की योजना प्रारम्भ की गई। इस योजना में प्रत्येक जिले के 1000 लोगों को प्रतिवर्ष 10 महीने तक कार्य देने का प्रावधान किया गया। इस योजना अन्तर्गत बेरोजगारों को मुख्यत: सड़क निर्माण, नालियाँ बनाना, लघु सिंचाई योजना इत्यादि योजनाओं में लगाया गया।

पाँचवी पंचवर्षीय योजना में निर्धनता एवं बेरोजगारी की समस्या का करने हेतु बड़े पैमाने पर रोजगार उपलब्ध करवाने का प्रावधान रखा गया। पाँचवी पंचवर्षीय योजना में सेवा क्षेत्रों के विस्तार की व्यवस्था की गई :–

(1) भू–संरक्षण
(2) दुग्ध शालाओं का विकास
(3) पशुपालन
(4) वन विकास
(5) मछली पालन
(6) कृषि एवं लघु उद्योग विस्तार
(7) सड़क निर्माण आदि।

इसी योजना के अन्तर्गत शिक्षित बेरोजगार, इंजीनियर एवं कृषि विशेषज्ञों को ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्रों में रोजगार प्रदान करने के वांछित संसाधन उपलब्ध कराने की व्यवस्था की गई।

TRYSEM(Training of Rural Youth Self–Employment) – इस योजना का शुभारम्भ 15 अगस्त 1979 को किया गया। इसके अन्तर्गत ग्रामीण युवकों को रोजगार प्रदान करने के लिए तकनीकी प्रशिक्षण देने की व्यवस्था की गई। इस योजना के द्वारा प्रत्येक वर्ष में प्रत्येक ब्लाँक से 40 युवकों को प्रशिक्षण देकर कुल मिलाकर 2 लाख युवकों को प्रशिक्षण देने का लक्ष्य रखा गया।

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम – 'काम के बदले अनाज योजना' को 1981 में इस नाम से रूपान्तरित किया गया। इस कार्यक्रम का उद्देश्य खाली समय में ग्रामीण श्रमिकों को अतिरिक्त रोजगार प्रदान करना है। इसमें केन्द्र एवं राज्य सरकारें बराबरी का खर्चा वहन करती हैं।

5.08 बेरोजगारी दूर करने के दीर्घकालिक अल्पकालीन उपाय :

(1) दीर्घकालिक उपाय :

1. विस्फोटक रूप से बढ़ती हुई जनसंख्या का प्रभावशाली ढंग से नियन्त्रण किया जाना चाहिये। इसके लिए परिवार नियोजन के कार्यक्रमों को प्रभावशाली तरीकों से लागू किया जाना चाहिए।
2. देश में आर्थिक विकास की गति को तीव्र किया जाना चाहिए। इसके अन्तर्गत औद्योगिकीकरण की रफ्तार को तीव्र करना, शिक्षित बेरोजगारों को काम में लगाना तथा कृषि उत्पादन में वृद्धि पर जोर दिया जाना चाहिए।
3. निर्माण कार्य में वृद्धि किया जाना चाहिए। शिक्षा प्रणाली में वांछित सुधार कार्यक्रम लागू किया जाना चाहिए।
4. शिक्षा तथा रोजगार के मध्य रोजगार परक समन्वय स्थापित किया जाना चाहिए।
5. युवा एवं बेकार जनशक्ति को तकनीकी के अनुकूल प्रशिक्षण दिया जाना चाहिये।

6. भारतीय सामाजिक संरचना में निहित उन बुराइयों को समाप्त करने के प्रयास किये जाने चाहिये, जिनके कारण बेरोजगारी जन्म लेती है। श्रमिकों में गतिशीलता उत्पन्न करने के लिए जाति प्रथा एवं छुआछूत सम्बन्धी नियमों का कठोरता से पालन किया जाना चाहिए। उपयुक्त औद्योगिक तकनीकी एवं कम्प्यूटरीकृत शिक्षा से श्रमिकों को अवगत कराना चाहिए।

(2) अल्पकालीन उपाय :

1. **हाथकरघा एवं कुटीर उद्योगों को समुचित प्रोत्साहन एवं उनका विकास :** भारत एक कृषि प्रधान देश है तथा बहुसंख्यक आबादी ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है जहाँ बेरोजगारी की समस्या भयावह रूप से पाई जाती है। अत: ग्रामीण क्षेत्रों में मिट्टी, चमड़ा, कताई, बुनाई से सम्बन्धित हाथ करघा उद्योगों को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त उन उद्योगों को भी प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए, जो कृषि व्यवस्था के अन्तर्गत सहज रूप से लगाये जा सकते हों. जैसे – मुर्गी पालन, मत्स पालन, पशु पालन. गौशाला की स्थापना, मधुमक्खी पालन, सूअर एवं बकरा–बकरी पालन इत्यादि।

2. **सघन खेती को प्रोत्साहन** : उन्नत खाद–बीज एवं फसल रक्षक दवाओं का सदुपयोग कर अत्यधिक मात्रा में फसल उगाई जा सकती है। फल सब्जी एवं बागवानी को भी प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए।

5.09 शारीरिक एवं मानसिक कमियों के निराकरण के उपाय :

व्यक्तिगत शारीरिक एवं मानसिक कमियों को समाप्त करने के लिए निम्नांकित प्रयास किये जा सकते है :–

(i) समुचित वेतन व्यवस्था का प्रबन्ध।

(ii) व्यावसायिक शिक्षा एवं रोजगारोन्मुख कार्यक्रमों की स्थापना।

(iii) शारीरिक रूप से विकलांग लोगों के लिए पुनर्वास की सुविधाएं।

(iv)चिकित्सकीय सुविधाओं की आमजन को उपलब्धता।

(v) श्रमिकों को मुआवजा एवं क्षतिपूर्ति की समुचित व्यवस्था।

(vi)वृद्ध लोगों को उनकी योग्यता एवं क्षमता के अनुरूप रोजगार प्रदान करना।

(vii)नवयुवकों को अध्ययन के दौरान व्यावसायिक प्रशिक्षण की व्यवस्था करना तथा रोजगार के अवसरों की जानकारी उपलब्ध कराना।

(viii) सामाजिक सुरक्षा के कार्यक्रमों का सफल रूप से संचालन – इसमें पेंशन

(ix)व्यवस्था, बेरोजगारी भत्ता, रूग्णता में निःशुल्क चिकित्सा सुविधा, सार्वजनिक बीमा आदि।

(x) भूमि सुधार से सम्बन्धित कानूनों को लागू करवाना।

(xi)भूदान कार्यक्रमों को प्रोत्साहन देना।

5.10 भगवती समिति के सुझाव :–

भारत में व्याप्त बेरोजगारी की समस्या के समाधान हेतु 'भगवती समिति की स्थापना 1970 में की गई थी, जिसने इस समस्या के समाधान हेतु निम्नलिखित अल्पअवधि के सुझाव प्रस्तुत किये थे :–

1. 1.कृषि सेवा केन्द्रों की स्थापना करना।
2. ग्रामीण विद्युतीकरण को द्रुतगति से क्रियान्वयन करवाना।
3. ग्रामीण क्षेत्रों में सड़क निर्माण के लिए अधिक से अधिक धनराशि की व्यवस्था करवाना।
4. ग्रामीण क्षेत्रों में आवास एवं वित्त निगम की स्थापना करवाना।
5. लघु सिंचाई योजनाओं का विस्तार करना।

6. प्राथमिक शिक्षा के कार्यक्रमों का विस्तार करना।
7. ग्रामीण क्षेत्रों में पेयजल की समुचित व्यवस्था करना।
8. लघु एवं सीमान्त कृषकों को हाथकरघा एवं कुटीर उद्योगों की स्थापना हेतु न्यूनतम ब्याज दर पर आर्थिक सहायता उत्पन्न कराना।
9. ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्रों में नवयुवकों को उद्योग एवं व्यवसायों की स्थापना हेतु सरकार द्वारा कम व्याज दर पर ऋण की समुचित व्यवस्था करवाना।
10. निरक्षरों को साक्षर करने के लिए ग्रामीण स्तर पर व्यावहारिक योजनाओं का क्रियान्वयन करना।

5.11 राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी योजना.

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी अधिनियम, 2005 भारत सरकार द्वारा दिनांक 2 फरवरी 2006 से देश के 200 व राजस्थान के छह जिलों में क्रियान्वयन किया जा रहा है 1 अप्रेल 2008 से सम्पूर्ण भारत में इसे लागू किया गया है। इस अधिनियम का उद्देश्य प्रत्येक वित्तीय वर्ष में प्रत्येक ग्रामीण परिवार, जिसके वयस्क सदस्य अकुशल शारीरिक कार्य करने के इच्छुक हों, को कम से कम 100 कार्य दिवसों का मजदूरी रोजगार प्रदान करके ग्रामीण क्षेत्रों के परिवारों को आजीविका की सुरक्षा प्रदान करना है। इस अधिनियम के उद्देश्य हैं –

1. ग्रामीण परिवारों को अकुशल शारीरिक श्रम वाले कार्यो में गारंटीशुदा मजदूरी योजना मुहैया कराकर उनके जीवनयापन को सुरक्षा प्राप्त होगी।
2. गांवों में स्थायी सामुदायिक परिसम्पत्तियों का सृजन हो पाएगा, जो ग्रामीण गरीबों के आजीविका संसाधन आधार को सुदृढ़ बनाएगी।
3. पंचायती राज संस्थाओं को वित्तीय एवं प्रशासनिक रूप से अधिकार सम्पन्न बनाया जाएगा।

5.12 राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी अधिनियम की निम्नांकित विशेषताएँ है :

1. प्रत्येक ग्रामीण परिवार को एक वित्तीय वर्ष में अपने ही स्थान पर 100 दिनों के गारंटीशुदा रोजगार के माध्यम से अपनी आजीविका का अधिकार होगा।
2. प्रत्येक ग्रामीण परिवार को सरकार से 100 दिनों का रोजगार मांगने का अधिकार होगा।
3. यदि राज्य सरकार किसी परिवार की मांग पर उसे 100 दिनों का रोजगार उपलब्ध करा पाने में असफल रहती है तो वह बेरोजगारी भत्ते के संबंध में निर्धारित दरों के अनुसार परिवार की हकदारी के हिसाब से पात्र आवेदकों को मुआवजे का भुगतान करेगी।
4. इस योजना में महिलाओं को रोजगार के आवंटन में प्राथमिकता दी जायेगी और एक तिहाई रोजगार उन्हें ही उपलब्ध कराए जायेंगे।
5. सभी स्तरों पर पंचायतें योजना के नियोजन एवं कार्यान्वयन में निर्णायक भूमिका निभाएगी।
6. योजना के अन्तर्गत कार्य स्थल पर अनेक सुविधायें प्रदान की जाएगी।

इसके अलावा कार्य स्थल पर घायल होने के मामले में निःशुल्क चिकित्सा का और श्रमिकों की मृत्यु या स्थायी रूप से विकलांग होने के मामले में मुआवजे का प्रावधान है। इस योजना का 'महत्वपूर्ण उद्देश्य टिकाऊ परिसम्पत्तियों का सृजन करना है और ग्रामीण गरीबों के जीविकोपार्जन के संसाधन। आधार को सुदृढ़ करना है ताकि ग्रामीण गरीब के पास भविष्य में भी जीवन निर्वाह के साधन उपलब्ध हो सके।

इस योजना के अन्तर्गत प्राथमिकता के क्रम में निम्नलिखित कार्य लिए जा सकते हैं:–

(क) जल संरक्षण एवं जल संग्रहण

(ख) सूखा रोधन जिसमें वनरोपण एवं वृक्षारोपण कार्य शामिल हैं।

(ग) सिंचाई नहरें जिसमें सूक्ष्म एवं लघु सिंचाई कार्य शामिल हैं।

(घ) अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के परिवारों के स्वामित्व की! भूमि अथवा ग्राम सुधार के लाभार्थियों अथवा इंदिरा आवास योजना के लाभार्थियों की भूमि के सिंचाई सुविधाएँ।

(ङ) पारम्परिक जल स्रोतों का नवीनीकरण, जिसमें तालाबों से गाद निकालना शामिल है।

(च) भूमि विकास।

(छ) बाढ़ नियन्त्रण व बचाव के कार्य व जल–अवरूद्ध क्षेत्रों में जल निकास कार्य।

(ज) बारहमासी सड़क सम्पर्क प्रदान करने के लिए ग्रामीण सड़कें।

(झ) कोई अन्य ऐसा कार्य जिसे केन्द्र सरकार राज्य सरकारों के परामर्श से अधिसूचित करें।

सूचीबद्ध कार्यों के अन्तर्गत अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों को अपनी भूमि की सिंचाई के लिए पर्याप्त अवसरों का सृजन किया जायेगा।

5.13 सारांश :

उपर्युक्त वर्णित संपूर्ण इकाई में बेरोजगारी की अवधारणा पर प्रकाश डाला गया है। बेरोजगारी क्या है?, इसके कौन–कौन से स्वरूप हैं? एवं इसके दुष्प्रभावों को समझने का प्रयास किया गया है। प्रस्तुत अध्याय में बेरोजगारी के भिन्न–भिन्न स्वरूपों को समझाने का प्रयास भी किया गया है। बेरोजगारी किसी भी समाज एवं राष्ट्र के लिए भयावह समस्या है जिसका निराकरण करना अपरिहार्य है, अन्यथा यह संपूर्ण समाज की संरचना को छिन्न–भिन्न कर विघटन की स्थिति उत्पन्न कर देती है। अत: इसके निराकरण हेतु सभी राष्ट्र सदैव प्रयत्नशील रहते हैं। भारत सरकार विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से बेरोजगारी के निराकरण हेतु नाना प्रकार के कार्यक्रम ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्रों में क्रियान्वयन करती है। राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम, 2005 के अंतर्गत राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना एक मील का पत्थर साबित होगी।

5.14 बोध प्रश्न :

1. बेरोजगारी को परिभाषित कीजिये।
2. बेरोजगारी के स्वरूपों पर प्रकाश डालिये।
3. बेरोजगारी निराकरण के उपाय बताइये।
4. बेरोजगारी के प्रमुख कारणों को समझाइये।

5.15 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. सिंह, अरुण कुमार सिंह, समाजशास्त्र की मूलभूत अवधारणायें, न्यू रायल बुक कम्पनी, लखनऊ, 2009।
2. हसनैन, नदीम, समकालीन भारतीय समाज: एक समाजशास्त्रीय परिदृश्य, भारत बुक सेंटर, लखनऊ, 2007।
3. चन्द्र, एस.एस. (2002) भारत में सामाजिक समस्याएं: कनिष्का पब्लिशर्स: नई दिल्ली
4. दोषी, एस. एल. एवं जैन, पी.सी. (2005) भारतीय समाज, नेशनल पब्लिसिंग हाउसः जयपुर
5. शर्मा, आर.एन.एवं. शर्मा, आर. के. (2002) सामाजिक विघटन, एटलांटिक पब्लिशर्स एवं डिस्ट्रीब्यूटस
6. लवानिया, एम.एम. एवं राठौड़, ए.एस. (1999) भारतीय समाज, रिसर्च पब्लिकेशनः जयपुर

7. गुप्ता, एम.एल. एवं शर्मा, डी.डी. (2004) समकालीन भारतीय सामाजिक विचारक एवं सामाजिक आन्दोलन, साहित्य भवन पब्लिकेशनः आगरा

8. लवानिया, एम.एम. एवं पडियार, जी. (2010) भारत में सामाजिक समस्यायें, रिसर्च पब्लिकेशनः जयपुर

9. गुप्ता, एम. एल. एवं शर्मा डी.डी., मानव समाज, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा, 2001।

10. आहूजा, राम, सामाजिक समस्याऐं, रावत पब्लिकेशन्स, द्वितीय संस्करण, जयपुर एवं नई दिल्ली, 2000।

11. अहूजा, आर. एवं. अहूजा एम. (2008) समाजशास्त्र: विवेचना एवं परिप्रेक्ष्य, रावत पब्लिकेशन्सः जयपुर

12. चन्द्र, एस.एस. (2002) भारतीय सामाजिक संरचना, कनिष्का पब्लिशर्स: नई दिल्ली

13. सिंह, अरुण कुमार सिंह, समाजशास्त्र की मूलभूत अवधारणायें, न्यू रायल बुक कम्पनी, लखनऊ, 2009।

14. हसनैन, नदीम, समकालीन भारतीय समाज: एक समाजशास्त्रीय परिदृश्य, भारत बुक सेंटर, लखनऊ, 2007।

इकाई -6

साम्प्रदायिकता

इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्देश्य

6.1 प्रस्तावना

6.2 साम्प्रदायिकता की अवधारणा

6.3 साम्प्रदायिकता की विशेषताएं

6.3.1 साम्प्रदायिकता के आयाम

6.4 साम्प्रदायिकता के कारण

6.5 साम्प्रदायिकता निराकरण हेतु सुझाव

6.6 साम्प्रदायिक दंगे

6.6.1 साम्प्रदायिक दंगों की विशेषताएं

6.6.2 साम्प्रदायिक दंगों के कारण

6.7 सारांश

6.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

6.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

6.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के उपरांत आप-

1. साम्प्रदायिकता की अवधारणा , विशेषताएं एवं आयाम को समझ सकेंगे।
2. साम्प्रदायिकता के कारण एवं निराकरण के उपाय के विषय में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे|
3. साम्प्रदायिक हिंसा के अर्थ , विशेषताओं तथा कारणों से अवगत हो जायेंगे|

6.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में साम्प्रदायिकता के विषय में चर्चा की गई है। भारत जिसे अनेक भाषाओं, धर्मो. जातियों तथा संस्कृतियों देश कहा जाता हैं, इसकी राष्ट्रीय एकता के विद्यमान अर्न्तनिहित कारकों को स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद अनेक पृथकतावादी या विघटनकारी शक्तियों में बहुत नुकसान पहुँचाया है | इन विघटनकारी शक्तियों का एक स्वरूप साम्प्रदायिकता है | भारतीय समाज अनेक धार्मिक में बंटा हुआ है, जिनके स्वार्थ एक दूसरे से भिन्न हैं और कभी-कभी उनमें पारस्परिक विरोध भी होता है। एक धार्मिक समूह के सदस्य जो दूसरे धार्मिक समूह के सदस्यों और उनके धर्म के विरोध करते हैं तो उन्हें साम्प्रदायिक कहा जा सकता है। साम्प्रदायिकता का आचरण

कई प्रकार से दिया जाता है। जैसे- राजनीतिक साम्प्रदायिकता, धार्मिक साम्प्रदायिकता और आर्थिक साम्प्रदायिकता, राजनीतिक साम्प्रदायिकता| साम्प्रयदायिकता की बढ़ती हुई प्रवृत्ति और उसके साथ जुड़ी हुई हिंसा ने धार्मिक अल्पंसख्यकों और नृजातीय सूमहो में असुरक्षा की भावना जाग्रत कर दी है। इसलिये राष्ट्र की शांति एवं एकता की क्षति को रोकने के लिये साम्प्रदायिकता हिंसा की समस्या का विश्लेषण करना और उस पर विचार करना आवश्यक है। 'सम्प्रदायवाद' की परिभाषा करना आज नितान्त जरूरी है। और यह मालूम करना भी इतना ही संगत है कि 'साम्प्रदायिक' कौन है

6.2 साम्प्रयदायिकता

साम्प्रदायिकता को एक विचारधारा माना जा सकता है जो कि यह बताती है कि समाज उन धार्मिक समूहों में बँटा हुआ है, जिनके स्वार्थ एक दूसरे से भिन्न हैं और कभी-कभी उनमें पारस्परिक विरोध भी होता है। एक के सदस्य जो दूसरे समूह के सदस्यों और धर्म के विरूद्ध प्रतिरोध करते हैं उन्हें 'साम्प्रदायिक' कहा जा सकता है। यह विरोध किसी विशेष समुदाय पर झूठे आरोप लगाना, क्षति पहुंचाना और जानबूझ कर अपमानित करने का रूप लेता है। इससे भी अधिक यह विरोध लूटना, असहाय और निर्बल व्यक्तियों के घरों और दुकानों को आग लगाना, उनकी स्त्रियों को अपमानित करना और आदमी-औरतों को जान से मार देने तक का वीभत्स रूप भी धारण कर लेता है।

भारत में साम्प्रदायिकता पूर्णरूप से धार्मिक अन्धविश्वास भक्ति और निष्ठा से संबंधित हैं। धर्म के कारण धर्म के द्वारा तथा धर्म के लिये धार्मिक समूहों में परस्पर घृणा, तिरस्कार. निन्दा. हिंसा. उपेक्षा आदि इतनी बढ जाती हैं कि कमी–कभी इसका हिंसात्मक रूप बन जाता हैं। साम्प्रदायिकता की अवधारणा की अनेक समाज वैज्ञानिकों ने निम्न प्रकार से परिभाषित किया हैं–

स्मिथ ने साम्प्रदायिकता को परिभाषित करते हुये लिखा हैं , "साम्प्रदायिक व्यक्ति अथवा समूह वह हैं जो अपने धार्मिक या भाषा – भाषी समूह को एक: ऐसी पृथक राजनैतिक तथा सामाजिक इकाई के रूप में देखता हैं जिसके हित. अन्य समूहों से पृथक होते हैं और जो अक्सर उनके विरोधी भी हो सकते हैं।"

रेण्डम हाउस डिक्शनरी में साम्प्रदायिकता को एक विशेष भावना बताया गया हैं। इसमें लिखा हैं, – "साम्प्रदायिकता अपने ही जातीय समूह व धर्म के प्रति तीव्र निष्ठा की भावना हैं।"

बृजमोहन के अनुसार. 'भारतीय समाज को ध्यान में रखते हुये साम्प्रदायिकता की परिभाषा ' विभिन्न धर्मो (प्रमुखत: हिन्दू व मुस्लिम) के अनुयायियों के मध्य पायी जाने वाली संघर्ष की उस स्थिति के आधार पर की जा सकती हैं जिसके कारण इनमें एक दूसरे के प्रति हिंसा. घृणा ईर्ष्या तथा एक ऐसी शंका का जन्म होता हैं जो हिंसा की घटनाओं में परिवर्तित हो जाती हैं।

विस्तृत परिप्रेक्ष्य में साम्प्रदायिकता दो या दो से अधिक धर्म के अनुयायियों के बीच होने वाली उस संघर्ष की स्थिति का नाम हैं जिसके कारण वे एक दूसरे से लड़ते – झगडते रहते हैं, एक साथ मिलकर रह पाने से अपने को असमर्थ पडते हैं तथा कभी – कभी उस प्रकार के दंगे – फसादों में एक – दूसरे से भिड़ जाते हैं जिसमें बहुत से लोगों को अपनी जान माल से हाथ धोना पड़ता हैं।

6.3 सम्प्रदायिकता की विशेषताएं

1. साम्प्रदायिकता धार्मिक संगठन. समूह अथवा सम्प्रदाय से संबंधित होती हैं। एक धर्म के व्यक्ति अपने को धार्मिक संगठन का सदस्य मानते हैं। धर्म में भी छोटे – छोटे गुट हैं तो व्यक्ति अपने और अधिक संकीर्ण स्थिति में पाता हैं।

2. एक सम्प्रदाय के सदस्य अपने धर्म, देवी – देवता, मूल्य – आदर्श, रीति – रिवाज आदि के आधार पर अपने को दूसरे समूह से श्रेष्ठ मानते हैं।
3. साम्प्रदायिकता के संघर्ष का मूल कारण दूसरे धर्म के संस्कार, मूल्य,, देवी – देवता, वेशभूषा जीवन के तरीके अर्थात् संस्कृति तथा धार्मिक विशेषताओं को उपेक्षा,, घृणा के भाव से देखते है।
4. साम्प्रदायिकता में एक समूह दूसरे समूह के लोगों से परस्पर प्रेम,– तथा सहयोग के स्थान पर सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, अलगाव अधिक दिखाई देता है।
5. इसमें परस्पर एक दूसरे को क्षति या हानि पहुँचाने का भय बना रहता हैं। पारस्परिक घृणा बढ़ती जाती हैं।
6. इसमें एक सम्प्रदाय के लोग अपने धर्म, कर्म, आचार – विचार के प्रति कट्टर, निष्ठा रखते हैं जिससे एक सम्प्रदाय के लोग अपने सम्प्रदाय की श्रेष्ठता के लिये परस्पर समझोता या अनुकूलन नहीं करते हैं।

6.3.1साम्प्रदायिकता के आयाम

टी.के. ऊमन (1989) ने साम्प्रदायिकता के छह आयाम बतलाये हैं-

आत्मसातीकरणवादी साम्प्रदायिकता - आत्मसातीकरणवादी साम्प्रदायिकता वह है जिसमें छोट धार्मिक समूहों का बड़े धार्मिक समूह में समावेश/एकीकरण कर लिया जाता है। इस प्रकार की साम्प्रदायिकता यह दावा करती हैकि सब जनजातियां हिन्दू हैं और जैन, सिख, और बौद्ध, हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 के अन्तर्गत आते हैं।

कल्याणकारी साम्प्रदायिकता -कल्याणकारी साम्प्रदायिकता का लक्ष्य किसी विशेष समुदाय का कल्याण होता है, जैसे जीवन-स्तर को सुधारना और शिक्षा एवं स्वास्थ्य का प्रबन्ध करना; उदारणार्थ, ईसाई संस्थाएं ईसाईयों की उन्नति के लिये काम करती हैं, याप पारसी संस्थाएं पारसियों के उत्थान में कार्यरत रहती हैं। इस तरह के सामुदायिक संगठन का उद्देश्य केवल अपने समुदाय के सदस्यों के हित में कार्य करना होता है।

पलायनवादी साम्प्रदायिकता -पलायनवादी साम्प्रदायिकता वह है जो जिसमें एक छोटा धार्मिक समुदाय अपने को राजनीति से अलग रखता है; उदाहरण के लिये, बहाई समुदाय जिसने अपने सदस्यों के लिये राजनीति में भाग लेना अवैध घौषित किया हुआ है।

प्रतिशोधपूर्ण साम्प्रदायिकता -प्रतिशोधपूर्ण साम्प्रदायिकता दूसरे धार्मिक समुदायों के सदस्यों को हानि और चोट पहुंचाने का प्रयत्न करती हैं।

पृथकतावादी या अलगाववादी साम्प्रदायिकता -पृथकतावादी या अलगाववादी साम्प्रदायिकता वह है जिसमें एक धार्मिक समुदाय अपनी संस्कृति की विशेषता बनाये रखना चाहता है और देश में एक अलग राज्य की मांग करता है; उदाहरणार्थ, उत्तरपूर्वी भारत में कुछ मिज़ों और नागाओं की मांग, असम में बोडों की मांग और बिहार में झाड़खंड की जनजातियों की मांग।

पार्थक्यवादी साम्प्रदायिकता- पार्थक्यवादी साम्प्रदायिकता वह है जिसमें एक धार्मिक समुदाय अपनी अलग राजनीतिक पहचान चाहता है और एक स्वतंत्र देश की मांग करता है। खालिस्तान की मांग कर रहा सिखों का एक बहुत ही छोटा उग्रवादी भाग इस प्रकार की साम्प्रदायिकता को अपना रहा है। इन छह प्रकारों की साम्प्रदायिकता में से पिछले तीन रूप समस्याये खड़ी करते हैं और जिनके कारण आन्दोलन, साम्प्रदायिक झगड़े, आतंकवाद और बगावत उत्पन्न होते हैं।

6.4 साम्प्रदायिकता के कारण

किसी भी समाज में साम्प्रदायिकता की भावना संकीर्णताओं का योग हैं तथा रचा पूर्ति उसका उद्देश्य हैं। अन्य देशों की तुलना में भारतीय समाज में साम्प्रदायिकता एक जटिल समस्या बनी समस्या हैं। इस समस्या के अनेक कारण हैं जो ऐतिहासिक तथा समकालीन दोनों हैं–

1. ऐतिहासिक कारण

भारतीय इतिहास से ज्ञात होता हैं कि भारत आर्यो का देश था और यवनों ने यहां आकर साम्राज्य स्थापित किया। शक, हूण, कुषाण, मुगल, पठान आदि भारत में आते रहे तथा संघर्ष होता रहा। कुछ कटर धार्मिक मुस्लिम शासकों ने साम्प्रदायिकता को बढ़ावा दिया। वे ब्रिटिश शासन के दौरान अंग्रेजों ने "फूट डालों व राज करों" नीति के अर्न्तगत हिन्दु मुसलमानों ने साम्प्रदायिकता को उकसाया। हिन्दु मुसलमानों की साम्प्रदायिक भावना के कारण सन् 1947 में द्वी– राष्ट्र सिद्धान्त के आधार पर भारत से होकर पाकिस्तान देश बना। प्रारंभ में भारत में साम्प्रदायिकता हिन्दुओं व मुसलमानों के बीच थी। अब यह प्राप्ति के बाद अपने ही सम्प्रदाय के समानान्तर गुट परस्पर हिंसा में उलझे हुये हैं।

2. धार्मिक कारण

ऐतिहासिक स्त्रोतों से ज्ञात होता हैं कि साम्प्रदायिकता की उत्पत्ति और का कारण भी धार्मिकता ही रहा हैं। सभी धर्मो के मठाधीश अपने धर्म को सर्वोपरि, श्रेष्ठ, अच्छा मानते हैं तथा दूसरे धर्मो को हीन भावना से देखते हैं। अपने धर्म की श्रेष्ठता स्थापित करने वाले धर्म प्रचारक तथा दूसरे धमों की आलोचना करते हैं। अन्य के प्रति द्वेष, तनाव, वैमनरच तथा घृणा पैदा करते हैं। इससे धर्मो में परस्पर साम्प्रदायिकता पैदा होती हैं तथा झगड़े बढ़ते है।

3. साम्प्रदायिक राजनीतिक दल एवं सामाजिक – सांस्कृतिक संस्थाएँ

भारत का विभाजन साम्प्रदायिकता की राजनीति के कारण हुआ। स्वतंत्रता के दौरान साम्प्रदायिकता के जो बीज बोये गये। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् संकीर्ण राजनीतिज्ञों ने निहीत स्वार्थो की पूर्ति हेतु साम्प्रदायिकता को बढ़ावा दिया। आज प्रजातांत्रिक शासन व्यवस्था में हिन्दु व मुस्लिम तुष्टीकरण करने वाले अनेक राजनीतिक दल प्रत्यक्ष था। परोक्ष रूप से साम्प्रदायिकता की समस्या को रहते हैं।

4. मनोवैज्ञानिक कारण

भारत में मुसलमान अल्पसंख्यक हैं तथा हिन्दू बहुसंख्यक हैं। राजनीतिज्ञो द्वारा मुस्लिम तुष्टीकरण व उनमें आर्थिक शोषण की भावना होने के कारण मुस्लिम व हिन्दू सम्प्रदाय में एक दूसरे के प्रति पूणा, द्वेव, विरोध' जन भावना, प्रतिभार बन गया हैं। यह सब मनोवैज्ञानिक लक्षण साम्प्रदायिकता के कारण हैं। साम्प्रदायिकता का यह कारण व्यक्ति के स्तर पर कार्य करता हैं।

5. साम्प्रदायिक संगठन

वर्तमान समय में विज्ञान के तीव्र विकास ने सामाजिक जीवन को भी काफी हद तक प्रभावित किया हैं। सब से आधुनिक यातायात के साधन, संचार के साधन, समाचार पत्र, प्रिटिंग प्रेस का तीव्र गति से विकास किया हैं। तभी से प्रत्येक धार्मिक समूह के अंर्तगत सक्रिय धार्मिक संगठन भी ग्राम, कस्वा, जिला, प्रान्त तथा अखिल भारतीय स्तर पर संगठित व्यवस्थित हो गये हैं जो अपने अपने मतावलम्बियों के प्रति भड़काने वाली भावना पैदा करते हैं। अपनी रक्षा के लिये हथियार एकत्र करते हैं। इस प्रकार के धार्मिक संगठन विभिन्न सम्प्रदायों के मध्य जातीय विद्वेष व हिंसा को बढ़ावा देते हैं। यह धार्मिक संगठन साम्प्रदायिक दंगों तनावों तथा संघर्षो को बढ़ावा देते हैं।

6. राजनैतिक कारण

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत में चुनावों में राजनेताओं द्वारा जातिवाद और साम्प्रदायिक भावना का सहारा लिया जाता रहा हैं। अनेक राजनैतिक दलों का तो निर्माण ही धर्म तथा साम्प्रदायिकता के आधार पर किया जाता हैं। ग्राम पंचायत से लेकर लोकसभा तक के चुनावों में धर्म तथा साम्प्रदायिकता के आधार पर उम्मीदवार खड़े किये जाते हैं तथा मत मतो जाते हैं। जीतने के बाद अपने सम्प्रदाय के प्रति अधिक निष्ठा असमानता व साम्प्रदायिक संघर्ष को जन्म देती हैं।

7. सामाजिक आर्थिक कारण

साम्प्रदायिकता की समस्या का एक प्रमुख कारण सामाजिक आर्थिक भी रहा हैं। भारत में आज भी गरीबी रेखा के नीचे 30 प्रतिशत से अधिक लोग निवास करते हैं। साथ ही अज्ञानता, अन्धविश्वास एवं शोषण की प्रवृत्ति आज भी विद्यमान हैं। सन् 1960 से 1998 तक हुये साम्प्रदायिक दंगों के परिस्थिति शास्त्रीय अध्ययनों से निष्कर्ष निकला कि अधिकांश दंगे नगर या कस्बे की निचली व गंदी बस्ती में गरीबों के बीच होते है। इन लोगों में अशिक्षा, अनगिनत, अन्धविश्वास, गन्दगी, बेरोजगारी, गरीबी, बीमारी आदि का बोलबाला रहता हैं। इन क्षेत्रों में रहने वाले सम्प्रदाय के राजनीतिक नेता तथा प्रभावी व्यक्ति सामाजिक आर्थिक व राजनीतिक उपेक्षा के आधार पर भड़काकर आर्थिक अधिकारों की प्राप्ति के लिये सरकार पर दबाव बनाने के लिये हिंसा करने को प्रेरित करते है।

6.5 साम्प्रदायिकता निराकरण के सुझाव

भारत में साम्प्रदायिकता की समस्या प्रगति व विकास के लिये अभिशाप हैं। यद्यपि यह समस्त विश्व के अनेक समाजों में देखने वालों को मिलती हैं। साम्प्रदायिकता विरोधी सम्मेलनों, राष्ट्रीय एकता समितियों तथा शांति समितियों के साथ हैं। सामाजिक विचारकों व राजनेताओं ने साम्प्रदायिकता के निवारण के लिये महत्वपूर्ण सुझाव दिये हैं–

1. साम्प्रदायिक संगठनों पर प्रतिबन्ध

साम्प्रदायिकता की समस्या को दूर करने के लिये सबसे पहले समाज में साम्प्रदायिकता का प्रचार प्रसार करने वाले संगठनों पर रोक लगानी चाहिये। संगठनों के नामों में हिन्दू ईसाई, मुसलमान, जैन, सिक्ख या ऐसे ही शब्दों के प्रयोग पर कानून द्वारा रोक लगा देनी चाहिये। जिनसे साम्प्रदायिकता की भावना का प्रसार होता हैं।

2. राष्ट्रीयता की शिक्षा

साम्प्रदायिकता की भावना को समाप्त करने के लिये शिक्षण संस्थानों में छात्रों को राष्ट्रीय भावना से ओत प्रोत मूल्यों की व्यावहारिक शिक्षा दी जानी चाहिये। शिक्षा के पाठ्यक्रम में साम्प्रदायिकता के दोष तथा हानियाँ बतानी चाहिये। वही शिक्षा के द्वारा पारस्परिक एकता, संगठन, राष्ट्रीय चरित्र निर्माण, राष्ट्रीय एकीकरण आदि का ज्ञान विद्यार्थियों को कराकर साम्प्रदायिकता को मिटाया जा सकता हैं।

3. चुनावों में साम्प्रदायिकता के प्रचार – प्रसार पर रोक

भारत में चुनावों के प्रचारों में साम्प्रदायिकता को उभारा जाता हैं जिससे अपने क्या में लाभ उठा सके। चुनावों में किसी भी प्रकार से साम्प्रदायिकता का जैसे – नारों. पोस्टरों. पेंप्लेटों फोटों, टेपरिकार्डरों फिल्मो आदि के रूप में उपयोग करने पर प्रत्याशी व राजनैतिक दल को गैर – सरकारी घोषित कर दिया जाना चाहिये।

4. नैतिक शिक्षा का प्रसार

सभी समाजों के शाश्वत नियम व धर्मो के मृत्यु हिंसा को समाज विरोधी तत्व मानते रहे हैं। कोई भी धर्म अपने अनुयायियों को हिंसा नहीं सिखाता। शिक्षण संस्थानों में प्रत्येक स्तर पर बच्चों. हवा व प्रौढ़ सदस्यों को यह नैतिक शिक्षा दी जानी चाहिये कि साम्प्रदायिकता समाज के लिये विघटनकारी हैं। नैतिक शिक्षा द्वारा संकीर्णता पृथक्करण, घृणा. द्वेष आदि को दूर करने के लिये विशेष पाठ्यक्रम तैयार किये जाने चाहिये।

5. धार्मिक कट्टरता फेलाने वाले संगठनों पर प्रतिबन्ध

समाज में साम्प्रदायिकता का प्रचार – प्रसार करने वाले संगठनों पर सरकार को कठोर कार्यवाही करते हुये प्रतिबन्ध लगाया जाना चाहिये। उन्हें सरकार द्वारा किसी भी प्रकार की सहायता व अनुदान नहीं दिया जाना चाहिये।

6. प्रशासनिक सुधार कार्यक्रम

सरकार द्वारा राष्ट्र विरोधी गतिविधियों में संलग्न व्यक्तियों, संस्थानों व व्यक्तियों की जनता के सहयोग से पहचान कर कडी सजा दी जानी चाहिये। साथ ही आकाशवाणी. समाचार पत्र, दूरदर्शन. चलचित्र, समाचार पत्र व पत्रिकाओं द्वारा साम्प्रदायिकता विरोधी प्रचार करना चाहिये। समाज में लोगों में एकता व समन्वय की भावना को समय – समय पर प्रसारित करने के लिये प्रशासन को विशेष अभियान चलाना चाहिये।

7. महापुरुषों के संदेश का प्रसार

भारत के.– समाज में एकता व राष्ट्रीयता को स्थापना करने के लिये अनेक महापुरुषों व राष्ट्रीय नेताओं ने अपना सन् जीवन स्थापित कर दिया। महात्मा गांधी, विनोबा भाव, सरदार वल्लभ भाई पटेल व जय प्रकाश नारायण आदि ने अपने विचारों व व्यवहार से पारस्परिक एकता व परस्पर लोगों में उत्पन्न करने के लिये अनेक कार्य किये। आज साम्प्रदायिकता की बढता हुई भावना को समाप्त करने के इन महापुरुषों के जीवन चरित्र पर अमल करना बहुत जरूरी है।

8. राष्ट्रीय एकता परिषद्

केन्द्रीय पर राष्ट्रीय एकता परिषद् का गठन साम्प्रदायिकता की समस्या को हल करने के लिये किया गया हैं। 1969 में यह तय किया गया कि देश के सभी राजनैतिक दलो को साम्प्रदायिक' सद्भावना पैदा करना चाहिये। इस परिषद् के द्वारा कदम उठाने के लिये कठोर कानूनी कार्यवाही करने के कहा जाना चाहिये।

6.6 साम्प्रदायिक हिंसा

साम्प्रदायिक हिंसा, विद्यार्थी आंदोलनों, श्रमिकों की हड़तालों, और किसानो के आंदोलन में हिंसा की समस्याओं और विशेषताओं से भिन्न है। साम्प्रदायिकता की अवधारणा के आधार पर हमें साम्प्रदायिक हिंसा को अन्य आंदोलनो, आतंकवाद, राज्य प्रतिरोध और विद्रोह में अन्तर करना चाहिये। यह अन्तर छः स्तरो पर देखा गया हैः जन संग्रह, हिंसा की मात्रा और तरीके , सम्बद्धता की मात्रा, आक्रमण का लक्ष्य, दंगों का एकायक भड़क उठना, नेतृत्व और दंगो से पीड़ित व्यक्तियों और परिणामो के अनुभव|

आंदोलनो के जनसंग्रह जुलूसों , प्रदर्शनों और घेरावों के रूप में विरोध के प्रकट करने और शिकायत एवं मांगो को प्रस्तुत करने के लिये किया जाता है। साम्प्रदायिक हिंसा में व्यक्तियों का संग्रहण दूसरे समुदाय के विरूद्ध किया जाता है। इसमें लोगों को पहले से कोई जानकारी नहीं मिलती, वे अचानक अनियत्रित होते हैं| साम्प्रदायिक हिंसा में के पीछे एक भावनात्मक अभिव्यक्ति होती है जो दंगों का रूप धारण कर लेती है।

हिंसा की मात्रा और हिंसा करने के तरीके भी आंदोलनों और साम्प्रदायिक दंगों में भिन्न-भिन्न होते हैं । आतंकवाद में जन समर्थन निष्क्रिय, अप्रकट और गुप्त होता है। यह मान कर कि राज्य विद्रोह असंभव हैं, कुछ ऐसी निष्क्रिय, सशस्त्र उग्रवादी गुट होते हैं जो योजनाबद्ध तरीकों से हिंसा का प्रयोग करते हैं। राज्य विद्रोह में जनसमर्थन राजनीतिक व्यवस्था में परिवर्तन लाने के लिए संगठित किया जाता है। इसके विपरीत साम्प्रदायिक हिंसा में जनसमर्थन सामाजिक व्यवस्था के प्रति रोष व्यक्त करने के लिए संगठित किया जाता है। राज्य विद्रोह में प्रशिक्षित गुट भाग लेते हैं जब कि साम्प्रदायिक दंगों में अप्रशिक्षित लोग लिप्त रहते हैं। राज्य विद्रोह में जनता में प्रचार शासन

के विरूद्ध होता है, जबकि साम्प्रदायिक दंगों में वह सामाजिक पक्षपात, सामाजिक उपेक्षा और सामाजिक एवं धार्मिक शोषण के विरूद्ध होता है।

सम्बद्धता की मात्रा भी साम्प्रदायिक हिंसा, आंदोलन आंतकवाद और राज्य विद्रोह में भिन्न होती है। साम्प्रदायिक दंगों की स्थिति में सम्बद्धता की ऊँची मात्रा, शत्रुता, तनाव और जनसंख्या के ध्रुवीकरण के कारण होती है। जबकि आंदोलन में वह स्वार्थ के युक्तिकरण पर आधारित है। आतंकवाद और विद्रोह में संबद्धता सक्रिय कार्यकर्ताओं और उनके नेताओं के बीच होती है; जनता में यह इसकी तुलना में कम होती है।

राज्य विद्रोह और आतंकवाद में आक्रमण का लक्ष्य सरकार होती है। आन्दोलनों में वह सत्ताधारी समूह होती है और साम्प्रदायिक हिंसा में 'शत्रु' समुदाय के लोग उसके लक्ष्य होते है। कभी-कभी आंदोलनों और साम्प्रदायिक दंगों में हिंसा का प्रयोग सरकारी सम्पत्ति को लूटने और जलाने में किया जाता है। असामाजिक तत्वों को आंदोलनों और साम्प्रदायिक दंगों में खुली छूट मिल जाती है, परन्तु आंतकवाद और राज्य विद्रोह में ऐसा नहीं होता। राज्य विद्रोह और आतंकवाद में जिन शस्त्रों का उपयोग होता है, वे आंदोलनों और साम्प्रदायिक झगड़ों में किये जाने शस्त्रों से अधिक आधुनिक और परिष्कृत होते हैं।

साम्प्रदायिक दंगों का एकायक भड़क उठना विशेष सामाजिक ढाँचे तक सीमित रहता है, जबकि राज्य विद्रोह और आंतकवाद में यह अनियत और अनिश्चित होता है। आंदोलनों में उपद्रव किन्हीं विशेष ढांचों को लेकर नही होते, अपितु वंचना और व्यक्तियों के परिवर्तनों के संगठन पर आधारित होते है।

आंतकवाद और राज्य विद्रोह और आंदोलनों में नेतृत्व आसानी से पहचाना जा सकता है परन्तु साम्प्रदायिक दंगों में हमेशा ऐसा नहीं होता | साम्प्रदायिक दंगों में ऐसा कोई नेतृत्व नहीं होता जो दंगों की स्थिति को नियंन्त्रित कर सके अथवा उसे रोक सके। दूसरी ओर आंदोलन, आंतकवाद और राज्य विद्रोह में जो कुछ होता है, वह नेताओं के अनुरूप होता है और स्थिति पर उनका प्रभावी नियंत्रण रहता है।

साम्प्रदायिक हिंसा के परिणाम होते हैं - तीव्र शत्रुता, पूर्वाग्रह और एक समुदाय के दूसरे समुदाय के प्रति पारस्परिक शक। आन्दोलनों में मानव हानि तुलनात्मक दृष्टि से कुछ कम होता है यद्यपि सम्पत्ति की कभी-कभी अधिक हानि हो जाती है जब आंदोलनों में समझौता हो जाता है तो सरकारी ऐजेन्सियों के विरूद्ध बैर भाव भी समाप्त हो जाता है और बदले की भी भावना कुछ समय पश्चात चली जाती है। आंतकवाद में पीड़ितों में से अधिकांश निर्दोष होते है। वे उग्रवादियों के प्रति निष्क्रिय रहते हैं और निष्क्रिय व्यवहार से वे स्वयं को अधिक सुरक्षित समझते हैं।पीड़ित व्यक्तियों में प्रतिशोध की भावना हो ही नहीं सकती क्योंकि उग्रवादि गुमनाम होते हैं और संगठित रूप से परिष्कृत शस्त्रों से लैस होते हैं। राज्य-विद्रोहों में पीड़ित व्यक्तियों में अधिकाश सुरक्षा बलो के सदस्य या सरकारी कर्मचारी होते हैं जो राज्य विद्रोह के लिए प्रत्युपायों में सहायता करते हैं।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि साम्प्रदायिक हिंसा प्रमुख रूप से घृणा, द्वेष और प्रतिशोध पर आधारित है।

6.6.1 साम्प्रदायिक दंगों की विशेषताएं

देश में हुए साम्प्रदायिक दंगों के अध्ययनों ने यह उद्घाटित किया है कि;

(1)साम्प्रदायिक दंगे धर्म की तुलना में राजनीतिक से अधिक प्रेरित होते हैं। मतदान कमीशन ने भी, जिसने मई 1970 में महाराष्ट्र में हुए दंगो की छानबीन की, इस पर बल दिया था कि ''साम्प्रदायिक तनावो के वास्तुकार और निर्माता सम्प्रदायवादी और राजनीतिज्ञों का एक वर्ग होता है- वे अखिल भारती और स्थानीय नेता को अपनी

राजनीतिज्ञ स्थिति को सुदृण बनाने, अपनी प्रतिष्ठा को बढ़ाने, और अपनी सार्वजनिक छवि को बनाये रखने के लिये हर अवसर का लाभ उठाना चाहते हैं और इसके लिए वे हर घटना को साम्प्रदायिक रंग देते हैं और इस प्रकार जनता के आगे वे अपने आप को अपने समुदाय के धर्म और अधिकारो के हिमायती के रूप में प्रस्तुत करते है "।

(2) राजनीतिक स्वार्थो के अलावा आर्थिक स्वार्थ को भी साम्प्रदायिक झगड़ों को भड़काने में प्रबल भूमिका अदा करते हैं।

(3) साम्पदायिक दंगे दक्षिण और पूर्वी भारत की अपेक्षा उत्तर भारत में अधिक आम हैं।

(4) ऐसे शहरों, जिनमे साम्प्रदायिक दंगे एक या दो बार हो चुके हैं, वहाँ इसके पुनः होने की सम्भावना ऐसे शहरो की अपेक्षा , जहां कभी दंगे नहीं हुए अधिक प्रबल होती है।

(5) अधिकांश साम्प्रदायिक दंगे धार्मिक त्यौहारों के अवसर पर होते हैं।

(6) दंगों में घातक हथियारों का उपयोग बढ़ रहा है।

(7) दंगे आम तौर पर शहरों में ही होते हैं तथा गांव इनसे मुक्त रहते है। प्रोफेसर आसुतोष वाष्णेय के अध्ययन के अनुसार 1950 के बाद से हिन्दु-मुस्लिम दंगों में गांवों का हिस्सा 3.5 प्रतिशत है जबकि शहरी क्षेत्रों का हिस्सा 94.03 प्रतिशत है।

6.6.2 साम्प्रदायिक हिंसा के कारण

साम्प्रदायिक हिंसा के कारणों को समझने के लिए दो उपागमों का उपयोग किया जा सकता है:-

(क) सामाजिक ढांचों की कार्यप्रणाली का निरीक्षण करना,

(ख) साम्प्रदायिक हिंसा के उदभव की प्रक्रिया के कारण पता करना।

पहले प्रकरण में साम्प्रदायिक हिंसा को सामाजिक की कार्यप्रणाली या समाज में नियोजित या अनियोजित या चेतन या अचेतन तरीके महत्वपूर्ण होते हैं जो कि साम्प्रदायिक हिंसा को जीवित रखते हैं। साम्प्रदायिक हिंसा को प्रथम प्रकरण में एक 'तथ्य' के रूप में लिया जा सकता है या एक 'निश्चित' घटना समझा जाता है और फिर उसके औचित्य ढूँढे जाते हैं, जबकि दूसरे में साम्प्रदायिक हिंसा के उद्भव के लिये सहसंबंधों को ढूँढ़ने का प्रयास किया जाता है ताकि उसका एक प्रक्रिया के रूप में अध्ययन किया जा सके।

विभिन्न विद्वानों ने साम्प्रादायिक हिंसा की समस्या का विभिन्न परिप्रेक्ष्यों से अध्ययन किया है और उसके होने के विभिन्न कारण बताते हैं और उसे रोकने के लिये विभिन्न उपाय सुझाए हैं। मार्क्सवादी विचाराधारा साम्प्रदायिकता का संबंध आर्थिक वंचन और बाजार की ताकतों का एकाधिकार नियंत्रण को प्राप्त करने के लिए धनवान और निर्धन के बीच वर्ग-संघर्ष से बतलाती है। कुछ राजनीतिज्ञ इसे सत्ता का संघर्ष मानते हैं। समाजशास्त्री इसे सामाजिक तनावों और सापेक्षिक वंचनो से उत्पन्न हुई घटना कहते है। धार्मिक विशेषज्ञ इसे हिंसक कट्टरवादियों और अनुकरण की शक्ति का प्रतीक कहकर पुकारते है।

बहुकारक उपागम में दस प्रमुख कारकों को साम्प्रदायिकता के कारण बताये गये हैं, ये कारक हैं - सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, मनोवैज्ञानिक, प्रशासनिक, ऐतिहासिक, स्थानीय और अन्तर्राष्ट्रीय।

सामाजिक कारक - सामाजिक कारको में सामाजिक परंपराएं, जाति एवं वर्ग-अहम, असमानता और धर्म पर आधारित सामाजिक स्तरीकरण सम्मिलित है|

धार्मिक कारक - धार्मिक कारकों में धार्मिक नियमाचारों और धर्मरिपेक्ष मूल्यों में गिरावट, संकीर्ण की साम्प्रदायिक विचाराधारा सम्मिलत है|

राजनीतिक कारक - राजनीतिक कारको में धर्म पर आधारित राजनीति, धर्म शासित राजनीतिक संस्थाएं, राजनीतिक हस्तक्षेप, साम्प्रदायिक हिंसा का राजनीतिक औचित्य और राजनीतिक नेतृत्व की असफलता भी सम्मिलित है|

आर्थिक कारक - आर्थिक कारकों मे आर्थिक शोषण और पक्षपात, असन्तुलित आर्थिक विकास, प्रतिस्पर्धा का बाजार, अप्रसरणशील आर्थिक व्यस्था, श्रमिकों का विस्थापन और असमावेशन और खाड़ी देशों से आयें हुए पैसे का प्रभाव भी सम्मिलित है|

वैधानिक कारक - कानूनी कारकों में सम्मिलित हैं, समान कानून सहिंता, संविधान में कुछ समुदायों के लिये विशेष प्रावधान और रियायतें, कुछ राज्यों को (जैसे कश्मीर) विशेष दर्जा, आरक्षण नीति और विभिन्न समुदायों के लिये विशेष कानून|

मनोवैज्ञानिक करक - मनोवैज्ञानिक कारकों में सम्म्लित हैं, सामाजिक पूर्वाग्रह, रूढ़िबद्ध अभिवृत्तियां, अविश्वास, दूसरे समुदाय के प्रति विद्वेष और भावशून्य, अफवाहें, भय का मानस, और जनसम्पर्क के साधनों का गलत जानकारी देना या गलत अर्थ लगाना या अयर्थाथ रूप प्रस्तुत करना|

प्रशासनिक कारक - प्रशसासनिक कारकों में शामिल हैं पुलिस और दूसरी प्रशासनिक इकाईयों का समन्वयन का अभाव, कुसज्जित और कुप्रशिक्षित पुलिस कर्मचारी, गुप्तचारी, गुप्तचर विभागों की अकुशल कार्यप्रणाली, पक्षपाति पुलिस के सिपाही, की ज्यादातियां और निष्क्रियता और अकुशल पी.ए.सी.|

ऐतिहासिक कारक - ऐतिहासिक कारकों में शमिल हैं, विदेशी आक्रमण, धार्मिक संस्थाओं की क्षति, धर्म परिवर्तन के लिए प्रयत्न, अपनिवेशीय शासकों की फूट डालो और राज करो की नीति, विभाजन का मानसिक आघात, पिछले साम्प्रदायिक दंगें, जमीन, मंदिर और मुस्जिद के पुराने झगड़ें|

स्थानीय कारक - स्थानीय कारकों में सम्मिलत हैं, धार्मिक जुलूस, नारेबाजी, अफवाहें, जमीन के झगड़े, स्थानीय असामाजिक तत्व और गुटों में प्रतिद्वन्दिता

अंतर्राष्ट्रीय कारक - अंतर्राष्ट्रीय कारकों में सम्मिलित हैं, दूसरे देशों द्वारा दिये जा रहे प्रशिक्षण और वित्तीय सहायता, भारत की एकता को भंग करने और कमजोर बनाने के लिए दूसरे देशो द्वारा षडयंत्र रचाना और फिर साम्प्रदायिक संगठनों का समर्थन देना।

इन उपागमों के विपरीत, हमें एक ऐसे समष्टिपरक उपागम की आवश्यकता है जिसके द्वारा साम्प्रदायिक हिंसा को समझा जा सके।

6.7 सारांश

उपरोक्त इकाई में सर्वप्रथम साम्प्रदायिकता के अर्थ के विषय में अध्ययन किया गया| इसके पश्चात् साम्प्रदायिकता की विशेषताओं, कारणों तथा इसके निराकरण के उपायों का अध्ययन किया गया | साम्प्रदायिकता से जुड़ी हिंसा और दंगों के बारे में अध्ययन किया। साम्प्रदायिक दंगों की विशेषताओं तथा कारणों का अध्ययन किया।

6.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. साम्प्रदायिकता से क्या आशय है? वर्णन कीजिए।
2. साम्प्रदायिकता की विशेषताओं का वर्णन कीजिए |
3. साम्प्रदायिकता के निराकरण हेतु सुझाव दीजिए |
4. साम्प्रदायिक हिंसा क्या है?
5. साम्प्रदायिक हिंसा के कारणों का वर्णन कीजिए।

6.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. सिंह, अरुण कुमार सिंह, समाजशास्त्र की मूलभूत अवधारणायें, न्यू रायल बुक कम्पनी, लखनऊ, 2009।
2. हसनैन, नदीम, समकालीन भारतीय समाज: एक समाजशास्त्रीय परिदृश्य, भारत बुक सेंटर, लखनऊ, 2007।
3. चन्द्र, एस.एस. (2002) भारत में सामाजिक समस्याएं: कनिष्का पब्लिशर्स: नई दिल्ली
4. दोषी, एस. एल. एवं जैन, पी.सी. (2005) भारतीय समाज, नेशनल पब्लिसिंग हाउसः जयपुर
5. शर्मा, आर.एन.एवं. शर्मा, आर. के. (2002) सामाजिक विघटन, एटलांटिक पब्लिशर्स एवं डिस्ट्रीब्यूटस
6. लवानिया, एम.एम. एवं राठौड़, ए.एस. (1999) भारतीय समाज, रिसर्च पब्लिकेशनः जयपुर
7. गुप्ता, एम.एल. एवं शर्मा, डी.डी. (2004) समकालीन भारतीय सामाजिक विचारक एवं सामाजिक आन्दोलन, साहित्य भवन पब्लिकेशनः आगरा
8. लवानिया, एम.एम. एवं पडियार, जी. (2010) भारत में सामाजिक समस्यायें, रिसर्च पब्लिकेशनः जयपुर
9. गुप्ता, एम. एल. एवं शर्मा डी.डी., मानव समाज, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा, 2001।
10. आहूजा, राम, सामाजिक समस्याऐं, रावत पब्लिकेशन्स, द्वितीय संस्करण, जयपुर एवं नई दिल्ली, 2000।
11. अहूजा, आर. एवं. अहूजा एम. (2008) समाजशास्त्र: विवेचना एवं परिप्रेक्ष्य, रावत पब्लिकेशन्सः जयपुर
12. चन्द्र, एस.एस. (2002) भारतीय सामाजिक संरचना, कनिष्का पब्लिशर्स: नई दिल्ली
13. सिंह, अरुण कुमार सिंह, समाजशास्त्र की मूलभूत अवधारणायें, न्यू रायल बुक कम्पनी, लखनऊ, 2009।
14. हसनैन, नदीम, समकालीन भारतीय समाज: एक समाजशास्त्रीय परिदृश्य, भारत बुक सेंटर, लखनऊ, 2007।

इकाई – 7

जातिवाद

इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य

7.1 प्रस्तावना

7.2 जातिवाद की अवधारणा

7.3 जातिवाद के विकास के कारक

7.4 जातिवाद के दुष्परिणाम

7.5 जातिवाद के निराकरण के उपाय

7.6 जातिवाद के निराकरण हेतु किये गये प्रयत्न

7.7 सारांश

7.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

7.9 संदर्भ ग्रंथ

7.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप –

- जातिवाद की अवधारणा समझ सकेंगे।
- जातिवाद पर भारतीय समाज से सम्बद्ध मुद्दे समझ सकेंगे।
- जातिवाद के विकास के कारक समझ सकेंगे।
- जातिवाद के परिणाम समझ सकेंगे।
- जातिवाद के निराकरण के उपाय समझ सकेंगे।

7.1 प्रस्तावना

जातिवाद वह संकुचित भावना है जिसके कारण व्यक्ति समाज व राष्ट्र को विशेष महत्व नहीं देकर अपने जाति–हितों को सर्वोपरि मानता है और अपनी जाति के स्वार्थों की दृष्टि से सोचता है। जातिवाद ने जातियों को आन्तरिक दृष्टि से शक्तिशाली बनाने में योगदान दिया है । वर्तमान में जाति के नाम पर शिक्षण संस्थाएं, धर्मशालाएं, औद्योगिक संस्थान, औषधालय, मंदिर एवं अन्य संगठन पाये जाते हैं। इन संगठनों के माध्यम से जाति–विशेष की स्थिति को सामाजिक संस्तरण की प्रणाली में ऊँचा उठाने का प्रयत्न किया जाता है। ये संगठन अपनी जाति के लोगों को विशेष सुविधाएं प्रदान कर उन्हें अपनी सामाजिक स्थिति को उन्नत करने का अवसर देते हैं। आज व्यक्ति की सामाजिक स्थिति के निर्धारण में जन्म और जाति का महत्व तुलनात्मक रूप से कम होता जा रहा है। अब धन, उच्च शिक्षा, उच्च नौकरी तथा राजनैतिक शक्ति आदि के आधार पर व्यक्ति की सामाजिक

प्रतिष्ठा का निर्धारण होने लगा है। ऐसी स्थिति में अपनी जाति के सदस्यों को अपनी सामाजिक स्थिति को ऊँचा उठाने के अवसर प्रदान कर सामाजिक संस्तरण की प्रणाली में जाति को ऊँचा उठाया जा सकता है। इसी कारण उच्च सामाजिक स्थिति प्राप्त व्यक्ति अपनी ही जाति के लोगों को उच्च शिक्षा, राजकीय एवं अन्य नौकरियों में प्रवेश, धन कमाने के अवसर तथा राजनीतिक शक्ति प्राप्त करने का मौका प्रदान करना चाहते हैं। आज विभिन्न जातियाँ इसी दिशा में प्रयत्नशील है तथा जातीय संगठनों के निर्माण में लगी हुई है, अपनी जाति के लोगों को सब तरह की सुख–सुविधाएं पहुँचा रही हैं, चाहे इससे राष्ट्रीय अहित ही क्यों न हो।

7.2 जातिवाद की अवधारणा

जातिवाद एक जाति के सदस्यों की वह संकुचित भावना है जो समाज या राष्ट्र के सामान्य हितों का ध्यान नहीं रखते हुए अपनी **ही** जाति के अन्य सदस्यों के हितों को बढ़ावा देने, उनकी सामाजिक स्थिति को उन्नत करने और उन्हें आगे बढ़ाने के अवसर प्रदान करने के लिए प्रेरित करती है। जातिवाद वह भावना है जो एक जाति के सदस्यों को अपनी ही जाति वालों के उत्थान, एकता एवं सामाजिक स्थिति को ऊँचा उठाने में मदद करती है। इस भावना के कारण एक जाति के सदस्यों की निष्ठाएं अपनी जाति के लोगों तक ही केन्द्रित हो जाती है, वे अपनी जाति के स्वार्थ के दृष्टिकोण से ही सोचते हैं। उनमें अपनी जाति के लोगों के प्रति तो अपनेपन की भावना पाई जाती है, किन्तु अन्य जाति के लोगों के प्रति पृथक्करण की।

जातिवाद की संकुचित भावना के कारण व्यक्ति जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में अपनी जाति के सदस्यों को ही प्राथमिकता देने का प्रयास करते हैं। के. एन. शर्मा का कहना है कि 'जातिवाद या जाति–भक्ति एक ही जाति के व्यक्तियों की वह भावना है जो देश के या समाज के सामान्य हितों का ख्याल न रखते हुए केवल अपनी जाति के सदस्यों के उत्थान, जातीय एकता और जाति की सामाजिक प्रस्थिति को सुदृढ़ करने के लिए प्रेरित करती हों। " इस परिभाषा में निम्न दो पक्षों पर अधिक बल दिया गया है :–

1. मनोवैज्ञानिक पक्ष – इसमें व्यक्ति की भावनाएं आती हैं।
2. व्यावहारिक पक्ष – इसमें उसकी क्रियाएँ आती है।

जातिवाद से प्रभावित व्यक्ति अपनी जाति के प्रति न केवल तीव्र भक्ति भावना रखता है बल्कि अपनी क्रियाओं द्वारा भी जाति के अन्य लोगों के स्वार्थ की चिन्ता करता है, उन्हें उच्च शिक्षा दिलाने, नौकरी और व्यापार में प्राथमिकता देने और राजनीति में आगे बढ़ाने का भी प्रयत्न करता है। उसके ऐसा करने से जाति विशेष में तो आन्तरिक दृढ़ता अवश्य बढ़ती है, परन्तु अन्य जातियों के न्यायपूर्ण हितों की पूर्ति में बाधा पहुँचती है।

काका कालेलकर ने जातिवाद के सम्बन्ध में लिखा है कि जातिवाद अन्ध और परिमित समूह भक्ति है, जो न्याय के सामान्य सामाजिक मानदण्डों के औचित्य, नैतिकता तथा सार्वभौमिक भ्रातृत्व की उपेक्षा करती है।

के.एम. पन्निकर का कहना है कि राजनीतिक भाषा में उप जाति के प्रति निष्ठा का भाव ही जातिवाद है। जब तक उप जाति की अवधारणा पाई जाती है तब तक जातिवाद अपरिहार्य है क्योंकि यह एक ऐसी स्थायी निष्ठा है जो हिन्दुओं ने उत्तराधिकार में प्राप्त की है। इस प्रकार जातिवाद वह संकीर्ण भावना है जो एक जाति के सदस्यों को अन्य लोगों के सामान्य हितों की चिन्ता नहीं करते हुए अपनी ही जाति के लोगों को जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में प्राथमिकता देने को प्रेरित करती है।

7.3 जातिवाद के विकास के कारक

जातिवाद के विकास में अनेक कारकों का योग रहा है, जिनमें से प्रमुख निम्न है –

1. विवाह पर प्रतिबन्ध

इसके अन्तर्गत जाति अन्तर्विवाह की प्रथा आती है। इस प्रथा में अपने ही जातीय समूह में विवाह सम्बन्ध स्थापित करना आवश्यक है। वैवाहिक क्षेत्र मे अपनी ही जाति या उपजाति तक सीमित होने की वजह से जीवन साथी के चुनाव की समस्या आती है। ऐसी स्थिति में लोगों का यह प्रयास रहता है कि अपनी ही जाति वालों को विभिन्न क्षेत्रों में आगे बढ़ने और नौकरियों तथा सुख–सुविधाओं को प्राप्त करने का अवसर मिले।

2. प्रचार एवं यातायात के साधनों में वृद्धि –

यातायात एवं सन्देशवाहन के साधनों ने जातिवाद को राष्ट्रव्यापी बना दिया है। एक ही जाति के लोग देश के विभिन्न कोनों तक पहुँच गये हैं। आज विभिन्न जातियों के प्रान्तीय के साथ–साथ अखिल भारतीय सम्मेलन होते हैं, जिनमें अपनी जाति के सदस्यों के हितों के संरक्षण पर विचार विमर्श किया जाता है। विभिन्न जातियों के पत्र–पत्रिकाएं निकलने लगे हैं जिनके फैलाव का क्षेत्र व्यापक है। जातीय आधार पर बने ऐसे संगठनों को रूडाल्फ व रूडाल्फ ने पैरा कम्यूनिटीज नाम दिया है।

3. अपनी जाति की प्रतिष्ठा बढ़ाने के लिए –

जातीय प्रतिष्ठा को ऊँचा उठाने और सामाजिक संस्तरण की प्रणाली में अपनी जाति की स्थिति को उन्नत करने की इच्छा ने जातिवाद के विकास में विशेष सहायता पहुँचायी है। आज अर्जित प्रस्थिति का महत्व बढ़ता जा रहा है इसी कारण जाति के सदस्यों को नवीन पैमानों के अनुसार विभिन्न क्षेत्रों में आगे बढ़ने के अवसर प्रदान करना आवश्यक हो गया है। इसी कारण व्यक्ति संकुचित दृष्टिकोण से सोचता और व्यवहार करता है।

4. जजमानी व्यवस्था का विघटन –

जजमानी प्रथा के टूटने से जातिवाद को प्रोत्साहन मिला है। जजमानी प्रथा ने उन्नीसवीं शताब्दी के पहले तक विभिन्न जातियों को कार्यात्मक आधार पर एकता के सूत्र में बांध रखा था। प्रत्येक जाति अपनी विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अन्य जातियों पर निर्भर थी। जातियाँ एक–दूसरे के लिए कुछ आवश्यक सेवाएं प्रदान करती थी तथा बदले में कुछ वस्तुएं प्राप्त करती थी। यह पारस्परिक निर्भरता प्रत्यक्ष और परम्परागत थी। आज जजमानी प्रथा के टूटने से विभिन्न जातियों के उदग्र सम्बन्ध समाप्त हो चुके हैं और एक जाति के सदस्यों के पारस्परिक सम्बन्धों, जिन्हें क्षैतिज सम्बन्ध कहते हैं, में दृढ़ता आयी है। इसके फलस्वरूप जातिवाद को प्रोत्साहन मिला है।

5. संस्कृतीकरण –

संस्कृतीकरण की प्रक्रिया का उल्लेख करते हुए समाजशास्त्री एम.एन. श्रीनिवास ने लिखा है कि संस्कृतीकरण वह प्रक्रिया है जिसमें एक निम्न जाति, ब्राह्मण, क्षत्रिय या प्रभु जाति के खान–पान, रहन–सहन, देवी–देवता, प्रथाओं, रीति–रिवाजों, वेश–भूषा, व्यवहार और जीवन जीने के ढंग को अपनाती है। " एक या दो पीढ़ी पहले वह अपने सम्बन्ध किसी ऊँची जाति से बताती है, बाल–विवाह करना प्रारम्भ कर देती है। विधवा विवाह पर रोक लगा देती है, मांस और मदिरा का त्याग कर देती है। ऐसा करके वह निम्न जाति सामाजिक संस्तरण में ऊँचा उठना चाहती है। यह कार्य जाति के किसी एक या दो व्यक्तियों द्वारा नहीं वरन् सम्पूर्ण समूह द्वारा एक साथ होता है। संस्कृतीकरण करने वाली जाति में जातिवाद की भावना पैदा होती है, वह अन्य निम्न जातियों से स्वयं को श्रेष्ठ समझने लगती है। उच्च जातियाँ संस्कृतीकरण करने वाली जाति 'की नयी स्थिति को स्वीकार नहीं करती। इसका परिणाम उच्च एवं संस्कृतीकरण करने वाली जाति के बीच संघर्ष के रूप में होता है। यह संघर्ष जातिवाद को और अधिक बढ़ावा देता है।

6. औद्योगिक विकास :

औद्योगिक विकास ने जातिवाद को बढ़ाने में योग दिया है। औद्योगीकरण के कारण अनेक नवीन व्यवसायों का विकास हुआ है जिनका किसी जाति विशेष के साथ कोई सम्बन्ध नहीं पाया जाता। आज विभिन्न

जाति के व्यक्ति एक ही व्यवसाय में और एक ही जाति के लोग भिन्न–भिन्न व्यवसायों में लगे हुए हैं। औद्योगीकरण के कारण परिवार तथा जाति के वंशानुगत पेशों को चोट पहुँची है। परिणामस्वरूप आर्थिक सुरक्षा समाप्त हो गयी है। जनसंख्या में तेजी से वृद्धि साथ ही औद्योगिक विकास की धीमी गति के कारण लोगों को योग्यतानुसार नौकरियाँ प्राप्त करने के अवसर नहीं मिले हैं। इस स्थिति में जाति के द्वारा अपने सदस्यों को आर्थिक सुरक्षा प्रदान करने हेतु लोग अपनी ही जाति के लोगों को उच्च पद प्राप्त करने के अवसर देना चाहते हैं।

7. नगरीकरण –

नगरों की दशा ने भी जातिवाद को प्रोत्साहित किया है। नगरों में विभिन्न जातियों, धर्मों, संस्कृतियों तथा आर्थिक स्तर के लोग पाये जाते हैं। यहाँ विभिन्न स्वार्थों के आधार पर बने संगठन भी दिखलाई पड़ते हैं। ऐसी स्थिति में जाति पीछे क्यों रहती? नगरों में घनिष्ठ एवं दृढ़ समूह के रूप में जातिय संगठन बनने लगे जो अपनी जाति के लोगों की स्वार्थ पूर्ति के कार्य में लग गये। नगरों में अनेक जातीय संगठन पाये जाते हैं।

8. जातियों का विकास

जातियों के विभेदीकृत विकास ने जातिवाद को प्रोत्साहित करने में सहायता पहुँचायी है। कुछ जातियों को विशेषाधिकार प्राप्त रहे हैं जबकि कुछ अनेक नियोग्यताओं से पीड़ित रही है। ऐसी स्थिति में कुछ जातियों को उच्च शिक्षा प्राप्त करने, उच्च नौकरियों में आने तथा धन कमाने एवं अपनी सामाजिक स्थिति को ऊँचा उठाने के विशेष अवसर मिले हैं। इसके परिणामस्वरूप कुछ जातियों ने आर्थिक व राजनीतिक शाक्ति प्राप्त कर ली जबकि कई जातियों को इससे वंचित रहना पड़ा। कुछ जातियाँ अपने परम्परागत व्यवसायों में ही लगी रही, उन्हें आर्थिक दृष्टि से प्रगति करने और अपने जीवन स्तर को ऊँचा उठाने का मौका नहीं मिला। इस स्थिति ने विभिन्न जातियों में कटुता को बढ़ाया है परिणामस्वरूप जातीय संगठन दृढ़ हुये हैं। विभिन्न जातियों के उदग्र सम्बन्ध कमजोर और क्षेतिज सम्बन्ध मजबूत हुए हैं। इस स्थिति ने लोगों को अपनी जाति या उपजाति के संकुचित स्वार्थ के दृष्टिकोण से सोचने के लिए प्रेरित किया है।

9. जातीय संगठन –

जातिवाद को विकसित करने में जातीय संगठनों ने भी महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। आज अनेक जातियों के क्षेत्रीय एवं राष्ट्रीय संगठन बन गये हैं। इन जातीय संगठनों की अपनी पत्र पत्रिकाएं प्रकाशित होती है, सम्मेलन एवं गोष्ठियां होती है, चुनाव में व्यक्ति विशेष को ही मत देने पर जोर दिया जाता है। अपनी जाति के सदस्यों को संगठित करने एवं उनके हितों की रक्षा के प्रयत्न भी जातीय संगठन द्वारा किये जाते हैं।

10. राजनीति –

प्रजातन्त्र में वोट का महत्व होता है, वोट लेने के लिए लोगों की जातीय भावनाओं को उभारा जाता है। जातीय बहुलता के आधार पर उम्मीदवार का चयन किया जाता है, चुनाव में जाति के नाम पर वोट मांगे और दिये जाते हैं। इस प्रकार राजनीति ने जातिवाद को बढ़ावा दिया है।

7.4 जातिवाद के दुष्परिणाम

जातिवाद के परिणामस्वरूप अनेक गम्भीर समस्याएँ उत्पन्न हुई हैं जो निम्नानुसार हैं 1 – **जातिवाद प्रजातन्त्र के लिए घातक –**

स्वतंत्रता के बाद भारत ने प्रजातन्त्र को अपनाया। स्वतंत्र भारत के संविधान के अनुच्छेद 15(1) में कहा गया है कि राज्य किसी नागरिक के साथ धर्म, मूल, वंश, जाति, लिंग, जन्म आदि के आधार पर कोई भेदभाव नहीं करेगा, किन्तु जातिवाद प्रजातन्त्र के सिद्धान्तों के विरूद्ध है।

प्रजातन्त्र का अर्थ है जनता के लिए जनता द्वारा जनता का शासन। यह स्वतंत्रता, समानता एवं भाई–चारा पर आधारित है। प्रजातन्त्र में प्रत्येक व्यक्ति के विकास के पूर्ण अवसर उपलब्ध होते हैं, किसी भी व्यक्ति के साथ ऊँच–नीच का भेदभाव नहीं किया जाता, सभी को समान समझा जाता है। भाईचारे में समानता स्वाभाविक है। प्रजातन्त्र में सभी प्रकार के धर्म, लिंग, रंग, आयु, प्रजाति आदि से सम्बंधित लोगों का सहयोग, सहायता एवं त्याग अपेक्षित है, उनके बिना प्रजातन्त्र सफल नहीं हो सकता।

जातिवाद अप्रजातांत्रिक है, यह प्रजातन्त्र के तीनों मूल सिद्धान्तों पर प्रहार करता है। जातिवाद में ऊँच नीच की भावना पाई जाती है। जाति में व्यक्ति की सामाजिक स्थिति का निर्धारण जन्म से होता है, इसमें विवाह, शिक्षा, व्यवसाय सभी का क्षेत्र निश्चित है। जातिवाद गुणों पर नहीं उसके जन्म पर जो देता है, जबकि प्रजातंत्र व्यक्ति का मूल्यांकन उसके गुणों के आधार पर करता है। जातिवाद संकुचित निष्ठा, अन्ध भक्ति एवं पक्षपात पर आधारित है। जातिवाद प्रजातंत्र की तरह समानता पर नहीं बल्कि जन्म से ही असमानता पर आधारित है। एक निम्न जाति में जन्म लेने वाला व्यक्ति चाहे कितना ही गुणी शिक्षित एवं दक्ष क्यों न हो, वह उच्च जाति के व्यक्ति के समकक्ष नहीं माना जायेगा। विभिन्न जातियों के बीच असमानता अपनाये जाने के कारण जातिवाद में भाई चारे की भावना का अभाव पाया जाता है। जातीय भेदभाव के आधार पर जातीय तनाव व द्वेष, विषमता एवं घृणा पैदा होती है।

जातिवाद के प्रभाव के कारण ही व्यक्ति सम्पूर्ण समाज एवं राष्ट्र के हित में नहीं सोच पाता तथा केवल अपनी जाति के लोगों को सब प्रकार की सुख–सुविधाएँ तथा राजनीतिक शक्ति प्रदान करना चाहता है। चुनावों में जाति के आधार पर वोट लिये और दिये जाते हैं। राजनैतिक दल उम्मीदवारों का चुनाव करते समय क्षेत्र विशेष का बहुसंख्यक जाति का विशेष रूप से ध्यान रखते हैं। एम.एन. श्रीनिवास ने मैसूर दक्षिण भारत में स्थित क्षेत्र का उदाहरण देते हुए लिखा है कि यहां पंचायत के चुनावों से लेकर राज्य मंत्रियों एवं सचिवों तक की नियुक्तियों में जातीय आधार अपनाया जाता है। धीरे–धीरे जातिवाद का विष राजनीतिक, आर्थिक एवं सामाजिक सभी क्षेत्रों में फैल रहा है। आज जातीय निष्ठा में वृद्धि हुई है तथा सामाजिक व राष्ट्रीय हितों का तिलांजली दी गई है।

2– राष्ट्रीयता के विकास में बाधा –

जातिवाद के कारण छोटे–छोटे जातीय समूह संगठित हो जाते हैं जिससे व्यक्ति की सामुदायिक भावना बहुत अधिक संकुचित हो जाती है। वह राष्ट्रीय दृष्टिकोण से विचार नहीं करके जातिगत कल्याण की दृष्टि से सोचता है। समाज के सैकड़ों–हजारों छोटे–छोटे समूहों में विभाजित हो जाने और अपनी जाति या उपजाति को सर्वोपरि समझने से स्वस्थ राष्ट्रीयता के विकास एवं राष्ट्रीय एकीकरण में बाधा पैदा होती है। जातिवाद के कारण संविधान की धारा 15(1) की अवहेलना होती है जिसमें बताया गया है कि राज्य किसी के साथ किसी भी आधार पर कोई भेदभाव नहीं करेगा।

3 – औद्योगिक कुशलता में बाधा –

आज देश में अनेक उद्योग धन्धों का विकास होता जा रहा है जिनमें योग्य एवं प्रतिभाशाली लोगों को उच्च पदों पर नियुक्त करने की आवश्यकता है। बड़े–बड़े उद्योगों में लोग अपनी ही जाति के लोगों को उच्च पदों पर आने का अवसर देते हैं। ऐसी स्थिति में औद्योगिक कुशलता में कमी आती है और श्रेष्ठ प्रतिभाओं का लाभ समाज को नहीं मिल पाता।

4 – नैतिक पतन –

जातिवाद कुछ सीमा तक नैतिक पतन के लिए भी उत्तरदायी है। जातिवाद की भावना व्यक्ति को पक्षपात पूर्ण व्यवहार के लिए प्रेरित करती है। अनेक नेता, मंत्री तथा उच्च अधिकारी अपनी जाति के लोगों के साथ

पक्षपात करते हैं, भाई–भतीजेवाद को प्रोत्साहन देते हैं। वे सभी सुविधाएं या लाभ अपनी जाति के लोगों को पहुंचाने का प्रयत्न करते हैं। इससे राजनीति एवं प्रशासन के क्षेत्र में भ्रष्टाचार को बढ़ावा मिला है।

5 – भेदभाव को बढ़ावा

जातिवाद व्यक्ति–व्यक्ति के बीच भेदभाव की दीवार खड़ी कर देता है। व्यक्ति अपनी जाति से ऊपर उठकर समाज, राष्ट्र और मानवता के दृष्टिकोण से सोच ही नहीं पाता।

6 – गतिशीलता में बाधक

जाति व्यक्ति की गतिशीलता में बाधक रही है। ज्यादा धन कमाने, शिक्षा प्राप्त करने तथा प्रशिक्षण के लिए यह जरूरी है कि व्यक्ति अपना मूल निवास छोडकर दूसरी जगह जाये किन्तु जातीय बन्धन व प्रेम अपना घर छोड़ने में बाधा पैदा करते हैं। एक जाति का व्यक्ति दूसरी जाति के व्यवसायों में दक्ष होने पर भी जातिवाद की भावना के कारण उन्हें ग्रहण नहीं कर पाता है।

7 – भ्रष्टाचार –

जातिवाद की भावना ने सभी क्षेत्रों में भ्रष्टाचार एवं भाई–भतीजेवाद को जन्म दिया है। लोगों में राष्ट्रीय निष्ठा के स्थान पर जातीय निष्ठा पाई जाती है, इससे लोगों में संकुचित मनोवृत्ति पैदा होती है। सरकारी तथा गैर सरकारी नौकरियों तथा लाभ प्रदान करने में अपनी जाति के व्यक्ति को ही प्राथमिकता दी जाती है। इससे विभिन्न –जातियों में परस्पर अविश्वास, मनमुटाव एवं संघर्ष पैदा होता है। व्यक्ति अपनी जाति के लोगों के लिए गैर कानूनी कार्य भी करने लगता है।

8 - सामाजिक समस्याओं का उदय –

कठोर जातीय नियमों के कारण समाज में बाल–विवाह, दहेज प्रथा, विधवा पुनर्विवाह पर रोक, कुलीन विवाह के सम्बन्ध में व्यक्ति जातीय नियमों का पालन करता है।

9 – जातीय संघर्ष –

जातिवाद की भावना ने सामाजिक तनाव एवं जातीय संघर्षो को जन्म दिया है। जातीय श्रेष्ठता व घृणा के कारण विभिन्न जातियों में टकराव पैदा होता है। जातीय को, मारपीट, तोड़फोड एवं आगजनी की घटनाएं घटती है।

जी. एस. घुरिये ने लिखा है कि यह जातिवाद की भावना ही है जो दूसरी जातियों के प्रति विरोध उत्पन्न करती है और राष्ट्रीय चेतना की वृद्धि के लिए दूषित वातावरण का निर्माण करती है। यह जातिवाद ही है जिसके विरूद्ध हमें लड़ना है और इसे पूर्णतया समाप्त कर देना है। यदि जातिवाद की समस्या हल न हुई तो इसका परिणाम यह होगा कि बड़ी संख्या में ऐसे संगठित समूह उत्पन्न हो जायेंगे जो दूसरों के हितों पर कुठाराघात करके अपने हितों को आगे बढ़ायेंगे। इसके फलस्वरूप तीव्र संघर्ष उत्पन्न होंगे।

7.5 जातिवाद के निराकरण के उपाय

जातिवाद के निराकरण के उपाय जातिवाद के निराकरण हेतु सुझाव निम्नलिखित हैं –

1 जाति प्रथा को समाप्त करना –

भारतीय संविधान में जाति–पांति के भेदभाव को मिटाने के आदर्श को सामने रखा गया है। इसके लिए सरकारी तौर पर कुछ कानून भी पास किये गये हैं, जिनके आधार पर यह विश्वास दिलाया जाता है कि भारत में शीघ्र ही जाति विहीन समाज की स्थापना होगी।

2 अन्तर्राजीय विवाहों को प्रोत्साहन –

जी. एस. घुरिये का कहना है कि जातिवाद को समाप्त करने के लिए अन्तर्जातीय विवाहों को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। ऐसे विवाहों के लिए देश में उचित वातावरण तैयार किया जाये। शिक्षा के माध्यम से लोगों की मनोवृति में परिवर्तन लाया जाये तथा विभिन्न जाति के लड़के–लड़कियों को एक दूसरे के निकट आने का अवसर दिया जाये।

3 उचित शिक्षा –

पी.एच. प्रभु का मानना है कि उचित शिक्षा के द्वारा व्यवहार के आन्तरिक स्त्रोतों पर प्रभाव डालकर जातिवाद को दूर किया जा सकता है। शिक्षा के माध्यम से बच्चों में जाति पांति सम्बन्धी भेदभाव उत्पन्न ही नहीं हो, धर्म–निरपेक्षता को बढ़ावा मिले तथा जातिवाद के विरोध में स्वस्थ जनमत का निर्माण हो। शिक्षा एवं सामाजिक सम्पर्क के द्वारा एक जातीय समूह की दूसरे समूह के प्रति कलुषित धारणाओं को बदला जा सकता है। लोगों की मनोवृत्तियों को बदलने के लिए चल चित्रें का प्रयोग किया जा सकता है।

4 वैकल्पिक समूहों का निर्माण –

वैकल्पिक समूहों के निर्माण से जातिवाद की समस्या को हल किया जा सकता है। यहां लोग जातीय समूहों के माध्यम से ही अपनी सामूहिक प्रवृतियों को व्यक्त करते हैं। यदि लोगों को वैकल्पिक समूह उपलब्ध हों तो वे इनकी सदस्यता प्राप्त कर इनके माध्यम से सामूहिक मनोवृत्तियों को त्यक्त तथा अपनी विविध क्रियाओं को संगठित कर सकेंगे। सामाजिक व सांस्कृतिक संगठनों के निर्माण से विभिन्न जाति के लोगों को एक दूसरे के नजदीक आने और एक दूसरे को समझने का मौका मिल सकेगा। इससे उनमें समानता और बन्धुत्व की भावना पनपेगी तथा जातिवाद दूर हो सकेगा।

5 विभिन्न जातियों में आर्थिक एवं सांस्कृतिक समानता को प्रोत्साहन –

इरावती कर्वे का कहना है कि जातिवाद से छुटकारा प्राप्त करने के लिए विभिन्न जातियों में आर्थिक एवं सांस्कृतिक समानता लाना आवश्यक है। इससे लोग स्वयं की जाति के संकुचित दायरे से बाहर निकल सकेंगे।

6 जाति शब्द का बहिष्कार –

सरकार द्वारा यह प्रयास किया जावे कि प्रार्थना पत्रों, स्कूल के रजिस्टरों, धर्मशालाओं तथा दुकान आदि के नामों में जाति शब्द का कहीं प्रयोग नहीं किया जावे।

7 सांस्कृतिक एकीकरण को प्रोत्साहन –

एम. एन. श्रीनिवास का कहना है कि वयस्क मताधिकार, पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से होने वाली क्रान्ति, शिक्षा का प्रचार, पिछड़ी जातियों का उत्थान तथा उनके रहन–सहन के तरीकों पर उच्च जातियों की संस्कृति के प्रभाव से जाति व्यवस्था के बहुत से दोष दूर हो सकेंगे।

7.6 जातिवाद के निराकरण हेतु किये गये प्रयत्न

स्वतंत्र भारत में जातिवाद को समाप्त करने हेतु अनेक प्रयास किये गये हैं। साक्षरता के प्रसार, वैकल्पिक समूहों के निर्माण, जाति तथा धर्म के आधार पर समानता के व्यवहार को प्रोत्साहन देने तथा आर्थिक एवं सांस्कृतिक समानता लाने हेतु अनेक प्रयास किये गये हैं। पिछड़ी जातियों, अछूतों एवं जनजातियों की निर्योग्यताओं को समाप्त कर उन्हें उच्च जातियों के समकक्ष लाने का प्रयास किया गया है। 'अस्पृश्यता निवारण अधिनियम 1955' के द्वारा अस्पृश्यता को कानून के द्वारा समाप्त कर दिया गया है। पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से देश के औद्योगिक विकास का प्रयास किया गया है, ताकि लोगों को नौकरियां प्राप्त हो सके। साक्षरता बढ़ने से स्कूलों और महाविद्यालयों में विभिन्न जाति के छात्रों को एक दूसरे के साथ अध्ययन एवं सम्पर्क स्थापित

करने के अवसर बढ़ते हैं। अन्तर्जातीय विवाहों की संख्या बढ़ती है, औद्योगीकरण और नगरीकरण की गति तेज होती है। इसके साथ जातिविहीन वातावरण की सृष्टि और जातिवाद की संकुचित भावना का अन्त हो सकेगा।

7.7 सारांश

इस प्रकार जातिवाद के कारण एक जाति दूसरी जातियों की तुलना में अपनी जाति को श्रेष्ठ समझती है, अन्य जाति के हितों की उपेक्षा कर अपनी ही जाति के लोगों के हितों की रक्षा करते हैं। जातीय संगठन बने हैं, अपनी ही जाति के सदस्यों के पक्ष में वोट देते हैं। एम.एन. श्रीनिवास ने कहा कि मैसूर में पंचायत चुनाव से लेकर राज्य में मंत्रियों व सचिवों की नियुक्ति तक में जातीय आधार अपनाया गया। डा. रजनी कोठारी ने भारतीय राजनीति में जाति तथा रूडोल्फ व रूडोल्फ ने परम्परा की आधुनिकता में राजनीति व जाति का सम्बन्ध बताया ।प्रजातन्त्र में सत्ता प्राप्त करने के लिए विभिन्न जातियों में टकराव पैदा हुआ है। जाति के हितों की रक्षा के लिए राजनीति का सहारा लेते हैं। अपने प्रतिनिधियों को विधानसभा व संसद में भेजकर अपने कानूनी, राजनीतिक आर्थिक हितों की रक्षा का प्रयत्न करते हैं। नीची जातियाँ संविधान द्वारा प्रदान की गई सुविधाओं का लाभ उठाते रहने के लिए संगठित हुई है। धार्मिक व सार्वजनिक स्थानों के उपयोग को लेकर ऊँची–नीची जाति में संघर्ष हुआ है। राल्फ निकोलस ने उत्तरप्रदेश व तमिलनाडू के गांवों के अध्ययन में पाया कि ऊँची जाति के लोगों को नीची जाति के लोगों ने चुनौती दे रखी थी। राजनीतिक दलों ने अलग–अलग राज्यों में चुनावों में प्रभु जातियों का सहारा लिया है, शासन में आने पर अपने समर्थकों. को अधिकतम लाभ पहुँचाने का प्रयास किया। जातिवाद ने राष्ट्रीय एकीकरण के मार्ग में बाधा पैदा की है।

7.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. जातिवाद की अवधारणा स्पष्ट कीजिए।
2. भारतीय समाज में जातिवाद के विकास के कारक बताइये।
3. जातिवाद के दुष्परिणाम समझाइये।
4. जातिवाद के निराकरण हेतु सुझाव दीजिये।
5. भारतीय समाज से जातिवाद के निराकरण हेतु किये गये प्रयास समझाइये।

7.9 सन्दर्भ ग्रंथ

1. के. एम. पन्निकर – 'हिन्दू सोसायटी एट क्रॉस रोड'
2. डा. के.एन. शर्मा 'भारतीय समाज और संस्कृति'
3. जी.एस घुरिये, कास्ट, क्लास एण्ड ओक्यूपेशन, पापुलर बुक डिपो, मुम्बई, 1961
4. मोतीलाल गुप्ता, भारत में समाज, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर– 1994
5. रवीन्द्रनाथ मुखर्जी, भारतीय सामाजिक समस्याएं, विवेक प्रकाशन, जवाहर नगर, नई दिल्ली– 1994
6. वीरेन्द्र प्रकाश शर्मा, समकालीन भारत में सामाजिक समस्याएं, पंचशील प्रकाशन, जयपुर– 1994

इकाई – 8

क्षेत्रवाद

इकाई की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य

8.1 प्रस्तावना

8.2 क्षेत्रवाद: अर्थ एवं परिभाषा

8.3 क्षेत्रवाद के कारण

8.4 भारतीय समाज एवं राजनीति में क्षेत्रवाद के विभिन्न स्वरूप

8.5 भूमिपुत्र की अवधारणा

8.6 क्षेत्रवाद के दुष्परिणाम

8.7 क्षेत्रवाद को रोकने के उपाय

8.8 सारांश

8.9 अभ्यासार्थ प्रश्न

8.10 सन्दर्भ ग्रंथ

8.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप –

- क्षेत्रवाद कीं अर्थ एवं उसका स्वरूप जान सकेंगे
- भारतीय समाज के सन्दर्भ में क्षेत्रवाद के कारणों को जान सकेंगे।
- भारतवर्ष में क्षेत्रवाद से जुड़ी प्रमुख प्रवृत्तियों की जानकारी हासिल कर सकते है।
- स्वतंत्रता प्राप्ति से लेकर वर्तमान समय तक क्षेत्रवाद के भारतीय समाज एवं राजनीति पर प्रभावों कि जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- क्षेत्रवाद की समस्या के समाधानों के लिए क्या–क्या व्यवहारिक उपाय किये जा सकते विश्लेषण कर सकते हैं ।भारत में क्षेत्रवाद ने समाज एवं संघ–व्यवस्था को किस प्रकार से प्रभावित किया है का अध्ययन कर सकेंगे।

8.1 प्रस्तावना

भारत वर्ष भौगोलिक दृष्टि से विशालता के साथ सामाजिक–सांस्कृतिक विविधता पायी जाती है। एक राष्ट्रों में विविध भाषा, संस्कृति और जाति समुदाय के लोग मिलकर विविधतापूर्ण परिवेश का निर्माण करते है। विविध भाषा, लिपि, साहित्य, संस्कृति, रीति–रिवाज एवं जीवन–दर्शन वाले लोगों के निवास ने भारतीय संस्कृति

एवं समाज को इन्द्रधनुषी रूप दिया है। किन्तु यही विविधता राष्ट्र की एकता के लिए घातक बन जाती है। जब समाज के विभिन्न वर्गों के लोगों में संकीर्ण हितों के आधार पर पारस्परिक संघर्ष एवं द्वंद उत्पन्न हो जाये। समाज के बहुलवादी चरित्र को बनाये रखने के लिए उसके सभी भागों का संतुलित विकास होना आवश्यक है, मगर जब आर्थिक नियोजन की विफलता के परिणाम स्वरूप किसी एक भाग का विकास न हो तो वही असंतोष उत्पन्न होता है। और यही असन्तोष क्षेत्रवाद के रूप में मुखरित होता है। विकासशील समाजों की एक महत्वपूर्ण समस्या राष्ट्रीय एकीकरण की रही है। राष्ट्रीय एकीकरण के भावात्मक तत्वों की जब हम खोज करते है तो हमारा ध्यान उन जातीय, भाषागत, धार्मिक, क्षेत्रीयता पर जाता है जो संर्कीण क्षेत्रवाद को बढ़ावा देते है। क्षेत्रवाद के आधार पर राष्ट्रीय के स्थान पर क्षेत्र विशेष के हितों एवं मांगो की पूर्ति के स्वर विखण्डतावाद को बढ़ावा देते है जो राष्ट्रीय एकता में बाधक है। इस पाठ के अध्ययन के उपरान्त आप भारतीय समाज के समक्ष एक प्रमुख समस्या के रूप में क्षेत्रवाद का इसके स्वरूपों, कारणत्वों एवं समाधान के उपायों का विश्लेषण कर सकने में सक्षम होगें।

8.2 क्षेत्रवाद : अर्थ एवं परिभाषा

भारतीय समाज में क्षेत्रवाद एक अपभ्रंश–प्रयोग है जिसका आशय है राष्ट्रों की तुलना में किसी क्षेत्र विशेष अथवा राज्य या प्रान्त या छोटे क्षेत्रों से लगाव। यह राष्ट्रीय भावना के विपरीत है। संर्कीण क्षेत्रीय हितों की पूर्ति करना इसका उद्देश्य होता है। क्षेत्रवाद से तात्पर्य एक देश में या देश के किसी भाग में उस छोटे से क्षेत्र से है जो आर्थिक, भौगोलिक, सामाजिक, प्रजातीय आदि कारणों से अपने पृथक अस्तित्व के लिए जागरूक है। यह एक ऐसी प्रवृत्ति है जिसमें क्षेत्र विशेष के लोग अपने लिए आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक शक्तियों की अधिकाधिक मांग करते है।

'क्षेत्र शब्द के कई अर्थ है। मूल रूप से किसी क्षेत्र को जोड़ने वाली कड़ी 'सांस्कृतिक' समानता है। किसी भौगोलिक प्रदेश को भी क्षेत्र के आधार पर सम्बोधित किया जा सकता है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। और अपने निवास के आसपास की भूमि से उसका भावात्मक सम्बन्ध स्थापित हो जाता है और कालान्तर में अपने पूरे क्षेत्र के प्रति उसकी निष्ठा विकसित हो जाती है। अनेक तत्वों जैसे भूगोल, जलवायु, धर्म, भाषा, रीति–रिवाज राजनीतिक और आर्थिक विकास, ऐतिहासिक अनुभव, रहन–सहन के तरीके आदि की अन्त: क्रियाओं से किसी क्षेत्र का निर्माण हो सकता है। क्षेत्र के लोगों में साथ रहने की भावात्मक एकता होती है और दूसरों को पृथक मानने की अभिव्यक्ति। जैसे कोई व्यक्ति सोचता है कि वह राजस्थान का रहने वाला है तो इसका अर्थ है कि वह पंजाब के लोगों से अपने को थोड़ा भिन्न मानता है। पंजाब के लोगों भी ऐसा ही सोचते है। ऐसी भावनाएं सांस्कृतिक वास्तविकताएं है। और उनसे कोई भी समाज मुक्त नही है।

क्षेत्र एक प्रकार से समाजशास्त्रीय अवधारणा है। जिसे विविध साम्प्रदायिक हितों की अभिव्यक्ति की धुरी कहा जा सकता है' ' भारतीय समाज के सन्दर्भ में क्षेत्रवाद से अभिप्राय है राष्ट्रों की तुलना में किसी क्षेत्र विशेष अथवा राज्य या प्रान्त की अपेक्षा एक छोटे क्षेत्र से लगाव, उसके प्रति भक्ति या विशेष निष्ठा दिखाना। इस दृष्टि से क्षेत्रवाद व राष्ट्रवाद की वृहद भावना का विलोम है और इसका ध्येय संकुचित क्षेत्रीय स्वार्थों की पूर्ति होता है। यह एक ऐसी धारण है जो प्रजाति, भाषा, धर्म, क्षेत्र, आदि पर आधारित है और जो प्राय: विघटनकारी प्रवृत्तियों को प्रोत्साहन देती है। क्षेत्रवाद की भावना सारे देश में व्याप्त है जो सुनियोजित आन्दोलनों, अभियानों एवं पारस्परिक संघर्षों के रूप में अभिव्यक्त होती है।

8.3 क्षेत्रवाद के कारण

क्षेत्रवाद की जड़ें स्वतंत्रता पूर्व के ब्रिटिश भारत में ही मौजूद है। तब अंग्रेजों ने प्रशासन सुविधा की दृष्टि से देश के प्रांतो का दोषपूर्ण विभाजन किया। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारतीय संघ की विविध–इकाइयों का

जिसमें विविध वर्गों, भाषा, संस्कृति, जीवन–शैली वाले व्यक्तियों का निवास था। समानता के आधार पर भारतीय संघ में विलय कर दिया तब से असन्तुष्ट वर्गों ने क्षेत्रवाद के आधार पर नयी–नयी मांगें उठायी है जिससे स्वतंत्रता के पश्चात सुनियोजित आन्दोलन के रूप में संकीर्ण क्षेत्रवाद की भावना का उदय हुआ है। भारतीय समाज में क्षेत्रवाद के प्रमुख कारण निम्नलिखित है।

1. भौगोलिक कारण

भौगोलिक दृष्टि से समस्त भारत में विविधता व्याप्त है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात जब राज्यों का पुर्नगठन किया गया तो आकार की विशिष्टता एवं भौगोलिक विविधता का ध्यान नही रखा गया। भौगोलिक दृष्टि से जहाँ राज्यो के आकार में असमानता है। राजस्थान, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, बिहार बड़े राज्य है तो मिजोरम, नागालैण्ड, केरल राज्यों का आकार छोटा है। आज देशों के राज्यों में भौगोलिक दृष्टि से अनेक ऐसी उप–इकाइयाँ है जो पृथक राज्य बन सकते है। बड़े राज्यों में संसाधनों का असन्तुलित आवंटन, प्रशासन में शिथिलता तथा आर्थिक पिछड़ेपन के कारण पृथक राज्यों की मांग समय–समय पर उठती है।

2. आर्थिक कारण

स्वतंत्रता के पश्चात राष्ट्र के विकास के लिए नियोजन का जो मार्ग अपनाया गया था उसके सकारात्मक परिणामों के बावजूद आर्थिक विकास की दृष्टि से कुछ राज्य पिछड़े रह गये तथा कुछ राज्यों का तेजी से विकास हुआ। इससे पिछड़े हुए राज्यों (क्षेत्रों) में विषमताओं एवं असन्तोष के कारण क्षेत्रीय स्वायत्तता की मांग उठने लगी। आंध्रप्रदेश में तेलंगाना, राजस्थान में दक्षिण–पूर्वी राजस्थान महाराष्ट्र में विदर्भ क्षेत्र एवं बिहार में छोटा नागपुर क्षेत्र पिछड़ गया परिणाम स्वरूप इन क्षेत्रों से आर्थिक संसाधनों के लाभप्रद आवंटन की मांगे उठायी गयी और क्षेत्रवाद की भावना के कारण ये पृथक–पृथक राज्य की मांग करने लगे।

3. ऐतिहासिक कारण

भारतवर्ष में क्षेत्रवाद ऐतिहासिक विरासत है। स्वतंत्रता पूर्व ब्रिटिश शासकों ने साम्राज्य के हितों की आवश्यकतानुसार ब्रिटिश भारत में अनेक निर्णयों को लागू किया। कृषि सुधार, प्रशासनिक तंत्र की स्थापना, औद्योगिक विकास शिक्षा एवं रोजगार की सुविधा आदि सभी मुद्दों का निर्धारण सम्पूर्ण क्षेत्र के सन्तुलित विकास को दृष्टि से नहीं वरन् औपनिवेशिक हितों से प्रेरित था। इससे विकास कि दृष्टि से क्षेत्रों में असन्तुलन उत्पन्न हो गया। कालान्तर में इससे उपजे असंन्तोष ने क्षेत्रवाद का रूप लिया।

4. जातिवाद

क्षेत्रवाद की प्रवृति में जाति का कारक भी निर्णायक रहा है। ऐसे क्षेत्र जहाँ एक ही जाति की प्रधानता है वही जातिवाद को बढ़ावा मिला है इससे उस क्षेत्र के लोगों में क्षेत्रवाद की भावना पनपी है। तमिलनाडू में तमिल भाषी एवं गैर–ब्राह्म्णों का संघर्ष, पंजाब में सिक्खों एवं जाटों का संघर्ष तथा हरियाणा एवं महाराष्ट्र में भी जातिवादी तत्वों ने क्षेत्रवाद की भावना को बढ़ाया है। रजनी कोठारी के अनुसार – ' 'जाति व्यवस्था क्षेत्रवाद के लिए अपने आप में बहुत महत्वपूर्ण तत्व न होते हुए भी, जहाँ यह आर्थिक हितों (जैसे– महाराष्ट्र में मराठा जाति) भाषायी समुदायों (जैसे–तमिलनाडु में तमिल भाषी एवं गैर ब्राहम्ण जातियों) और धर्म (पंजाब में सिक्ख एवं जाट) के साथ जुड़ी हो, वहाँ क्षेत्रवाद को प्रबल बनानें मे सहायक सिद्ध होती है। " इस प्रकार जातिवाद ने समाज के अनेक सम्बन्धित तत्वों को प्रभावित करते हुए क्षेत्रवाद को बढ़ाने में अपनी भूमिका निभाई है।

5. भाषा एवं सांस्कृतिक कारण

भारत में भाषागत एवं सांस्कृतिक विविधता व्याप्त रही है। मॉरिस जोन्स का कहना है कि यद्यपि भाषा के कारण आन्तरिक संगठन और एकता में वृद्धि हुई परन्तु इसने अनेक समस्याऐं भी पैदा की है। नार्मन डी पामर का कहना है कि " भारत की अधिकांश राजनीति क्षेत्रीयतावाद और भाषा के बहुत से प्रश्नों के चारों ओर घूमती है। " भारत में भाषायी विविधता को अनेक राजनीतिक दलों ने राजनीतिक हथियार के रूप में प्रयुक्त किया है। उत्तर एवं दक्षिण भारत में भाषा की विभिन्नता को लेकर आन्दोलन हुए। जब नवीन राज्यों का गठन किया गया तो भाषा के प्रश्नों को लेकर क्षेत्रीय स्वरों की और अधिक प्रोत्साहन मिला। कुछ क्षेत्रों के लोगों को अपनी भाषा एवं संस्कृति पर गर्व है ।इसी आधार पर द्रविड़ मुनेत्र कड़गम ने भारतीय संघ से अलग होने की बात कही थी। जो भारत की राष्ट्रीय एकता में बाधा के रूप में अभिव्यक्त हुई है।

6. राजनीतिक कारण

भारत में राजनीतिक कारणों से भी प्रादेशिकता की मांग उठती रहती है। क्षेत्रवाद की समस्याओं को पनपाने में राजनीतिकों का भी हाथ रहा है। राजनेता यह समझाते हें कि यदि कोई भी प्रदेश या क्षेत्र अलग से राज्य बन जाएगा तो उनकी राजनीतिक महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति हो जाएगी। अपनी निजी राजनैतिक महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति के लिए अनेक प्रादेशिक राज्यों ने क्षेत्रवाद के आधार पर पृथक राज्यों एवं अधिक स्वायत्तता की मांग की थी। देश के प्रादेशिक दलों जैसे–अकाली दल, डी.एम.के. असम गण परिषद, शिव सेना, महाराष्ट्र नव निर्माण सेना आदि ने राजनैतिक कारणों से प्रादेशिक हितों को आश्रय दिया तथा केन्द्रीय सत्ता के विरूद्ध स्वर मुखरित किए है। इन कारणों के साथ ही देश के आर्थिक रूप से पिछड़े हुए क्षेत्रों में नवीन चेतना, सामाजिक विषमता तथा भूमिपुत्र की धारणा ने भी क्षेत्रवाद को बढ़ावा दिया है।

8.4 भारतीय समाज एवं राजनीति में क्षेत्रवाद के विभिन्न स्वरूप

भारतीय समाज में क्षेत्रवाद की प्रवृति की पाँच आधारों पर चर्चा करते हुए प्रो. रजनी कोठारी ने अपनी पुस्तकें 'पॉलिटिक्स इन इण्डिया ' में लिखा है कि " (1) देश के सामने एक खतरा राज्यों के संघ से अलग हो जाने का था। (2) कुछ लोगों ने आशंका प्रकट की थी कि प्रान्तीयता की भावना या प्रदेश के लिए अधिक अधिकार या स्वायत्तता की मांग बढती गयी तो इससे यातो देश अनेक छोटे–छोटे स्वतंत्र राज्यों में बंट जाएगा या यहाँ तानाशाही कायम हो जाएगी। (3) पृथकता की भावना उनमें ज्यादा बलवान और खतरनाक है जहाँ ऐसी आर्येन्तर जातियाँ है जो भारतीय संस्कृति की धारा में पूरी तरह नहीं मिल पायी है। जैसे उत्तर –पूर्व की आदिम जातियों का इलाका (4) कुछ क्षेत्रों में अभी भी असंतोष है जैसे बिहार में छोटा नागपुर तथा मध्यप्रदेश में आदिवासी इलाके और गुजरात व उड़ीसा में आदिवासियों का स्वायत्तता का आन्दोलन (5) राज्यों के भीतर विशिष्ट क्षेत्रों के अलगाव के आन्दोलन उठ रहे है। दबे हुए वर्गो और आर्थिक रूप से पिछड़े समूहों के राजनीतिक क्षेत्रों में आने से अधिकार के लिए उनकी आकाशाओं से नयी समस्याएँ उठ खड़ी रही है। '

भारतीय समाज एवं राजनीति में क्षेत्रवाद की प्रवृत्ति निम्न रूपों में दृष्टिपात होती है।

1. भारतीय संघ से पृथक होने की मांग –

भारतवर्ष में क्षेत्रवाद का सबसे भयानक रूप भारतीय संघ से पृथक होने की मांग है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात सर्वप्रथम सन् 1950 में तमिलनाडु के राजनीतिक दल द्रविड़ मुनेत्र कड़गम ने मद्रास राज्यों को भारतीय संघ से विलग करने की मांग की थी। इस मांग के तहत भारतीय संघ से अलग कर एक 'द्रविडिस्तान' राज्य की मांग की गयी। जिसमें मद्रास, आन्ध्रप्रदेश, केरल तथा मैसूर राज्य शामिल थे। इस तरह की विघटनकारी मागों को

रोकने के लिए भारत सरकार ने संविधान के 16वें संशोधन द्वारा अक्टूबर 1963 में संसद को ऐसे कानून के निर्माण का अधिकार दिया गया जिसके द्वारा भारत की सम्प्रभूता और अखण्डता की चुनौती देने वाले व्यक्तियों को दण्डित किया जा सके। इसके साथ ही संसद अथवा राज्य विधान मण्डलों के चुनाव में भाग लेने वाले उम्मीदवारों के लिए यह आवश्यक कर दिया कि संविधान के प्रति निष्ठा की तथा देश की प्रभुसत्ता और अखण्डता की रक्षा की वे शपथ लें।अकाली दल ने स्वतन्त्रता पूर्व ही मास्टर तारासिंह के नेतृत्व में पृथक सिक्ख राज्य की मांग की थी। सन् 1950 से 1969 के दौरान पुन: पृथक सिखिस्तान की मांग की गयी। सन् 1980 के दशक में डॉ. जगजीत सिंह के नेतृत्व में अकाली दल ने खालिस्तान राज्य की मांग के लिए आन्दोलन चलाया। शुरूआत में यह आन्दोलन, धरनें, प्रदर्शन, अनशन तक सीमित था। किन्तु बाद में इस आन्दोलन ने उग्रवादी रूप धारण कर लिया। जिसे तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने सशस्त्र अभियान "ऑपरेशन ब्लू स्टार" द्वारा समाप्त करवा दिया। अन्य क्षेत्रों जैसे उत्तर पूर्व में "नागा एवं मिजो" द्वारा भी भारतीय संघ से पृथक होने की मांग की गयी। सन् 1962 में संविधान के 13 वें संशोधन द्वारा नागालैण्ड को भारतीय संघ का पूर्ण राज्य तथा 1985 में 'मिजोरम' को पूर्ण राज्य का दर्जा दिया गया। इसी प्रकार समय–समय पर पृथक तेलंगना स्वतंत्र गोरखालेण्ड एवं स्वतंत्र कश्मीर हेतु पृथकवादी हिंसक आन्दोलन चलाये गए है।

2. पृथक राज्यों की मांग

.क्षेत्रवाद का सर्वाधिक महत्वपूर्ण पक्ष पृथक राज्यों की मांग कर रही है। आर्थिक पिछड़ेपन, जाति, भाषा, धर्म को लेकर विभिन्न क्षेत्रों द्वारा पृथक राज्य की मांग समय–समय पर उठायी गयी तथा क्षेत्रीय आन्दोलन की शुरूआत की गयी। महाराष्ट्र, गुजरात, पंजाब, मेघालय, झारखण्ड, उत्तराखण्ड एवं छत्तीसगढ़ राज्यों का गठन पृथक राज्यों के लिए की गयी निरन्तर मांग का ही परिणाम है। स्वतंत्रता के पश्चात 1956 में सर्वप्रथम भाषागत आधार पर ही राज्यों का पुर्नगठन किया गया था। किन्तु इस पुर्नगठन से असन्तुष्ट देश के विविध–वर्गो ने विविध–क्षेत्रों से नवीन राज्यों के गठन की मांग उठायी गयी। 1960 में गुजराती एवं मराठी भाषा के आधार पर बम्बई राज्य का विभाजन कर महाराष्ट्र व गुजरात राज्य की स्थापना की गयी। 1966 में पंजाब राज्य का पुर्नगठन कर पंजाब, हरियाणा एवं चण्डीगढ़ का गठन किया गया था। पंजाब हरियाणा को पूर्ण राज्य का दर्जा दिया गया चण्डीगढ़ को केन्द्रशासित प्रदेश बनाया गया। सन् 1968 में असम राज्य का पुर्नगठन कर मेघालय, 1972 में भूतपूर्व संघीय प्रदेश मणिपुर एवं त्रिपुरा को पूर्ण राज्य का दर्जा दिया गया था। पुराने राज्यों का पुर्नगठन कर नवीन राज्यों के गठन के क्रम में देश की संसद ने अगस्त सन् 2000 में उत्तर प्रदेश पुर्नगठन अधिनियम पारित कर उत्तराखण्ड, अगस्त सन् 2000 में ही बिहार पुर्नगठन अधिनियम पारित कर झारखण्ड तथा मध्यप्रदेश पुर्नगठन अधिनियम पारित कर छत्तीसगढ़ राज्यों का सृजन किया है।परन्तु उक्त नवगठित राज्यों के बावजूद अनेक नये राज्यों के गठन की मांग उठायी जा रही है। जैसे उत्तर–प्रदेश में पूर्वाचल हरितप्रदेश एंव बुलन्दखण्ड, महाराष्ट्र में विदर्भ, गुजरात में सौराष्ट्र, आन्ध्रप्रदेश में तेलंगाना, असम में बोडोलैण्ड तथा पश्चिम में गौरखालेण्ड आदि इनमें से अनेक राज्यों की मांग अव्यवहारिक भी है। परन्तु क्षेत्र की संकीर्ण मनोवृति के कारण आदि किसी अल्पसंख्यक समुदाय को विकास के अवसर नहीं मिलते रोजगार एवं अन्य कल्याणकारी योजनाओं का लाभ नहीं मिलता है तो वह पृथक राज्यों की मांग करने लगता है।

3. क्षेत्रवाद और केन्द्र राज्य तनाव

भारतीय राजनीति में क्षेत्रवाद की अभिव्यक्ति केन्द्र व राज्यों के बीच हुए विवादों में भी हुई है। राज्यों ने अपना स्वतंत्र अस्तित्व बनाये रखने के लिए अनेक बार केन्द्र के निर्देशों की अवहेलना की है। राज्यों द्वारा केन्द्र के निर्देशों का पालन न करना तथा केन्द्र की नीति का विरोध करना केन्द्र के निर्णयों को लागू न करना आदि

क्षेत्रवाद की नीति के द्योतक है। सन् 1968 में पश्चिम बंगाल के दार्जिलिंग और नक्सलवादी क्षेत्रों में होने वाले उपद्रवों से चिन्तित होकर केन्द्रीय सरकार ने उपद्रवग्रस्त क्षेत्रों में हथियार रखने पर प्रतिबन्ध लगा दिया जिसे राज्य सरकार ने राज्य में मामले में केन्द्र के हस्तक्षेप की संज्ञा दी। केन्द्र द्वारा राज्यों में केन्द्रीय रिजर्व पुलिस भेजने का राज्यों ने बराबर विरोध किया है। केन्द्र से अधिकतम वित्तीय स्रोतों को प्राप्त करने के लिए राज्यों ने केन्द्र के विरूद्ध संघर्ष का रूख अपनाया। कई बार अन्तर्राष्ट्रीय विवादों के समाधान में राज्यों ने केन्द्र के निर्णय को मानने से इनकार किया। वस्तुत: भारतीय संविधान द्वारा शक्ति विभाजन की दृष्टि से विधायी प्रशासनिक एवं वित्तीय शक्तियों के विभाजन में केन्द्र को अधिक सशक्त बनाया गया है। राष्ट्रीय एकता एवं अखण्डता हेतु सशक्त केन्द्र होना आवश्यक था किन्तु पिछले छ: दशकों में क्षेत्रवाद की संकीर्ण प्रवृति के कारण केन्द्र–राज्य सम्बन्धों में तनाव उत्पन्न हुआ है।

4. क्षेत्रवाद एवं भाषायी विवाद

क्षेत्रवाद का एक अन्य स्वरूप देश में भाषायी विवादों के रूप में अभिव्यक्त हुआ है। संविधान में हिन्दी को राजभाषा घोषित किया गया था तथा भाषा के आधार पर राज्यों का निर्माण एवं 1956 में भाषायी आधार पर ही राज्यों का पुर्नगठन हुआ था। दक्षिण के राज्यों द्वारा हिन्दी विरोध एवं हिन्दी को राजभाषा के रूप में थोंपे जाने के प्रयास में भाषा के प्रश्न को लेकर उत्तर तथा दक्षिण के राज्यों में हिंसात्मक आन्दोलन हुए और राष्ट्रीय एकता संकट में पड़ गयी। मारिन जोन्स लिखते है कि "दक्षिण भारत में हिन्दी का जोरदार विरोध किया, बंगाल ने उससे कम विरोध किया और देश के अन्य भागों के शिक्षित वर्ग के लोगों ने सीमित रूप से इसका विरोध किया। " असम में भाषा की राजनीति असम आन्दोलन की प्रेरणा स्त्रोत रही हैं। वही बांग्ला, असमी एवं हिन्दी भाषा को लेकर परस्पर विवाद हुआ। पंजाबी, मराठी, गुजराती आदि भाषाओं के आधार पर पृथक राज्यों के गठन की मांग की गयी। इस प्रकार भाषा को लेकर राजनीतिक दलो में प्रान्तवाद /क्षेत्रवाद की भावना को प्रेरित किया। भाषा के राजनीतिक हथियार के रूप में प्रयोग ने विविध वर्गो अनावश्यक तनाव भी उत्पन्न किया है।

5. क्षेत्रवाद एवं उत्तर–दक्षिण प्रकृति

भारत में भौगोलिक विविधता व्याप्त है। जहाँ इसी कारण उत्तर और दक्षिण के संदर्भ में सोचने की प्रवृति पायी जाती है। दक्षिण के लोग यह मानते है कि उत्तरी भारत के लोगों ने सदैव हर मामले में उपेक्षा की है। दक्षिण के चार राज्यों–तमिलनाडू, आन्ध्रप्रदेश, केरल और कर्नाटक, जहाँ द्रविड़ भाषा बोली जाती है– का विचार है कि राजनैतिक आर्थिक और सांस्कृतिक दृष्टि से उत्तरी भारत की अपेक्षा दक्षिणी भारत को वे लाभ नहीं मिलें जो मिलने चाहिए थे। केन्द्रीय मंत्री मण्डल, योजना आयोग तथा केन्द्रीय सचिवालय में दक्षिण की अपेक्षा उत्तर के लोग ही आये हुए है। आर्थिक संसाधनों के बँटवारों में भी दक्षिण राज्यों का मानना है कि पक्षपात हुआ है। इस्पात के बड़े कारखाने, उद्योग उत्तर भारत में ही स्थित है। दक्षिण के राज्यों ने केन्द्रीय सरकार की भाषा नीति का डटकर विरोध किया है। दक्षिणी राज्य यह मानते है कि हिन्दी उत्तरी भारत की भाषा है और उन पर हिन्दी भाषा थोपी जा रही है। वे मानते है कि अन्य प्रादेशिक भाषाओं की भाँती हिन्दी भी एक प्रादेशिक भाषा है। दक्षिण के राज्य यह चाहते है। कि प्रशासन की भाषा के रूप में हिन्दी के बजाय अंग्रेजी को चलाया जाना चाहिए। हिन्दी को वे उत्तर भारत की साम्रज्यवादी मनोवृत्ति का परिणाम मानते है।

6. क्षेत्रवाद और स्वायत्तता की मांग

भारतीय संविधान द्वारा ऐसे संधवाद की स्थापना की गई है जिसमें स्वाभाविक रूप से केन्द्र अधिक शक्तिशाली है। पिछले कुछ वर्षा से यह मांग की जाती रही है कि भारतीय संविधान के संघवाद से सम्बन्धित

प्रावधानों का पुनर्निमाण किया जाना चाहिए तथा राज्यों की केन्द्र पर अत्यधिक निर्भरता को कम कर दिया जाना चाहिए। यह मांग की गयी हैं कि राज्यों को अत्यधिक स्वतंत्रता दी जानी चाहिए। यह मांग की गयी है कि राज्यों को अत्यधिक स्वतंत्रता दी जानी चाहिए। स्वतंत्रता की मांग के साथ–साथ, कभी–कभी पृथकतावादी स्वर भी जोर पकड़ने लगते है। स्वायत्तता की यह मांग उन दिनों बड़ी प्रबल हो जाती है। जबकी केन्द्र एवं राज्यों मे पृथक–पृथक राजनीतिक दलों की सरकारें होती है। पंजाब मे मास्टर तारासिंह के नेतृत्व में अकाली दल द्वारा सिक्खों के स्वतंत्र राज्यों की मांग उठायी गयी थी। पश्चिमी बंगाल की मार्क्सवादी सरकार नें बार–बार राज्यों की स्वायत्तता की मांग की है। उड़ीसा के नेता बीजू पटनायक ने भी अधिक स्वायत्तता की मांग की है। जम्मू कश्मीर में नेशनल कांफेंस में नेशनल दलों ने संघवाद के पुनरीक्षण तथा स्वायत्तता की मांग की है। जम्मू–कश्मीर विधानसभा में पाँच दिन की बहस के बाद राज्य स्वायत्तता समिति के प्रतिवेदन को 26 जून 2000 को ध्वनिमत से स्वीकृत किया। इस प्रतिवेदन में राज्य की 1953 से पूर्व की स्थिति बहाल करने की संस्तुति की गई है। यह सब अधिक स्वायत्तता की मांग संकीर्ण क्षेत्र वाद की भावना की अभिव्यक्ति है।

7. क्षेत्रवाद एवं आर्थिक तनाव

क्षेत्रवाद की अभिव्यक्ति क्षेत्रीय आर्थिक तनावों के रूप में भी हुई है।स्वतंत्रता के पश्चात् राजनीतिक सत्ता के दुरूपयोग के कारण देश के समग्र विकास के ध्येय को अर्जित नही किया जा सका है। उद्योगों की स्थापना शिक्षा, रोजगार एवं संसाधनों के आवंटन की दृष्टि से असन्तुलन के कारण देश के विभिन्न भागों में असन्तोष उत्पन्न हुआ। आन्ध्र प्रदेश के तेलंगाना में आन्दोलन, देश के विभिन्न भागों में नक्सली हिंसा, उत्तर–पूर्व के राज्यों में पृथकतावादी आन्दोलन आदि ने मूल में आर्थिक असन्तुलन के प्रश्न निहित है। अत: आर्थिक विकास की अवहेलना क्षेत्रवाद की दृष्टि से महत्वपूर्ण कारक रहा है। आर्थिक रूप से पिछड़े क्षेत्रों में शिक्षा, रोजगार एवं अन्य संसाधनों के लाभ पर आवंटन के लिए वहाँ की जनता ने क्षेत्रवाद के आंदोलन का संचालन किया है।

8.5 भूमिपुत्र की अवधारणा

'भूमिपुत्र' की धारणा का आशय है कि किसी क्षेत्र या राज्य के निवासियों द्वारा उस राज्य में बसने और रोजगार प्राप्त करने आदि के सम्बन्ध में विशेष संरक्षण की मांग की जाए। इस मांग के साथ यह तथ्य जुड़ा हुआ है कि जब तक उस राज्य या क्षेत्र के सभी मूल निवासियों को रोजगार आदि लाभ प्राप्त न हो जाए तब तक राज्य या क्षेत्र में बाहर व्यक्तियों को रोजगार की सुविधा नहीं दी जानी चाहिए। भूमिपुत्र की धारणा के रूप में क्षेत्रवाद की अभिव्यक्ति यद्यपि छठे दशक में प्रारम्भ हो गयी थी, जब शिवसेना ने इसे महाराष्ट्र में अपनाया था। लेकिन अभी –हाल ही के वर्षा में इस प्रकृति को बहुत अधिक प्रबल होते देखा गया है।

सन् 1979 के मध्य से असम राज्य में बाहरी व्यक्तियों के विरूद्ध व्यापक आन्दोलन किया जा रहा है, उसके कुछ सीमा तक भूमि–पुत्र की धारणा पर आधारित कहा जा सकता है। अन्य राज्यों में भी सरकारी और गैर–सरकारी स्तर पर इस प्रकार की प्रवृत्तियाँ देखी गयी है। उदाहरण के लिए 10 फरवरी, 1920 को कर्नाटक के तत्कालीन मुख्यमंत्री गुण्डुराक ने कहा कि "कर्नाटक में केवल कर्नाटक वासी व्यक्तियों को ही रोजगार प्रदान किया जाएगा।" 1980 में उड़ीसा में मारवाड़ी वर्ग के विरूद्ध आन्दोलन की जो स्थिति देखी गयी है। वह भी इसी प्रवृत्ति का एक रूप है। इसी प्रकार से हाल ही में महाराष्ट्र राज्य में इसी प्रकार की प्रकृति देखी जा सकती है।

क्षेत्रवाद के उन्माद का विकृत रूप नवम्बर 2003 में रेल नौकरियों में आरक्षण को लेकर असम एवं बिहार के छात्रों के मध्य हिंसा के रूप में परिलक्षित हुआ। उल्लेखनीय हैं कि बिहार एवं उत्तर–प्रदेश के अल्पविकसित एवं अविकसित क्षेत्र के लोगों की देश के विभिन्न भागों में रोजगार की पुरानी प्रकृति रही है। इन राज्यों के लोगों का मुम्बई, असम, झारखण्ड एवं अन्य राज्यों में विरोध किया जाता है। भूमि–पुत्र की प्रवृत्ति से प्रभावित होकर ही

शिवसेना जैसे संगठनों पर 'पर–प्रावतीय भगाओं, महाराष्ट्र बचाओं, असम में ऑल असम स्टूडेंट यूनियन (आसू) के समर्थक 'बहिराग अखमोत साकिरी कोरिवाई नाई' (बाहर के लोगो को असम में नौकरी नहीं करने देंगे) और झारखण्ड में 'आवुआ देश, आवुआ राज' (हमारा देश, हमारा राज) नारे गढ़े गये हैं। हाल ही में महाराष्ट्र नर्वनिर्माण सेना द्वारा रेलवे परीक्षा देने गए उत्तर भारतीयों पर हिंसात्मक हमले किये गये है। सरकारी नौकरियों एवं रोजगार से जुड़े अन्य मुद्दों पर स्थानीय लोगों को अत्यधिक मौका तथा बाहरी लोगों के विरोध की प्रवृत्ति पिछले एक दशक में देश के विविध राज्यों नागालेण्ड, मुम्बई, पंजाब, दिल्ली एवं मिजोरम तथा झारखण्ड में देखी जा सकती है।

यह बात तो उचित प्रतीत होती है कि सरकारी और गैर–सरकारी उद्योग में अकुशल श्रमिक का कार्य स्थानीय व्यक्तियों को ही दिया जाए। लेकिन भूमि–पुत्र की धारणा को व्यापक स्तर पर और प्रबलता के साथ अपनाने के परिणाम राष्ट्रीय एकता के लिए घातक हो सकते है। अब तक न्यायालय के निर्देश के अनुसार स्थानीय आधार पर केन्द्रीय सेवाओं में भर्ती नहीं की जा सकती है। भूमि–पुत्र की धारणा विभिन्न क्षेत्रों के आर्थिक विकास में भी निश्चित रूप से बाधक होगी। भूतपूर्व प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी द्वारा ' भूमि–पुत्र की धारणा को अस्वीकार करते हुए इसे राष्ट्रीय एकता के लिए घातक और विभिन्न क्षेत्रों के आर्थिक विकास में बाधक बतलाया था। वस्तुत: राष्ट्रीय एकता के हित में भूमि–पुत्र की धारणा पर अंकुश लगाना चाहिए।

8.6 क्षेत्रवाद के दुष्परिणाम

क्षेत्रवाद द्वारा जन–जीवन में जड़ पकड़ने के कारण आज हमारा देश अनेक क्षेत्रों में बंट गया है और क्षेत्र के लोग दुसरों पर अपनी श्रेष्ठता को प्रमाणित करने का बीड़ा उठा चुके है। क्षेत्रवाद के दुष्परिणाम निम्न प्रकार

1. राष्ट्रीय एकता को चुनौती

संकीर्ण क्षेत्रीयता राष्ट्रीय एकता के लिए चुनौती बन जाती है। क्षेत्रवाद के फलस्वरूप विभिन्न क्षेत्रों के बीच जो तनाव और संघर्ष की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। वह राष्ट्रीय एकता की समस्त धारणाओं और भावनाओं पर तुषारापात करती है। क्योंकि क्षेत्रीयता के फलस्वरूप विभिन्न क्षेत्रों के लोगों में कभी क्षेत्रीय स्वार्थो को लकर, कभी राजनीतिक स्वशासन या पृथक राज्य के प्रश्न को लेकर जो कभी प्रादेशिक भाषा के प्रश्न को लेकर जो झगड़े या मनमुटाव खड़े हो जाते है वे राष्ट्रीय एकता के लिए घातक सिद्ध होते हैं।

2. राज्य तथा केन्द्रीय सरकार के बीच सम्बन्धों का विकृत होना

भारतीय में क्षेत्रवाद के कारण केन्द्रीय सरकार तथा राज्य सरकार के बीच का सम्बन्ध कभी–कभी अत्यन्त कटु रूप धारण कर लेता है। प्रत्येक क्षेत्र के हित समूह, क्षेत्रीय नेतागण, बड़े–बड़े उद्योगपति या राजनीतिज्ञ अपने–अपने क्षेत्र के स्वार्थी को प्राथमिकता देते है। और केन्द्रीय सरकार का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने का प्रयत्न करते है। केन्द्रीय सरकार जिसकी तरफ भी थोड़ा–सा झुक गयी वहीं विवाद का विषय बन जाता है और केन्द्र तथा राज्य सरकारों का पारस्परिक सम्बन्ध सौहार्दपूर्ण नहीं रह पाता है।

3. विभिन्न क्षेत्रों के बीच संघर्ष और तनाव

संकीर्ण क्षेत्रवाद का जो दुष्परिणाम हमें भारत में देखने को मिलता है, वह यह है कि इसके कारण विभिन्न क्षेत्रों के बीच आर्थिक, राजनीतिक यहाँ तक कि मनोवैज्ञानिक संघर्ष और तनाव दिन–प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। इसका कारण यह है कि प्रत्येक क्षेत्र अपने स्वार्थो या हितों को सर्वोच्च स्थान दे बैठता है और उसे यह चिन्ता नहीं होती कि उससे दूसरे क्षेत्रों को कितना नुकसान होगा। नदी जल के बंटवारे के लिए अन्तर्राज्यीय विवादों, क्षेत्रीय

भाषायी तनावों, आर्थिक टकराव, केन्द्र पर पक्षपाती व्यवहार के आरोप या अपने लिए पृथक राज्य की मांग, जैसे क्षेत्रवाद पर आधारित मुद्दों ने संघीय व्यवस्था के मुख्य सूत्र सद्भाव एवं सौहार्द को नष्ट किया है।

4. स्वार्थी नेतृत्व व संगठन का विकास

क्षेत्रवाद का एक और दुष्परिणाम यह होता है कि इसके फलस्वरूप अलग–अलग क्षेत्रों कुछ इस प्रकार के नेतृत्व व संगठनों का विकास हो जाता है जो जनता की भावनाओं को उभार कर अपने संकीर्ण स्वार्थी की पूर्ति करना चाहते है। इस प्रकार के नेताओं व संगठनों को न तो क्षेत्रीय हितों और न ही राष्ट्रीय हितों का तनिक भी ख्याल रहता है, उनका समस्त ध्यान तो अपनी लोकप्रियता को बढ़ाकर अपने स्वार्थो को सिद्ध करने पर केन्द्रित हो जाता है। ये नेतागण कभी तो भाषा के प्रश्न को लेकर हंगामा करते है और कभी केन्द्रीय सरकार के पक्षपातपूर्ण व्यवहार के विरूद्ध नारा लगाने के लिए सामने आ खड़े होते है, चाहे इनमें से कोई भी समस्या वास्तविक हो या काल्पनिक हो।

5. भाषा की समस्या का अधिक जटिल होना

क्षेत्रवाद का एक और बुरा प्रभाव यह होता है कि क्षेत्रीय वफादारी भाषा की समस्या को सुलझाने में सहायक होने के स्थान पर उसे और भी जटिल बनाने का कारण बनती है। क्षेत्रीय वफादारी का सीधा सम्बन्ध क्षेत्रीय या प्रादेषिक भाषा के प्रति विशेष लगाव से होता है। जिसके कारण प्रादेशिक भाषा को आवश्यकता से अधिक महत्व प्रदान करने की गलती उस क्षेत्र के लोग कर बैठते है। परिणाम यह होता है कि अन्य किसी भाषा के प्रति सहिष्णुता की भावना बिल्कुल नहीं रह पाती और विभिन्न भाषा–भाषी क्षेत्रों के बीच भाषा के प्रश्न को लेकर कटुता बढ़ती चली जाती है। क्षेत्रवाद का यह परिणाम जन कल्याण और राष्ट्रीय प्रगति के दृष्टिकोण से अत्यन्त घातक सिद्ध होता है।

6. राष्ट्रीय प्रगति में अवरोध

क्षेत्रवाद के फलस्वरूप नित नवीन तनावों, विद्रोही गतिविधियों से संघर्षो को बढ़ावा मिलता है। भारत जैसे देश में जहाँ अनेक वर्गो, अनेक भाषा–भाषी एवं अनेक धर्मो को मानने वाले लोगों का निवास है, वहाँ क्षेत्रवाद के आधार पर उपजे आन्दोलनों से आपसी भाईचारा ही विखण्डित नहीं होगा, बल्कि क्षेत्रवाद के विवादों से देश नागरिकों की सम्पूर्ण क्षमता अनावश्यक संघर्षो में नही व्यय हो जाती है। क्षेत्रवाद की मांगो के लिए किए जाने वाले संघर्षो एवं आन्दोलनों से राष्ट्रीय प्रगति में अवरोध उत्पन्न होता है।

8.7 क्षेत्रवाद को रोकने के उपाय

राष्ट्रीय एकता एवं अखण्डता के लिए क्षेत्र एक बाधा है। इस पर रोक लगानी चाहिए। इसे रोकने के लिए निम्न उपाय अपनाये जा सकते है–

(1) केन्द्रीय सरकार की नीति कुछ इस प्रकार की होनी चाहिए कि सभी उप–सांस्कृतिक क्षेत्रों का सन्तुलित आर्थिक विकास सम्भव हो जिससे कि विभिन्न क्षेत्रों के बीच आर्थिक तनाव कम से कम है।

(2) भाषा सम्बन्धी विवादों का शीघ्र समाधान किया जाए। इस सम्बन्ध में सबसे उचित हल यह है कि हिन्दी, अंग्रेजी भाषाओं के साथ–साथ क्षेत्रीय भाषाओं को भी समान मान्यता दी जाए

(3) हिन्दी भाषा को किसी भी क्षेत्रीय समूह पर जबरदस्ती न थोपा जाए। अपितु इस भाषा का प्रचार–प्रसार इस ढंग से किया जाए कि विभिन्न क्षेत्रीय समूह स्वत: ही इसे सम्पर्क भाषा के रूप में स्वीकार कर लें।

(4) संकीर्ण क्षेत्रीय हितों के स्थान पर राष्ट्रीय हितों को वरीयता दी जाए। राष्ट्र विरोधी गतिविधियों कठोरता से उन्मूलन किया जाए। प्रान्तीयता या क्षेत्र विशेषज्ञ के आधार पर की जाने वाली ऐसी मांगो को, जिससे देश के विखण्डन एवं विरोध की आशंका हो–का दृढ़ता से विरोध किया जाए।

(5) सुदृढ़ संघीय व्यवस्था के भावारूप केन्द्र–राज्य एवं अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों को स्वस्थ बनाना अनिवार्य है। सरकारिया आयोग द्वारा 1987 में केन्द्र–राज्य सम्बन्धों की सुदृढ़ता हेतु सुझाई गई अनुशंसाओं को लागू करते हुए संघवाद का सहयोगी ढाँचा स्थापित किया जा सकता है।

(6) प्रचार के विभिन्न साधनों के माध्यम से विभिन्न क्षेत्रों के सांस्कृतिक लक्षणों के विषयों में लोगों के सामान्य ज्ञान को बढ़ाया जा जाए जिससे कि एक क्षेत्र के लोग दूसरे क्षेत्र के प्रति अधिक सहनशीलता की भावना को पनपा सके।

(7) केन्द्रीय मंत्रीमण्डल, योजना आयोग एवं अन्य सरकारी संगठनों में सभी क्षेत्रों के लोगों एवं नेताओं का सन्तुलित प्रतिनिधित्व हों जिससे कि क्षेत्रीय पक्षतापूर्ण नीतियों का खण्डन हो सके और राष्ट्र का विकास हो सके।

(8) शिक्षा एवं जागरूकता से क्षेत्रवाद के आधार पर फैलायी जा रही भ्रान्तियों को दूर किया जाए। राष्ट्र के नागरिकों को सांस्कृतिक आदान–प्रदान, अन्तर्राज्यीय सौहार्दपूर्ण साहित्यिक, सांस्कृतिक, खेल एवं अन्य आयोजनों से सौहार्दपूर्ण सम्बन्धों के विकास हेतु प्रेरित किया जाए। विविध वर्गों एवं क्षेत्रों को पारस्परिक सांस्कृतिक लक्षणों से परिचित कर अनेकता में एकता की गौरवपूर्ण भावना के विकास का प्रयास कर राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ किया जाए।

8.8 सारांश

स्वतंत्रता के बाद भारतीय जन मानस में नवीन आकांक्षाएँ उठने लगी, राज्य के नीति निर्देशक तत्त्व, पंचवर्षीय योजनाएँ आदि कार्यक्रम आदर्श थे, लेकिन इनके बावजूद व्यवहार में गरीबी और आर्थिक विषमता ही बढ़ती गयी। इस स्थिति का स्वाभाविक परिणाम यह हुआ कि राष्ट्रीय एकता और हितों की अपेक्षा क्षेत्रवाद को बढ़ावा मिलने लगा। असन्तोष के इस वातावरण में विभिन्न वर्गों द्वारा शक्ति के लिए संघर्ष की शुरूआत हुई। ऐसे नवीन राजनैतिक दलों का उदय होने लगा, जो कि क्षेत्रीय हितों को लेकर शक्ति अर्जित करने लगे। क्षेत्रवाद का भारतीय समाज की शैली पर काफी प्रभाव पड़ा तथा आन्दोलनात्मक राजनीति को बढ़ावा मिला। क्षेत्रीय आन्दोलनों को चलाने के लिए आर्थिक विषमता, धर्म, जाति और भाषा का सहारा लिया गया। यथार्थ के क्षेत्रवाद की समस्या द्वारा भारत की राष्ट्रीय एकता मार्ग में कंटक बन गयी है। क्षेत्रवाद भारतीय राजनीति का महत्वपूर्ण निर्धारक तत्व तथा राष्ट्रीय एकीकरण की प्रमुख चुनौती रहा है। संकीर्ण क्षेत्रवाद का शीघ्र उन्मूलन अखण्ड विकसित एवं प्रगति की ओर अग्रसर भारत के लिए आवश्यक है।

8.9 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. क्षेत्रवाद को परिभाषित कीजिए।

2. भारतीय समाज में क्षेत्रवाद के कारणों की विवेचना कीजिए।

3. भारतीय समाज एवं राजनीति में क्षेत्रवाद के विभिन्न स्वरूपों की विवेचना कीजिए।

4. क्षेत्रवाद ने भारतीय समाज को किस प्रकार प्रभावित किया है। विवेचना कीजिए।

5. भूमिपुत्र की अवधारणा को स्पष्ट कीजिए।

8.10 संदर्भ ग्रंथ

1. मंगलनी, रूपा, "भारतीय शासन एवं राजनीति" राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, 2005
2. मलहोत्रा, गिरिश, 'इण्डियन गर्वनमेंट एण्ड पालिटिक्स' मुरली लाल एण्ड संस, नई दिल्ली 2006
3. शाह, घनश्याम, सोशल मूवमेण्ट एण्ड स्टेट, सेज पब्लिकेशन, नई दिल्ली 2006
4. चन्द्र. विपिन, "आजादी के बाद का भारत" हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, 1989

इकाई–9

भ्रष्टाचार : स्वरूप एवं विस्तार

इकाई की रूपरेखा

9.0 **उद्देश्य**

9.01 प्रस्तावना

9.02 भ्रष्टाचार का अर्थ एवं परिभाषा।

9.03 भ्रष्टाचार के स्वरूप

9.04 भ्रष्टाचार के कारण

9.05 भ्रष्टाचार की रोकथाम के उपाय

9.06 सारांश

9.07 बोध प्रश्न

9.08 संदर्भ ग्रंथ

9.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप-

1. भ्रष्टाचार का अर्थ व उसका विस्तार को समझ सकेंगे|
2. भारत में उसके कारणों व स्वरूपों के बारे में भी आप समझ सकते है।
3. भ्रष्टाचार जैसी विकराल समस्या का उन्मूलन कैसे किया जा सकता है|

9.01 प्रस्तावना :

औद्योगिक क्रान्ति ने भारतीय समाज के सम्पूर्ण आर्थिक–सामाजिक ढाँचे को परिवर्तित कर दिया है। आज का समाज पूंजीवादी व्यवस्था पर आधारित है और पूँजीवादी व्यवस्था ने मनुष्य को इस सीमा तक भौतिकवादी बना दिया है कि वह व्यक्ति की सफलता का मूल्यांकन उसकी आर्थिक सम्पन्नता से करने लगा है। यही कारण है कि उसकी आर्थिक आवश्यकताएँ एवं महत्वाकांक्षाएँ इस कदर बढ़ गई हैं कि वह जितना मिल गया या मिल रहा है उससे सन्तुष्ट नहीं है और इसलिए वह येन केन प्रकारेण ज्यादा से ज्यादा पाने की लालसा में दिनों दिन भ्रष्टाचार में लिप्त होता जा रहा है। वह हर गलत साधनों से जल्दी–से–जल्दी अकूत सम्पत्ति का मालिक बनना चाहता है। इस प्रयास में वह अपने नैतिक, मानवीय मूल्यों को भी भूल जाता है।

वर्तमान समय में भ्रष्टाचार एक विश्वव्यापी समस्या बन चुका है। आज प्रत्येक क्षेत्र तथा विभाग में भ्रष्टाचार ही भ्रष्टाचार दिखाई देता है। इससे समाज का कोई भी अंग अछूता नहीं बचा है। आज सत्ता के शीर्ष से लेकर सबसे

निचली पायदान तक भ्रष्टाचार का बोलबाला है। चाहे वह सामाजिक क्षेत्र हो, राजनीतिक क्षेत्र हो, आर्थिक क्षेत्र हो या कोई अन्य, भ्रष्टाचार से कोई अछूता नहीं है। भ्रष्टाचार की यह समस्या दिनों दिन इतनी जटिल होती जा रही है कि इस पर नियंत्रण रखना काफी कठिन है। देश के अधिकांश सत्ताधारी व्यक्तियों एवं प्रशासनिक अधिकारियों के जीवन, व्यवहार, कार्यक्रम एवं विचार भ्रष्टाचार का एक अभिन्न अंग बन गया है। प्रजातंत्र, समाजवाद, स्वच्छ प्रशासन, सामाजिक न्याय एवं राष्ट्रीय चरित्र आदि आज आडम्बर मात्र बन कर रह गए हैं। यहाँ के प्रबुद्ध जन, राजनीतिज्ञ, प्रशासक व अन्य व्यक्ति भ्रष्टाचार पर लम्बी–लम्बी बहस करते हैं एवं व्याख्यान भी देते हैं लेकिन अफसोस तब होता है जब इनकी कथनी व करनी में अन्तर दिखाई देता है। यहाँ की जनता भी अब भ्रष्टाचार को झेलने की आदि हो गई है। भ्रष्टाचार अधिकांश व्यक्तियों के जीवन का अंग बन चुका है। गुन्नार मिर्डल ने भ्रष्टाचार को दक्षिण–पूर्व एशिया की लोकरीति कहा है। इससे पता चलता है कि भ्रष्टाचार को लोग एक लोक–रीति' की तरह अपना चुके हैं। इससे निजात पाना अत्यन्त कठिन है।

प्राचीन समय में राज्य व समुदाय का आकार छोटा होने के कारण लोग एक दूसरे से परिचित होते थे। उनका कार्यक्षेत्र भी सीमित था जिससे भ्रष्टाचार की समस्या इतनी गम्भीर नहीं थी। यद्यपि कौटिल्य ने अपने अर्थशास्त्र में उस युग में पाए जाने वाले विभिन्न प्रकार के भ्रष्टाचारों का उल्लेख किया है। लेकिन उस समय राज्य के कार्यो के सीमित क्षेत्र और लेन–देन के साधनों के अभाव के कारण भ्रष्ट होने या भ्रष्ट करने के अवसर भी सीमित थे। प्राचीन समय में लोग परम्परा व धार्मिक नीतियों के नियमों से बँधे हुए थे। आज ऐसा नहीं है। धीरे–धीरे समय बदला. समुदाय का आकार बढ़ा तो नियंत्रण का अधिकार शासकों के हाथ में आ गया। आज हर कार्य राज्य द्वारा सम्पन्न होता है इसलिए घूस देने की प्रवृति को बढ़ावा मिलता है। आज विभिन्न स्तरों पर जैसे गाँव, कस्वा, शहर, राज्य तथा केन्द्र पर लोकतांत्रिक सरकार के नए स्वरूप और सरकारी क्रियाओं के विस्तार ने विभिन्न प्रकार के भ्रष्टाचार को जन्म दिया है। इस व्यवस्था में कोई हानि किसी को व्यक्तिगत रूप से वहन नहीं करनी पड़ती बल्कि सामूहिक संस्था अथवा राज्य को वहन करनी होती है और ऐसी स्थिति में भ्रष्ट व्यक्ति की पहचान कर पाना भी कठिन है। प्रत्येक विकासशील समाज में भ्रष्टाचार की समस्या किसी न किसी रूप में पनपती है। आज यह एक फैशन बन गया है। जो अधिकारी घूस नहीं लेते या भाई–भतीजावाद नहीं दिखाते उन्हें आऊट–डेटेड मानकर उपहास का पात्र बनाया जाता है। इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि भ्रष्टाचार की समस्या प्राचीन समय में गम्भीर नहीं थी जबकि आज यह एक गम्भीर समस्या बन झी है।

9.02 भ्रष्टाचार का अर्थ एवं परिभाषा :

मैकाईवर का कथन कि, समाज सामाजिक सम्बन्धों का जाल है' इस तथ्य की पुष्टि करता है कि समाज में सामाजिक सम्बन्धों की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। सामाजिक सम्बन्ध मनुष्य के आचार–व्यवहार के तौर–तरीकों को निर्धारित करते हैं। मानव समाज में पाए जाने वाले आचार–व्यवहार को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है –

1. शिष्टाचार, 2. भ्रष्टाचार। शिष्ट व शालीन व्यवहार शिष्टाचार और इसके विपरीत आचरण को भ्रष्टाचार कहा जाता है। भ्रष्ट का अर्थ निकृष्ट से है और आचार का तात्पर्य मनुष्य के क्रिया–कलाप से है। इस प्रकार भ्रष्टाचार का अर्थ मानव के निकृष्ट आचार–व्यवहार से हुआ। प्रत्येक समाज अपने सदस्यों के लिए कुछ व्यवहार प्रतिमान निर्धारित करता है और इनका उल्लंघन करना भ्रष्टाचार कहलाता है।

परिभाषा :– भ्रष्टाचार को कई विद्वानों ने परिभाषित किया है जैसे– रॉबर्ट सी. बुक्स का कहना है, कोई प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष व्यक्तिगत लाभ प्राप्त करने के लिए जान–बूझकर प्रदत्त कर्त्तव्य का पालन न करना. राजनीतिक भ्रष्टाचार है। भ्रष्टाचार सदैव किसी स्पष्ट अथवा अस्पष्ट लाभ के लिए कानून और समाज के विरोध में किया जाने वाला कार्य है।

"इस परिभाषा के अनुसार भ्रष्टाचार जानबूझ कर अपने लाभ के लिए किया जाता है। इससे समाज एवं कानून दोनों के नियमों का उल्लंघन होता है।

आर. भी. गुप्ता का कथन है कि, "भ्रष्टाचार का तात्पर्य उन व्यक्तियों द्वारा अर्जित अनुचित लाभ से है, जो सार्वजनिक हितों को तिलांजलि देकर सामाजिक प्रतिष्ठा, पद तथा धन के कारण कानून की आँखों में धूल झोंकने में समर्थ होते हैं। इस परिभाषा से यह पता चलता है कि भ्रष्टाचार में लिप्त व्यक्ति अपने लाभ के लिए जन–साधारण के हितों की अवहेलना करते. हैं। ऐसे व्यक्ति कानून का उल्लंघन करने से भी नहीं चूकते।

भ्रष्टाचार निरोधक समिति, 1962 ने भ्रष्टाचार के सम्बन्ध में कहा है कि "एक सार्वजनिक पद (Office) अथवा विशेष स्थिति (Position) के साथ संलग्न शक्ति तथा प्रभाव का अनुचित या स्वार्थपूर्ण प्रयोग ही भ्रष्टाचार है।

"**मुहार** ने भ्रष्टाचार को परिभाषित करते हुए कहा है, "भ्रष्टाचार कई रूप धरण कर सकता है। जैसे किसी राजनीतिज्ञ द्वारा अपने प्रभाव का किसी सार्वजनिक कार्यतंत्र (Public Functionary) अर्थात् सरकारी कर्मचारी या अधिकारी पर अनुचित उपयोग करना या अपने जातिगत या पारिवारिक बिन्दुओं का लाभ पहुँचाना अथवा यह किसी आर्थिक प्रलोभन के कारण भी हो सकता है।"

भ्रष्टाचार की परिभाषा भारतीय संदर्भ में करते हुए जे. पी. मिन्दरो ने लिखा है कि, ' 'भ्रष्टाचार वह कार्य है जिसमें अधिकार सम्पन्न व्यक्ति अपने पद, स्तर या प्रभाव का प्रयोग अनुचित लाभ की प्राप्ति के लिए अनुपयुक्त एवं स्वार्थपूर्ण ढंग से करता है। "इस परिभाषा से तात्पर्य है कि भ्रष्टाचार अधिकतर अधिकार सम्पन्न व्यक्तियों द्वारा किया जाता हैं। भारतीय दण्ड संहिता की धारा 161 के अनुसार कोई भी' सार्वजनिक कर्मचारी वैध पारिश्रमिक के अतिरिक्त अपने या किसी दूसरे व्यक्ति के लिए जब कोई लाभ इसलिए लेता है कि सरकारी निर्णय पक्षपात ढंग से किया जाए तो यह भ्रष्टाचार है तथा इससे सम्बन्धित व्यक्ति भ्रष्टाचारी है। इससे स्पष्ट होता है कि किसी भी सरकारी कर्मचारी का अपने वैध वेतन के अलावा कुछ भी इस उद्देश्य से ग्रहण करना कि सरकारी निर्णय में पक्षपात किया जाए भ्रष्टाचार कहलाता है।

फ्रीमैन एव जोन्स लिखते हैं, "वे समस्त कार्य जो लोकसेवकों, प्रशासनिक कर्मचारियों तथा आम नागरिकों की ईमानदारी एवं सत्यनिष्ठा का नाश करते हैं और जो प्रभुता एवं अधिकार सम्पन्न व्यक्तियों को अपने सम्मान, कर्त्तव्य परायणता तथा निष्ठापूर्वक दायित्व को निभाने की भावना को त्यागकर घूस एवं अन्य प्रकार के अनुचित लाभों को प्राप्त करने का अवसर या प्रेरणा प्रदान करते हैं।"

उपर्युक्त परिभाषाओं से निम्न निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं –

भ्रष्टाचार एक गम्भीर सामाजिक समस्या है।

यह अक्सर अधिकार सम्पन्न व्यक्तियों द्वारा किया जाता है।

ऐसे व्यक्ति अपने पद एवं अधिकार का दुरूपयोग अनुचित लाभ प्राप्ति के लिए करते हैं।

ऐसे व्यक्ति समाज एवं कानून का उल्लंघन करने के साथ उन्हें प्रभावित करने की क्षमता भी रखते है।

भ्रष्टाचार में लिप्त व्यक्ति सहयोग और सेवा की भावना को त्याग कर अपने स्वार्थ साधन का कार्य करता है।

निजी स्वार्थ के लिए समाज एवं राष्ट्र के हित को भूल जाता है।

ई. एस. एम. प्रकाशम ने "सरकारी सेवार्थियो में व्याप्त भ्रष्टाचार" का उल्लेख करते हुए निम्न तत्वों की ओर ध्यान दिलाया है :–

चेतन अवस्था में किया गया कोई भी कार्य जो नियम विरूद्ध है।

न्याय या नैतिकता के मान्य सिद्धान्तों के विरूद्ध किया गया कार्य।

सार्वजनिक कर्त्तव्य पालन के पक्षपातपूर्ण कार्य।

जान–बूझकर कार्य में विलम्ब।

जान–बूझकर गुमराह करने के लिए सूचना या रिपोर्ट देना।

किसी प्रमाण या तथ्य को दबाना या उसकी गलत व्याख्या करना।

जानते हुए भी दूसरे व्यक्तियों के गलत कार्यों को नजरअन्दाज।

9.03 भ्रष्टाचार के स्वरूप :

भारतीय समाज के सार्वजनिक जीवन में भ्रष्टाचार का विकास आधुनिक युग की एक महत्त्वपूर्ण देन है। इस समय भारतीय समाज को सम्पूर्ण जीवन भ्रष्टाचार से घिरा हुआ है। भारत में प्रचलित भ्रष्टाचारों का क्षेत्र इतना व्यापक है कि इसके सम्बन्ध में जितना कहा जाए कम है। सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और यहाँ तक कि धार्मिक संस्थाओं में भी भ्रष्टाचार का बोलबाला है। विभिन्न सभागार, पत्रों एवं पत्रिकाओं में भ्रष्टाचार के मामले आए दिन उजागर होते रहते हैं। ' 'स्पेशल पुलिस स्थापन, दिल्ली (Special Police Establishment, Delhi) द्वारा समय–समय पर प्रकाशित रिपोर्ट से भी पता चलता है कि व्यभिचार, भ्रष्टाचार, उच्च स्तरीय अपराध एवं गैर कानूनी कार्यो में अधिकतर इंजीनियर, डायरेक्टर आफ सप्लाइस एण्ड डिस्पोजल्स वन अधिकारी, सेना अधिकारी, आयकर एवं बिक्रीकर अधिकारी, सार्वजनिक निर्माण विभाग के अधिकारी एवं मंत्रीगण आदि ही फँसे हुए होते हैं। वास्तविकता तो यह है कि सामाजिक जीवन की जटिलता के साथ–साथ भ्रष्टाचार का क्षेत्र भी व्यापक होता जा रहा है। फलस्वरूप अवैध व्यापार, टैक्स की चोरी, घूसखोरी, खाने–पीने की वस्तुओं में मिलावट व कालाबाजारी जैसी समस्याएँ उत्पन्न हो रही हैं। सरकार को धोखा देकर, कानून की आँखों में धूल झोंक कर अपनी सामाजिक तथा आर्थिक प्रतिष्ठा को बढ़ाने की एक होड़ हमारे समाज में चल रही है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि भारतीय समाज में भ्रष्टाचार विभिन्न क्षेत्रों एवं स्तरों पर व्यापत है जो निम्न प्रकार से है।

आर्थिक क्षेत्र में भ्रष्टाचार – आर्थिक क्षेत्र में भ्रष्टाचार का उदाहरण स्टॉक एक्सचेंज में बेईमानी, व्यापार में रिश्वत, भ्रष्ट उपायों से ठेके लेना, झूठे प्रचार और विज्ञापन, कम तोलना, सरकारी टैक्स न देना, फर्मों का दिवाला निकाल कर जनता का पैसा हड़प कर जाना, पेटेन्ट ट्रेड मार्का और कॉपीराइट के नियमों का उल्लंघन, श्रम सम्बन्धी नियमों का उल्लंघन इत्यादि हैं। आज व्यापार में सब तरफ व्यापक मिलावट भ्रष्टाचार का एक उदाहरण है। अधिकतर खाद्य वस्तुओं में किसी न किसी प्रकार की मिलावट पाई जाती है लेकिन सरकारी कर्मचारियों को रिश्वत देकर व्यापारी साफ बच निकलते हैं। कठिनाई से मिलने वाली वस्तुएँ काला बाजारी मार्केट में सब तरफ आसानी से मिल जाती है लगभग सभी वस्तुओं की नकली प्रतिलिपियाँ बाजार में मिल जाती हैं। इसे रोकने का सरकार के पास कोई प्रबन्ध नहीं है। इसके अलावा वर्तमान समय में पूँजीपति अपने कर्मचारियों का आर्थिक शोषण कर अधिक–अधिक धन कमाना चाहते हैं। न केवल पुरूष श्रमिकों का शोषण किया जाता है बल्कि स्त्री तथा बाल श्रमिकों का भी शोषण उद्योगपति करते हैं। गर्भवती महिला श्रमिक को काम से निकाल दिया जाता है। कार्य के दौरान दुर्घटनाग्रस्त होने वाले श्रमिक को मुआवजा देने में आनाकानी करते हैं। कुछ जैसे आपातकाल में भी ये व्यापारी अपने काले कारनामों से बाज नहीं आते बल्कि उस समय तो देश में वस्तुओं की कृत्रिम कमी उत्पन्न कर देते हैं ताकि उन वस्तुओं की कीमतें बढ़ जाएं और वे अधिक से अधिक लाभ कमा सकें। देश पर विदेशी आक्रमण के समय भी ये कालाबाजारी करने से नहीं चूकते। ये नकली

दवाइयाँ बेचते हैं। आज बाजार में किसी चीज की शुद्धता की गारन्टी नहीं है क्योंकि बिना मिलावट के बाजार में कोई वस्तु होती ही नहीं है। प्रत्येक वस्तु का कोई न कोई विकल्प इन व्यापारियों ने ढूंढ लिया है। बादाम अखरोट की जगह मूंगफली या खोए में शकरकन्द, घी में मिलावट आदि के सैकड़ों उदाहरण दिए जा सकते हैं। इस प्रकार व्यापारियों द्वारा किए गए भ्रष्टाचार इतने अधिक हैं कि उनकी गिनती करना मुश्किल है। उद्योगपतियों और व्यापारियों के लिए भ्रष्टाचार न केवल अनुपार्जित बड़े लाभों की प्राप्ति का एक सुगम तरीका है वरन् यह उनके व्यवसाय को चलाते रहने का एक आवश्यक साधन भी है।

व्यक्ति और भ्रष्टाचार :– बिना अधिकारियों को घूस दिए भी कानून का उल्लंघन किया जा सकता है। जैसे बहुत से दुकानदार कम लाभ दिखाकर कम टैक्स अदा करते हैं। इसी श्रेणी में पढ़े लिखे अपराधी आते हैं। केन्द्रीय राजस्व परिषद का एक अनुमान है कि उच्चारण आय समूह के निर्धारण द्वारा वार्षिक रूप से लगभग 45 करोड़ का कर छिपाया जाता है। वर्ष 1951 की स्वैच्छिक प्रकटीकरण योजना के अन्तर्गत 20,912 मामलों में स्वयं करदाताओं द्वारा 30 करोड़ रूपये छिपाए गए धन के रूप में स्वीकार किया गया था। इस प्रकार प्रकट की गई राशि उस धनराशि की छह गुनी अधिक थी जो मूलत: होनी बताई गई थी। इससे यह पता चलता है कि व्यक्ति विभिन्न रूपों में करों की चोरी कर भ्रष्टाचार को बढ़ावा देते हैं।

प्रशासनिक क्षेत्र में भ्रष्टाचार :– प्रशासन में विभिन्न सरकारी दफ्तर, पुलिस, न्यायालय तथा नगरपालिका आदि आती है। इनका अलग–अलग विवरण निम्न प्रकार से दिया जा सकता है:–

सरकारी कार्यालयों में भ्रष्टाचार :– सरकारी अधिकारियों में पाए जाने वाले भ्रष्टाचार के बारे में प्रीतिश नन्दी का कहना है, "भ्रष्टाचार का मतलब है कि हर चीज की एक छुपी कीमत होती है। इसकी शुरूआत होती है सरकारी अधिकारियों से, जिनकी गिनती सम्भवत: देश के सबसे अमीर लोगों में होती है। यद्यपि आपका कभी इस ओर ध्यान नहीं जाता, क्योंकि ज्यादातर दौलत नकदी या बेनामी सम्पत्ति के रूप में होती है। एकाध बार यह बाहर निकलती है जब उनमें से किसी–किसी की कमाई इतनी इतराने लगती है कि सीबीआई उन्हें अपने शिकंजे में ले लेती है। सरकार इसे रोकने के लिए वेतन–भत्तों में वृद्धि करती है। लेकिन वास्तव में वह उन अधिकारियों को उनके भ्रष्टाचार, आलसीपन और आम नागरिक को परेशान करने के लिए सौगात देती है। क्योंकि वेतन वृद्धि से न तो उनकी कार्यकुशलता में कोई सुधार या वृद्धि होती है, न ही भ्रष्टाचार में कमी आती है। कई लोगों का यह सोचना है कि इतना पैसा और वह –भी उस विशाल धनराशि के अलावा जो वे टेबल के नीचे से कमाते हैं, वे हजारों शासकीय कर्मियों को विलासिता के लिए अनाप–शनाप खर्च हेतु प्रेरित किया है। आज अधिकांश सरकारी अधिकारी या कर्मचारी बिना घूस लिए कोई काम नहीं करते। आम जनता का सरकारी अधिकारियों पर से विश्वास उठ गया है। वे किसी भी काम को अपना कर्त्तव्य समझ कर संपादित नहीं करते बल्कि कोई काम भूले–भटके अगर बिना घूस दिए हो भी गया तो उसका अहसान जताते हैं जैसे उन्होंने अपने कर्तव्य का एलान नहीं बल्कि जनता को उक्त किया है। वरना जब लोग अधिकारियों के पास चक्कर लगाते–लगाते थक जाते हैं तो मजबूरन अपना कार्य सम्पादित करवाने के लिए घूस देनी पड़ती है। जब कोई चरित्रवान या ईमानदार कर्मचारी इसका विरोध करता है तो अधीनस्थ कर्मचारी या अधिकारी सब उसके विरूद्ध हो जाते हैं और उसने तरह–तरह से परेशान किया जाता है या उसका तबादला करा दिया जाता है। सरकारी अधिकारियों के घूस लेने की प्रवृत्ति के कारण ही गम्भीर से गम्भीर अपराध होते हैं। आज कोई भी अपराधी घूस देकर उनसे नाजायज काम करवा लेता है। क्योंकि ये लोग उच्च अधिकारियों या पुलिस अफसरों को बंधी–बंधाई रकम हर माह पहुँचा कर उनका मुह बंद कर देते हैं और बदले में मनमानी करते हैं। इनकी मदद से ही श्वेतपोष अपराध फलता फूलता है।

सार्वजनिक निर्माण विभाग में ओवरसियरो और इन्जीनियरों को रिश्वत दिए बिना कोई भी निर्माण कार्य पास नहीं किया जाता, न ही किसी ठेकेदार का टेण्डर मंजूर हो सकता है। ऐसे लोग कभी कानून की गिरफ्त में आ भी जाते हैं तो फिर भ्रष्ट उपायों से आसानी से निकल जाते हैं। ऐसे लोग कहा करते हैं कि हर आदमी की एक कीमत होती है, वह कीमत चुका कर उससे कोई भी काम लिया जा सकता है।

सरकारी कार्यालयों में भ्रष्टाचार को देखकर यह कहना कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी कि देश में सबसे अधिक भ्रष्टाचार इनमें ही व्याप्त है। यदि आज इन कार्यालयों में भ्रष्टाचार समाप्त हो जाए और वे ईमानदारी से काम करने लगें तो देश का कायाकल्प हो जाएगा और काफी हद तक देश से भ्रष्टाचार समाप्त हो जाएगा।

पुलिस विभाग में भ्रष्टाचार – पुलिस विभाग में गरीब रिक्शा वाले से लेकर धार्मिक करोड़पति तक सबसे रिश्वत ली जाती है। वास्तव में अपराध फलते–फूलते ही पुलिस के सहयोग से हैं। कोई भी कानून तोड़ने पर पुलिस को पैसा देकर छूटना आसान बात है। अपराधों को रोकने के लिए कानून तो बन जाते हैं परन्तु उनको क्रियान्वित नहीं किया जाता है। घूस एक ऐसा औजार है जिससे कानून बड़ी आसानी से टूट जाते हैं। कानून तोड़ कर अपराध किए जाते हैं और राजनैतिक कार्यकर्त्ता अपराधियों का साथ देकर समाज के संभ्रांत व्यक्तियों के लिए एक समस्या पैदा करते हैं। पुलिस राजनेता और अपराधियों की सांठ–गांठ के चर्चे आम सुनाई देते रहते है।

न्यायालयों में भ्रष्टाचार – अन्य कार्यालयों की तरह ही न्याय पक्तिका का क्षेत्र भी भ्रष्टाचार से अछूता नहीं है। अगर यह कहा जाए कि आज न्याय बिकता है तो गलत नहीं होगा। जिस देश में न्यायालयों में भी व्यापक भ्रष्टाचार हो उसे जनतंत्र की संज्ञा देना जनतंत्र का अपमान करना है। रिश्वत देकर मुकदमें की तारीख बदला लेना, घूस देकर फैसले बदलवाना कोई बड़ी बात नहीं है। न्याय के क्षेत्र में भ्रष्टाचार इतना अधिक है कि भारत में वकील का पेशा ही झूठ बोलने का पेशा माना जाने लगा है। महात्मा गाँधी ने इसीलिए इस पेशे की बहुत निन्दा की थी।

चिकित्सा क्षेत्र में भ्रष्टाचार – डॉक्टरों को समाज में सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है। मानव को नया जीवन देने वाले के रूप में इनकी गिनती होती है। मरीज इनको भगवान समझता है। लेकिन बहुत अफसोस व शर्मनाक बात है कि आज इस पेशे में भी बहुत सी खामियाँ आ गई हैं। अवैध था हत्या व मानव अंगों का व्यापार शव–परीक्षण में गलत रिपोर्ट देना तथा जाली प्रमाण पत्र देकर अपराधी को फाँसी के तख्ते से बचाना है। दवा की दुकान व जाँच प्रयोगशालाओं से कमीशन लेना, सरकारी कर्मचारियों के फर्जी दवाओं के बिलों पर हस्ताक्षर करना आदि कई अपराध इन श्वेतपोष डॉक्टरों द्वारा किया जाना आम बात है। अधिक से अधिक धन कमाने की लालसा में वे अपनी सारी नैतिकता व मानवता को ताक पर रख देते हैं।

धार्मिक क्षेत्र में भ्रष्टाचार :– धर्म के नाम पर धार्मिक स्थलों पर अनैतिक कार्यों को धर्म के क्षेत्र में पाए जाने वाले भ्रष्टाचार के रूप में देखा जा सकता है। लोग मन्दिर एंव धर्मशालाएँ धार्मिक भावना से बनवाते हैं लेकिन इनकी देखभाल करने वाले पंडे व पुजारियों द्वारा भोले–भाले भक्तों का शोषण किया जाता है। धर्म एवं अन्धविश्वास के नाम पर लोगों को डरा कर पैसा वसूलना, महिलाओं का यौन शोषण उन्हें देवदासी बनाना आदि घटनाओं से धार्मिक भ्रष्टाचार का पता चलता है। आज बहुत से धार्मिक स्थल गांजा, अफीम आदि नशीले पदार्थो का अड्डा बन गए हैं।

सामाजिक क्षेत्र में भ्रष्टाचार – सामाजिक भ्रष्टाचार अनाथालयों, विधवा आश्रमों, नारी निकेतनों, कामकाजी महिला छात्रावासों, गौशालाओं तथा ऐसे अनेक सार्वजनिक संस्थाओं में देखा जा सकता है। आजकल शिक्षण संस्थाओं में भी व्यापक भ्रष्टाचार देखने में आता है जैसे– कन्याओं की शिक्षण संस्थाएँ, नाट्य व संगीत संस्थाओं में उनका यौन शोषण कम वेतन देकर अधिक वेतन की रसीद लिखवाना, पास कराने के नाम पर पैसा वसूलना, विद्यार्थियों से बढ़ा–चढ़ा कर फीस लेना, बनावटी खर्च दिखाकर सरकार से अनुदान वसूलना आदि। कहीं–कहीं तो

केवल कागजों में ही विद्यालय संचालित होता दिखा कर वर्षो सरकार से सहायता वसूल कर ली जाती है। अधिकतर निजी विद्यालयों और कॉलेजों में प्रबन्ध समिति के सदस्य अपने ही रिश्तेदारों व जान–पहचान के लोगों को भर कर अपने हित में निर्णय करवाते रहते हैं और विद्यादान के नाम अपनी तिजौरियाँ भरते रहते हैं।

राजनैतिक क्षेत्र में भ्रष्टाचार :– राजनीति में पूरी तरह से फैल चुके भ्रष्टाचार के कारण ही आज यह हर क्षेत्र में व्याप्त हो चुका है। आज छोटे से छोटे राजनीतिक कार्यकर्ता से लेकर सत्ता के शीर्ष पद पर आसीन व्यक्ति तक सभी भ्रष्टाचार के दलदल में फँसे हुए हैं। आए दिन समाचार पत्रों में मंत्रियों के भ्रष्टाचार में लिप्त होने की खबरें छपती रहती हैं। यह बात अलग है कि इनमें से अधिकतर मामले या तो दबा दिए जाते हैं या सम्बन्धित व्यक्ति को बचा लिया जाता है। बड़े राजनीतिक नेता नीचे के स्तरों तक भ्रष्टाचार फैलाते हैं। बड़े नेताओं द्वारा छोटे कार्यकर्ताओं को मोहरे की तरह इस्तेमाल किया जाता है। लेकिन वे भी इन आकाओं से संरक्षण प्राप्त कर भ्रष्टाचार में लिप्त रहे हैं, पकड़े जाने पर सुरक्षित बच भी जाते हैं।

सरकार की जिन नीतियों से व्यापारियों को लाभ पहुँचता है, वही नीति सरकार अपनाती है क्योंकि ये ही लोग चुनाव के समय उनकी आर्थिक मदद करते हैं। राजनीतिक अपराधीकरण तो आज भारतीय राजनीति का पर्याय बन गई है। आज जिनके पास बाहुबल है, वही सांसद या विधायक बन जाते हैं, ये लोग अपराधिक चरित्र वाले होते हैं, मूल्यों की राजनीति से इनका कोई सरोकार नहीं होता। कहते हैं कि भारत देश को अंग्रेजी के 'पी' अक्षर ने बरबाद कर दिया है– (1) Population (2) Poverty, (3) Politicians.

इसके अतिरिक्त संगठित अपराधों के पीछे राजनीतिज्ञों का बहुत बड़ा हाथ रहता है जिसके कारण भ्रष्टाचार को बढ़ावा मिलता है। संगठित अपराधों में ठगी, जुआ, तस्करी, अपहरण व आतंकवाद को शामिल किया जा सकता है। जिस शहर में राजनीतिक भ्रष्टाचार अधिक होता है उसमें गैर–काम अधिक होते हैं और अपराधों पर कोई कार्यवाही भी नहीं की जाती। इस प्रकार कुछ अपराध तो कार्यकर्ताओं के भ्रष्ट होने के कारण ही पनपते है उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि भ्रष्टाचार के विविध स्वरूप हैं जो कि परस्पर सम्बन्धित हैं।

9.04 भ्रष्टाचार के कारण

सामान्य रूप से भ्रष्टाचार के मुख्य कारण निम्नलिखित हैं :–

भौतिकवादी आदर्श :– आधुनिक युग भौतिकवादी युग है। जिसमें धन एवं भोग–विलास को प्राथमिकता दी जाती है। जिसके पास भी ये भोग–विलास के साधन होते हैं उन्हें समाज में सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है, उनकी समाज में ऊँची प्रतिष्ठा होती है। धन अर्जित करने की अभिलाषा प्रत्येक व्यक्ति के मन में होती है, इसके लिए वह कोई भी नाजायज या गैर कानूनी तरीके को अपनाने में नहीं हिचकिचाता। वह सिर्फ धन कमाना चाहता है। यहाँ तक कि भ्रष्टाचार का बोलबाला धार्मिक स्थलों पर भी देखने को मिलता है। अक्सर मन्दिर के पंडे व पुजारी भक्तजनों द्वारा चढ़ाए गए प्रसाद में से अधिकांश भाग निकाल लेते हैं और उसे दुकानदारों को बेच देते हैं। इस प्रकार भ्रष्टाचार सर्वत्र व्याप्त है और इसका कारण समाज द्वारा भौतिकवादी मूल्यों को सर्वोपरि मानना है।

अत्यधिक प्रतिस्पर्धा :– वर्तमान प्रतिस्पर्धात्मक युग में जीवन के हर क्षेत्र में व्यक्ति को कड़ी प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ता है। जब इस प्रतिस्पर्धा की दौड़ में व्यक्ति जायज या कानूनी तरीके से सफल नहीं हो पाता तब वह भ्रष्ट तरीकों को भी अपनाने से नहीं हिचकते हैं, लोगों में यह गलत धारणा घर कर गई है कि प्रेम, राजनीति व व्यापार में कुछ भी अनुचित नहीं है। इसलिए वे प्रतिस्पर्धा के दौरान सभी अनुचित व भ्रष्ट तरीके अपनाते हैं। इस प्रकार के विकृत आदर्श के कारण भ्रष्टाचार पनपता व बताता है।

जनसांख्यिकीय विभिन्नताएँ – शिक्षा, व्यापार व रोजगार के कारण हर जगह विभिन्न राष्ट्र, प्रान्त, लिंग, प्रजाति, जाति एवं भाषा के लोग निवास करते पाए जाते हैं, उन सब में विभिन्नता एवं गतिशीलता के कारण वे कभी आपस में परिचित नहीं हो पाते, उनमें घनिष्ठता नहीं आ पाती। इसलिए अपरिचितों के बीच वह भ्रष्ट आचरण करने में नहीं हिचकिचाता, परिणामस्वरूप मनमाने ढंग से कार्य करते हैं, उन पर कोई नियंत्रण नहीं रहता। वह अपरिचित व्यक्ति के घूस लेने में किसी प्रकार की झिझक महसूस नहीं करता।

अपर्याप्त वेतन :– चतुर्थ श्रेणी के सरकारी कर्मचारियों में भ्रष्टाचार का एक कारण अपर्याप्त वेतन है। वे भ्रष्ट तरीकों से वेतन की कमी को पूरा करने की कोशिश में लगे रहते हैं। काम निकालने वाले लोग सबसे पहले इनसे ही सम्पर्क करते हैं क्योंकि ये कर्मचारी थोड़े से पैसों से ही व्यक्ति का काम करवाने में सक्षम होते हैं। अक्सर यह देखा गया है कि सरकारी कार्यालयों में बड़े–बड़े अफसरों से काम करवाने के लिए चपरासियों से ही सम्पर्क किया जाता है। रेलवे, कचहरी, तहसील, सप्लाई का दफ्तर आदि में कर्मचारी दो–दो, चार–चार रुपए की घूस लेकर काम करवा देते हैं।

प्रजातांत्रिक शासन व्यवस्था :– आज हमारे देश की शासन व्यवस्था लोकतांत्रिक पद्धति पर आधारित है जिसमें दलबन्दी को विशेष महत्व दिया जाता है। हमारे देश में विभिन्न प्रकार के राजनीतिक दल पाए जाते हैं। जिनके कारण रिश्वत, पक्षपात, बेईमानी तथा दूसरी कई बुराइयों का बाजार शर्म हो जाता है। प्रजातंत्र में जनता द्वारा चुने हुए लोग ही शासन करते हैं चाहे उनके शासन करने की योग्यता न हो। इसलिए प्रजातंत्र में भ्रष्ट उपायों से मतदाताओं से वोट खरीदे जाते हैं। जब ऐसे लोग सरकार बनाते हूँ तो वे अपनी सत्ता को बनाए रखने के लिए हर प्रकार के अनुचित तरीकों का सहारा लेते हैं। चुनावों में खर्च किसी गए पैसे को वे सत्ता में आने के बाद फिर से भ्रष्ट आचरण द्वारा बटोरने की कोशिश की जाती है। इतना ही वह वे जिन दल के वोटों के चुना जाता है उस को हर प्रकार से लाभ पहुँचाने की चेष्टा करता है।

प्रजातांत्रिक सरकार की विकृत व्यवस्था :– आमतौर पर प्रजातांत्रिक पद्धति में सत्ता परिवर्तन होने के साथ ही सरकारी अधिकारियों एवं कर्मचारियों का स्थानान्तरण कर अपने विश्वास–पात्र अधिकारियों को पदस्थापित किया जाता है जिससे कि वे उनके हर प्रकार के भ्रष्ट आचरण को प्रश्रय दें: बिना किसी देश या कारण के अधिकारियों या कर्मचारियों का तबादला कर देना भ्रष्टाचार का जीता–जागता उदाहरण है। चुनाव में जीत कर आए नेता अपनी मनमानी या हितों के साधन के लिए इस प्रकार का काम करके भ्रष्टाचार को बढ़ावा देते है।

राजनीतिक आचार–संहिता का अभाव – वर्तमान समय में बड़े–बड़े अनेकों राजनैतिक संगठन तो हैं लेकिन उन पर नियंत्रण रखने के लिए आवश्यक आचार–संहिता का विकास नहीं किया गया। जिस दल के हाथ में सत्ता होती है वे सत्ता का जमकर दुरूपयोग करते हैं। मंत्री, सांसद, उद्योगपति व उच्च अधिकारी सब मिल जुल कर अपनी स्वार्थसिद्धि के लिए सत्ता एवं पद का दुरूपयोग करते हैं और जनता देखती रहती है।

उच्चाधिकारियों का सहयोग – हमारे देश में भ्रष्टाचार की व्यापकता का एक कारण इसमें उच्च पदासीन अधिकारियों का सहयोग भी है। ये अधिकारी स्वयं तो भ्रष्टाचार हैं ही, इसमें अन्य लोगों की सहायता भी करते हैं। इस प्रकार ये लोग तस्करी, कालाबाजारी, मिलावट व जालसाजी आदि अवैध कार्य करने में इसलिए सफल हो जाते हैं क्योंकि उन्हें यह विश्वास होता है कि उच्च सरकारी अधिकारी, राजनेता, मंत्री व विधायकों का हाथ उनकी पीठ पर है।

बदलते मूल्य :– सामाजिक परिवर्तन के साथ ही समाज के मूल्य भी बदल रहे हैं। प्राय: देखा जाता है कि ईमानदार और कर्त्तव्यनिष्ठ लोग दु:खमय एवं दरिद्रता का जीवन जी रहे हैं तथा भ्रष्ट व्यक्ति सभी भौतिक सुखों को भोग रहा है। इसके अतिरिक्त आज नैतिक मूल्यों का इतना अवमूल्यन हो गया है कि दुश्चरित्र व्यक्ति को भ्रष्ट आचरण करने में कोई संकोच भी नहीं होता। ऐसे ही लोगों के कारण भ्रष्टाचार बढ़ता है और उनकी देखा–देखी दूसरे लोग भी अनैतिक और समाज–विरोधी आचरण की ओर प्रवृत्त होते हैं।

सरकार का व्यापक क्रियाकलाप / सरकारी कार्यो का विस्तृत क्षेत्र :– आज सरकारी कार्य क्षेत्र इतना विस्तृत होता जा रहा है कि कोई भी काम एक विभाग या कार्यालय द्वारा सम्पन्न नहीं किया जा सकता। इसके कारण किसी भी कार्य को करने की प्रक्रिया भी उतनी ही लम्बी हो जाती है जिससे भ्रष्टाचार को फलने फूलने का अवसर मिलता है क्योंकि ऐसी स्थिति में ही राजकीय कर्मचारी या अधिकारी को अपने पद का दुरूपयोग करने के अवसर मिलते हैं। इसका एक कारण यह भी है कि राज्य के कार्यों के लिए कोई एक व्यक्ति उत्तरदायी नहीं होता। बड़े–बड़े राजनीतिज्ञ व अधिकारी इस व्यवस्था का लाभ उठाकर सामुदायिक कोषों का उपयोग अपने हितों के लिए करते हैं। जहाँ कहीं भी शक्ति एवं स्व–निर्णय का अवसर साथ–साथ मिलता है, यहाँ अधिकारों के दुरूपयोग की सम्भावनाएँ बनी रहती हैं।

कानूनी दोष व कठोर दण्ड का अभाव :– प्रजातांत्रिक व्यवस्था होने के कारण भारतीय कानून में कई खामियाँ हैं। जिनके कारण भ्रष्ट व्यक्ति साफ–साफ बच जाता है। इसके अलावा भ्रष्टाचार के विरूद्ध जो कानून है वह कठोर होने के बावजूद उसमें भी कोई न कोई रास्ता निकल ही आता है और व्यक्ति बच जाता है। कठोर दण्ड के अभाव के कारण भी व्यक्ति को कानून का कोई भय नहीं है। सरकारी विभागों में भ्रष्टाचार में पकड़े जाने पर कर्मचारी को मात्र तबादला करने के अलावा और कोई कठोर दण्ड नहीं दिया जाता। इससे उन्हें खुल कर भ्रष्टाचार करने में कोई हिचक नहीं होती। यदि भ्रष्टाचारी व्यक्ति को तुरन्त नौकरी से अलग करने के अतिरिक्त जेल व जुर्माने का कठोर दण्ड दिया जाए तो बहुत लोग भ्रष्टाचार में प्रवप्त होने का साहस करेंगे।

जागरूकता का अभाव :– जनता में भ्रष्टाचार के प्रति जागरूकता नहीं है। अक्सर लोग यह सोच लेते हैं कि जो कुछ हो रहा है उससे उनका कोई लेना–देना नहीं है क्योंकि व्यापक सरकारी कार्यप्रणाली के कारण भ्रष्टाचार से किसी को कोई व्यक्तिगत हानि कम ही होती है अत: वे गलत कार्यो को देखकर भी अनदेखा कर देते हैं, लोगों की इस प्रवश्ति के कारण भ्रष्टाचार को और अधिक बढ़ावा मिलता है।

भ्रष्टाचार उन्मूलन सम्बन्धी कार्य करने वाली किसी सक्षम संगठन का अभाव :– दो कारक भ्रष्टाचार में विशेष वृद्धि करने वाले हैं (1) भ्रष्ट एवं अकुशल सरकारी कर्मियों के साथ कठोर व्यवहार करने की आशिक अनिच्छा और (2) भारत के सार्वजनिक सेवाओं में प्रदत्त अधिक संरक्षण जो अन्य प्रगतिशील देशों की अपेक्षा बहुत ही अधिक है। इस कारण से भ्रष्टाचार को जड़ से उखाड़ फेंकने के लिए कोई भी सक्षम संगठन नहीं जिसके कारण इसका उन्मूलन नहीं हो रहा है। इसीलिए कहा गया है कि "जब तक कोई भी भ्रष्ट करने की इच्छा तथा क्षमता रखने वाला व्यक्ति विद्यमान है तब तक भ्रष्टाचार का अस्तित्व नहीं मिट सकता है।

9.05 भ्रष्टाचार निवारण के सुझाव :

भारत में फैले हुए भ्रष्टाचार के विभिन्न पहलुओं के विवेचन से स्पष्ट होता है कि भ्रष्टाचार का उन्मूलन किए बिना देश में किसी सुधार की आशा नहीं की जा सकती। इसके लिए सबसे प्रमुख प्रयास लोगों के नैतिक स्तर को ऊँचा करना है जिससे वे समाज में अपने उत्तरदायित्व को समझें और अनुचित उपायों का सहारा लेने से बचे रहें। फिर भी विभिन्न क्षेत्रों में भ्रष्टाचार को दूर करने के लिए कुछ विशिष्ट सुझाव दिए जा सकते हैं जो इस प्रकार है :–

राजनीतिज्ञों के नैतिक स्तर में सुधार :– जनतंत्र में भ्रष्टाचार का उन्मूलन बहुत कुछ राजनैतिक दलों पर निर्भर करता है क्योंकि इन राजनैतिक दलों के ही लोग चुने जाकर देश की सरकार बनाते हैं। यदि देश के राजनैतिक दलों का नैतिक स्तर ऊँचा किया जाए तो यह आशा की जा सकती है कि भ्रष्टाचार दूर हो सकेगा। इसके लिए सबसे पहले सत्तारूढ़ राजनैतिक दल को उदाहरण उपस्थित करना चाहिए क्योंकि वही यदि भ्रष्ट होगा तो जनता भी उनका अनुसरण करेगी। इसके अलावा चुनाव के समय वे भ्रष्ट तरीकों का सहारा न लें, दल–बदल की नीति का परित्याग करें, चुनाव संहिता का कठोरता से पालन किया जाए। केवल योग्य, सक्षम कुशल व ईमानदार व्यक्ति को ही प्रत्याशी बनाया जाए।

मतदाताओं की भी जिम्मेदारी है कि वे राजनैतिक दलों के बहकावे में न आकर केवल योग्य व्यक्ति का ही चुनाव करें। इसके लिए एक प्रभाव यह हो सकता है कि मतदान करने का अधिकार केवल एक विशिष्ट शिक्षा स्तर के व्यक्ति को ही होना चाहिए। राजनीतिज्ञों में सुधार के लिए आवश्यक है कि निम्न तत्वों को शामिल किया जाए:–

नेतृत्व के लिए योग्यता व शिक्षा स्तर का निर्धारण।

राजनीतिज्ञों का नैतिक स्तर व चारित्रिक स्तर।

राजनीतिक अपराधीकरण पर रोक।

जन–जागरूकता का विस्तार।

पुलिस विभाग में सुधार :– पुलिस विभाग में सुधार के दो लाभ होंगे– एक तो स्वयं पुलिस कर्मचारियों में से भ्रष्टाचार दूर होगा दूसरे पुलिस के ईमानदार और सतर्क होने से जनता में भ्रष्टाचारी व्यक्ति अपनी हरकतों से बाज आएंगे। पुलिस भी ईमानदारी और निष्ठा से अपराधियों के विरूद्ध कार्यवाही करे तो भ्रष्टाचार का सफाया निश्चित है। इसके अतिरिक्त पुलिस विभाग में भ्रष्टाचार को दूर करने के लिए आवश्यक है कि उनके वेतनमान व सेवा दशाओं में भी सुधार किया जाए ताकि वे घूस आदि की ओर आकर्षित न हों।

सरकारी विभागों में सुधार :– इसके लिए जरूरी है कि कर्मचारियों के आचरण पर कठोर नजर रखना तथा भ्रष्ट पाए जाने पर ऐसे व्यक्ति के विरूद्ध कठोर कार्यवाही करना। इसी तरह अन्य विभागों के अधिकारी जैसे आयकर, बिक्रीकर, आबकारी एवं कस्टम, सार्वजनिक निर्माण विभाग, रेल अधिकारी आदि जिनका सीधा सम्बन्ध जनता से होता है लेकिन यही लोग उनसे लेन–देन या रुपए पैसे लेकर कार्यक्राम करते हैं। अत: इनका ईमानदार होना आवश्यक है। साथ ही उनके ऊपर भ्रष्टाचार निरोधक विभाग को। भी कड़ी नजर रखें।

न्यायपालिका में सुधार :– न्यायाधीश पक्षपात रहित व बिना किसी राजनैतिक दबाव और सिफारिशों से प्रभावित हुए न्याय करें। आज बिना घूस के न्यायालय में कोई काम नहीं होता। वकील भी धन के प्रभाव में आकर खतरनाक से खतरनाक अपराधी को भी छुड़ा लेते हैं। अत: भ्रष्टाचार को रोकने के लिए न्यायपालिका से भ्रष्टाचार को समाप्त किया जाए।

देश का आर्थिक विकास :– अर्थव्यवस्था में सुधार व भ्रष्टाचार को समाप्त करने के लिए निम्न सुधार किए जा सकते हैं– (1) निर्धनता का उन्मूलन, (2) आरक्षण का अंत, (3) रोजगार के अवसरों में वृद्धि, (4) समाज में व्यावसायिक नैतिकता में वृद्धि। यद्यपि यह विश्वासपूर्वक नहीं कहा जा सकता कि आर्थिक विकास करने से भ्रष्टाचार समाप्त हो जाएगा लेकिन इससे भ्रष्टाचार को रोकने या कम करने में मदद मिल सकती है।

प्रशासनिक सुधार :– प्रत्येक विभाग भ्रष्टाचार रोकने के लिए वातावरण का निर्माण करे। सत्यनिष्ठा के मार्ग से विचलित करने वाले किसी भी प्रयास को हतोत्साहित करें। प्रशासनिक विलम्बों को यथा सम्भव समाप्त किया जाए। प्रशासकीय कुशलता में वृद्धि, सेवा भावना का विकास, प्रशासकीय नैतिकता का विकास आदि उपायों से भी भ्रष्टाचार को रोका जा सकता है।

सामाजिक मूल्यों में परिवर्तन – आज समाज में धनी व्यक्ति का आदर किया जाता है। यदि इस मूल्य में संशोधन किया जाए तो समाज का हित होगा। यदि धनी व्यक्ति को आदर का पात्र न मान कर समाज उस व्यक्ति को आदर दे जो ईमानदार हो, कानूनों को माने फिर चाहे वह धनी हो या निर्धन। उन व्यक्तियों को जो ऐसे निषिद्ध कार्य या अपराध करें, अलग कर दिया जाना चाहिए और उनके नामों का प्रचार खुल कर करना चाहिए।

वैधानिक उपाय :– उन लोगों के साथ कठोर व्यवहार किया जाए जो घूस देते हैं अथवा जो उत्सवों, उपहारों व भेंट या भोजों आदि के माध्यम से परोक्ष रूप से सरकारी कर्मचारियों व अधिकारियों को प्रभावित करने का प्रयास करते हैं।

जनकल्याण की भावना :– व्यक्ति अपने स्वार्थ को समुदाय के हित के सामने त्याग दे, वो ऐसा कार्य करे कि भ्रष्टाचार कम हो और समुदाय का कल्याण अधिक। जनता ईमानदार बने और कानूनों का पालन करे। जनकल्याण के आदर्शों को कार्यरूप देने से ही भ्रष्टाचार पर अंकुश लगाया जा सकता है।

भ्रष्टाचार विरोधी नियमों को कार्यान्वित करने वाला उपयुक्त संगठन :– भ्रष्टाचार निवारण के लिए केन्द्रीय सतर्कता आयोग इन अभियोगों को अधिक कुशलता से निपटा सके इसके लिए उसे अधिक व्यापक एवं स्पष्ट अधिकार दिए जाएं। मामलों की छानबीन के लिए केन्द्रीय जाँच ब्यूरो की सहायता ली जा सकती है। लोक सभा व राज्य सभा के सदस्यों के लिए भी एक आचार संहिता तैयार की जानी चाहिए और उन्हें अधिकारियों पर अनुचित दबाव नहीं डालना चाहिए। न्यायपालिका में व्याप्त भ्रष्टाचार के लिए सभी उच्च न्यायालयों में एक सतर्कता संगठन स्थापित किया जाए। फिर भी यह एक दीर्घकालीन समस्या है जिसके लिए ठोस, स्थिर तथा निरन्तर प्रयास आवश्यक है।

9.06 सारांश :

उपरोक्त विवरणों से पता चलता है कि भ्रष्टाचार को समाप्त करने के लिए व्यापक स्तर पर विभिन्न प्रयासों की आवश्यकता है। भ्रष्टाचार उन्मूलन के लिए केवल कानून बना देने से संतोषजनक परिणाम सामने नहीं आ सकते क्योंकि भ्रष्टाचार आज समाज में विकराल रूप धारण कर चुका है। इसीलिए कानूनों को सख्ती से लागू भी किया जाए।

9.07 बोध प्रश्न

1.भारतीय लोक जीवन में प्रचलित भ्रष्टाचार के विविध रूपों का विश्लेषण कीजिए। इसके निराकरण के लिए सुझाव दीजिए।

2. भारतीय समाज में बढ़ते हुए भ्रष्टाचार के प्रमुख कारणों की विवेचना कीजिए।

3.भारत के लोक जीवन में व्याप्त भ्रष्टाचार का विश्लेषण कीजिए।

9.08 संदर्भ ग्रंथ

रामनाथ शर्मा, राजेन्द्र कुमार शर्मा – अपराध शास्त्र एवं दंड शास्त्र तथा सामाजिक विघटन

डी. सुनील गोयल, संगीता गोयल –अपराध शास्त्र

डी. गोविन्द प्रसाद–आधुनिक समाज की समस्याएँ

राम आहूजा–भारतीय सामाजिक समस्याएँ

इकाई 10

महिलाओं के विरूद्ध हिंसा

इकाई की रूपरेखा

10.0 उद्देश्य

10.1 प्रस्तावना

10.2 महिलाओं के विरूद्ध हिंसा ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

10.3 महिला प्रस्थिति एवं लिंग असमानता

10.4 महिलाओं के प्रति हिंसा के कारण एवं इसका समाज पर प्रभाव

10.5 महिलाओं के प्रति हिंसा रोकने के सरकार द्वारा किये विभिन्न प्रावधान

10.6 सारांश

10.7 शब्दावली

10.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

10.9 संदर्भ ग्रंथ

10.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- महिलाओं के विरूद्ध की जाने वाली हिंसा की प्रकृति, कारण, ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं इससे समाज में उत्पन्न होने वाली महिला असमानता से जनित मनोवैज्ञानिक सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक समस्याओं को जान सकेगें।
- भारत में महिलाओं के प्रति की जाने वाली हिंसा की प्रकृति के अवधारणात्मक पक्ष के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- भारत में महिलाओं के प्रति लिंग असमानता के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- भारतीय समाज में महिला हिंसा उत्पन्न होने के मूल कारणों की व्याख्या कर सकेंगे।
- महिलाओं के विरुद्ध हिंसा से उत्पन्न अनेक विषमताओं व सामाजिक आर्थिक समस्याओं की व्याख्या कर पाने में सक्षम होंगे।
- महिलाओं के प्रति हिंसा की समस्या ने वर्तमान सामाजिक व्यवस्था को किस प्रकार प्रभावित किया है समाज में इसे रोकने व महिलाओं को संरक्षण प्रदान करने के लिये क्या–क्या उपाय किये गये हैं, इनके बारे में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- महिलाओं के प्रति हिंसा की समस्या को जानने ब खोजने के लिये जनांकिकीय राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक एवं प्रौद्योगिक कारणों से तुलना एवं विवेचना करने में सक्षम होंगे।

- महिलाओं के प्रति बढ़ती हिंसा की दर से भ्रूण हत्या जैसे अपराध की प्रवृत्ति, लिंगविभेद एवं शारीरिक, मानसिक शोषण एवं शोषण को रोकने के वैधानिक प्रयासों की व्याख्या कर सकेंगे।

10.1 प्रस्तावना

जैविक दृष्टि से प्रकृति ने स्त्री एवं पुरूष को भिन्न संरचनाएं प्रदान की है, एक दूसरे की परिपूरकता के लिए – विरसता, भेदभाव, आधिपत्य या शोषण के लिये नहीं। आदिम समाजों की जीवन शैली इस बात का प्रमाण है कि प्रायोगेतिहासिक काल में स्त्री–पुरूष समानता विद्यमान थी। संगठित समाज की रचना, उत्पादन के साधनों के बदलाव परिवार संस्था के अभ्युदय एवं स्वामित्व तथा सम्पत्ति के उदय के सामाजिक सरंचनाओं में आये परिवर्तनों ने स्त्री–पुरूष असमानता, भेदभाव एवं स्त्री की अधीनता तथा अशक्तीकरण की प्रक्रिया का सूत्रपात किया। यह प्रक्रिया विश्व की सभी सभ्यताओं एवं कालखण्डों में कमोबेश पनपती रही। अधीनीकरण की इस प्रक्रिया में सामाजिक संरचनाओं, सांस्कृतिक–नैतिक मूल्यों मानको, अर्थतंत्र, राजनैतिक संस्थाओं सहित अनेक कारकों का योगदान रहा। स्त्री द्वारा अधीनता की मनोवैज्ञानिक स्वीकृति महिला के विरूद्ध हिंसा का एक महत्वपूर्ण कारण रहा है। विभिन्न सदियों में भौतिक, धार्मिक, वैज्ञानिक, औद्योगिक, राजनैतिक क्रांतियाँ हुई, किन्तु स्त्री प्रस्थिति के सन्दर्भ में सतही परिवर्तन ही हुये। 19वीं व 20वीं शताब्दी में महिलाओं के अनेक आन्दोलनों ने सशक्तीकरण के लिये सकारात्मक प्रयास किये किन्तु उनके निर्बलीकरण या अशक्तीकरण की प्रक्रिया भी समानान्तर स्तर पर नित नये प्रसंगों में जारी रही है।

10.2 महिलाओं के विरूद्ध हिंसा: एक ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

महिला के सशक्तीकरण एवं उसके स्वतंत्र अस्तित्व को चुनौती की प्रक्रिया सर्वप्रथम घर से ही प्रारंभ होती है। महिला को अगर कोख से कब्र तक हिंसा सहनी पड़े तो वह नागरिक अधिकार से वंचित होती है। उसका स्वतंत्र अस्तित्व समाप्त होने लगता है। यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवता: यह उक्ति नारी के सन्दर्भ में विशेष तौर से भारतीय समाज के परिप्रेक्ष्य में प्रचलित है। परन्तु इस उक्ति की सार्थकता कितनी है, इस बारे में अनेक विचारणीय प्रश्न अभी भी अनुत्तरणीय ही है। कहने को तो महिला व पुरूष एक ही गाड़ी की धुरी है मगर वास्तविकता इससे काफी दूर है। अगर हम गर्भावस्था से ही बात करें तो वही से नारी के साथ अन्याय की कहानी शुरू हो जाती है, अगर गर्भस्थ भ्रूण मादा है तो उसके भ्रूण को अजन्मे मादा शिशु को इस दुनिया में अपनी आंखें खोलने से पहले ही आंखें बन्द कर लेनी पड़ती है। उसकी सिसकियां उसकी मां भी सुनती है, मगर पुरूष प्रधान समाज की मानसिकता व पुरूष के वर्चस्व के आगे वह हार जाती है। अंततः: महिला की मानसिकता भी वैसी ही बन जाती है जैसा कि पुरुष चाहता है।

विकासशील एवं तीसरी दुनिया के देशों में महिलाओं के साथ अधिक अत्याचार व उनके अधिकारों का हनन होता है। कानूनी उपायों के बगैर महिलाएं उन आर्थिक और सामाजिक बुराइयों के चंगुल से नहीं बच सकती जो उनके जीवन पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है। विकासशील देशों में अधिकांश महिलाएं काश्तकार, खेतीहर, मजदूर, कारीगर या गृहिणी का काम करती है, उनका आर्थिक दृष्टि से निम्न स्तर होता है। समाज में होने वाले अत्याचारों, अपराधों का सामना भी इन्हीं महिलाओं को करना पड़ता है। बलात्कार, दहेज हत्या, शराब पीकर पतियों द्वारा मारपीट व साम्प्रदायिक दंगों में भी महिलाओं को ही सर्वाधिक झेलना पड़ता है। अनेक बार महिलाओं के विरूद्ध हिंसा को बढ़ाने में जनसंचार माध्यमों की अप्रत्यक्ष भूमिका निहित रहती है। एक समुदाय द्वारा दूसरे समुदाय की औरतों के अपहरण व बलात्कार और अपमानित किये जाने की खबरें व तस्वीरें छपने से आम लोगों में प्रतिहिंसा भड़कती है जिसका नतीजा अन्तत: किसी न किसी महिला को ही भुगतना पड़ता है। महिलाओं पर होने वाले हिंसात्मक अपराधों में एक अध्ययन के अनुसार 31 प्रतिशत अपने परिवार के सदस्यों

द्वारा ही किये जाते हैं। इसमें जाति रिश्तेदारों व पड़ोसियों द्वारा किया जाने बाला यौन उत्पीड़न भी महत्वपूर्ण हिंसात्मक अपराध है।

भारतीय समाज में अनेक जातियों में बेटे के लिये, बेटी की बलि दी जाती है। बेटी को माँ–बाप के परिवार का हिस्सा न मानने वाले माँ–बाप का कर्मकांड करने तक का अधिकार न देने वाले इस समाज में पढ़ी–लिखी औरतें भी एक बेटे को जन्म देने के लिये एक या कई कई बेटियों की बलि देने के विरोध करने का साहस नहीं कर पाती। बेटा न होने पर उन्हें ससुराल में उपेक्षा, छोड़े जाने या तलाक का भय सताता रहता है। बड़े शहरों के मुकाबले कस्बों, छोटे शहरों में यह प्रवृत्ति ज्यादा पायी जाती है। ग्रामीण क्षेत्रों में तो किसी भी महिला का रुतबा ही बेटे के जन्म के बाद बढ़ता है। इसीलिये आज भी एक अध्ययन के अनुसार 88 प्रतिशत महिलाएं चाहती है कि उनके एक बेटा जरूर हो। इसी प्रकार हमारे देश में जलकर मरने वाली महिलाओं का आंकड़ा काफी ऊपर है। इसमें सर्वाधिक जलकर मरने वाली स्त्रियों की दर गुजरात में है। इतना ही नहीं महिलाओं को भारतीय समाज में हर तरह के मर्यादित आचरण एवं रस्मों रिवाज का हर हाल में पालन करना पड़ता है, क्या ये परम्पराएं सिर्फ महिलाओं के लिये हैं? क्या पुरुष समुदाय के लिये कोई रस्मों रिवाज नहीं होते ? पुरूष अगर कोई दुष्कृत्य भी करता है तो समाज कोई विशेष संज्ञान नहीं लेता बल्कि उसी महिला को ही जलील क्यों करता है, जो उत्पीड़न की शिकार हुई है।

महिला उत्थान के नाम पर कभी महिला दशक तो कभी महिला सशक्तीकरण वर्ष मनाए जा रहे हैं, पर वास्तव में महिला का कितना विकास हुआ। इस बात का अनुमान भारत में ग्रामीण महिलाओं की वास्तविक स्थिति या बदहाली से लगाया जा सकता है, जहां पर महिला को अपहरण, बलात्कार, हत्या, बेरोजगारी, गैर बराबरी जैसे अनेक मुद्दों व समस्याओं से जूझना पड़ता है। धर्म एवं परम्परा का सहारा लेकर भी महिलाओं के साथ भेदभाव व शोषण किया जाता है। महिला पहचान की अभिव्यक्ति को अब भी पाषाण युग की दृष्टि से देखा जाता है और उसे कामुकता की अभिव्यक्ति मान लिया जाता है।

महिलाओं का उत्पीड़न, दमन व तिरस्कार –

महिलाओं का उत्पीड़न, अपमान, शोषण, दमन, तिरस्कार एवं यंत्रणा उतना ही प्राचीन है, जितना कि पारिवारिक जीवन का इतिहास। यद्यपि सामाजिक विधान के परिप्रेक्ष्य में भारतीय महिलाएं अन्य कई देशों की महिलाओं से आगे मानी गयी है, किन्तु महिलाओं को अधिकार प्रदान करने की प्रक्रिया इतनी मन्द, अव्यवस्थित एवं असंगत रही है कि सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक रूप से दे पुरूषों से काफी पीछे हैं। उनके साथ न केवल काम में भेदभाव किया जाता है अपितु प्रत्येक क्षेत्र में उनको अधिकारों से वंचित रखा जाता है। घर में तो उनकी स्थिति और भी खराब है। विविध प्रकार के असमाजिक दुर्व्यवहार भी किये जाते हैं। उनका उपहास करना, सताया जाना, आतंकित किया जाना, कभी–कमी मारा पीटा जाना तथा यदा कदा जला कर मार दिया जाना स्पष्ट करता है कि वे प्रत्येक भूमिका में हिंसा का शिकार रहती है। इस सबके बावजूद आपराधिक हिंसा साहित्य व सामाजिक समस्याओं की विवेचना सम्बन्धी पुस्तकों में हिंसा की शिकार महिलाओं के विषय में कुछ विशेष नहीं लिखा गया है। इसके दो कारण मुख्यत: माने जा सकते हैं। प्रथमत: पुरूष अपने को महिलाओं की अपेक्षा श्रेष्ठ मानते हैं। जिसके कारण महिलाओं के प्रति की गई हिंसा को हिंसा की दृष्टि से नहीं देखा जा सकता और दूसरे महिलाएं स्वयं अपने धार्मिक मूल्यों एवं सामाजिक दृष्टिकोण के कारण अपने प्रति की गई हिंसा से इंकार कर देती है। हाल ही में महिलाओं के प्रति किये गये अपराधों को व्यक्तिगत वाद बिन्दु के बजाय जन समस्या ही अधिक माना गया है।

10.3 महिलाओं के प्रति हिंसा एवं लिंग असमानता

भारतीय समाज में महिलाओं की प्राचीन, वर्तमान एवं भविष्य की सामाजिक और राजनीतिक प्रस्थिति सम्बन्धी परिवर्तनों को देखे तो विदित होता है कि वैदिक युग की सामाजिक व्यवस्था में उन्हें परिवार एवं समाज में पुरुष के समान ही महत्व एवं सम्मान प्राप्त था। यही नहीं वे राजनीति और धर्मनीति में भी खुलकर भाग लेती थी तथा युद्धों तक में पुरूषों के साथ कदम से कदम मिलाकर लड़ती थी। धर्मनीति के क्षेत्र में विदुषी महिलाओं के आचार्यो से वाद–विवाद एवं शास्त्रार्थ के तो अनेक उदाहरण हैं। महिला के बिना परिवार, समाज एवं पुरूष अधूरा होता है। बिना महिला के पुरूष का कोई अस्तित्व नहीं होता है। पारिवारिक जीवन रूपी गाड़ी के महिला एवं पुरूष दोनों पहिये हैं। उनमें से कोई भी एक पक्ष सबल और दूसरा पक्ष निर्बल होकर उस भार को देर तक नहीं संभाल सकता है। अनेकानेक कारणों से गृहस्थ गाड़ी का एक पहिया कमजोर है, टूटा हुआ है फिर भी उसे ढकेला जा रहा है। इसी कारण से चारों ओर पारिवारिक अशांति, अव्यवस्था, हिंसा, आत्महत्या, महिला प्रताड़नाएं जैसी घटनाएं घट रही है।

भारतीय महिला की प्रस्थिति

सृष्टि की निरंतरता के लिये प्रकृति में पुरूष और महिला की उत्पत्ति हुई। सृजनहार ने संसार में नर व मादा दोनों को बराबर का दर्जा दिया है। गतिशील पशु पक्षी और मानव तो क्या गतिहीन फूल पौधे तक में प्रकृति ने नर–मादा का समन्वय करके ही सृष्टि को आगे बढ़ाया। एक को दिया कठोर शरीर और स्वभाव तो दूसरे को कोमल शरीर और उसमें रखा स्नेहपूर्ण हृदय। प्राचीन काल में नारी जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में पुरुष के बराबर थी, यज्ञों में पुरूष के साथ बैठकर वेद मंत्रों को पाठ करती थी। राजा दशरथ के साथ कैकयी स्वयं युद्ध में जाती थी। शंकराचार्य और मंडन मिश्र के शास्त्रार्थ का निर्णय मण्डन मिश्र की पत्नी भारती ने ही किया था। पौराणिक काल में गार्गी ने दर्शन पर याज्ञवल्क्य से महत्वपूर्ण शास्त्रार्थ किया था। उस समय नारी को स्वयं अपने पति चुनने का अधिकार था। इससे स्पष्ट है कि महिला उस समय अपना भविष्य निर्माण करने की पूर्ण योग्यता रखती थी।

मध्यकाल में भारतीय समाज में अनेक कारणों से प्राचीन श्रेष्ठ परम्पराओं व मूल्यों का क्षरण हुआ। इसमें महिलाओं की सामाजिक प्रस्थिति में भारी गिरावट आयी। मध्यकाल में पुरूष ने रक्षा बल को पशु बल में परिवर्तित कर महिलाओं पर अनेक नियम व आचरण के निम्न स्तरीय प्रतिमान लागू किये। अपने कोमल शरीर व स्नेहिल स्वभाव के चलते नारी ने न तो इसे गंभीरता से लिया और न ही कोई विरोध किया। देखते ही देखते नारी का सम्मान और आदर्श क्षीण होने लगा। उसकी स्वतंत्रता का अपहरण किया गया, उसकी सामाजिक प्रतिष्ठा को नष्ट किया गया। उसे शिक्षा के अधिकार से भी वंचित किया गया। समाज में उसका कोई विशेष महत्व नहीं रह गया। वह केवल भोग विलास की वस्तु रह गई। इस प्रकार मध्य काल नारी के पतन का युग था। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उसके साथ लिंग असमानता के आधार पर नारी को अपमानित किया गया और वह देवी के पवित्र आसन से हटकर दासी बन गयी। इसके लिये यदि जिम्मेदार पुरुष है तो स्वयं नारी भी है जो प्रतिद्वन्दी बन दूसरी नारी के दहन, दोहन और शोषण का कारण बनी।

वर्तमान में महिलाओं के प्रति बढ़ती हिंसा का एक कारण महिलाओं की प्रस्थिति का निम्नतर माना जाना भी रहा है। इसलिये लैंगिक समानता महिला सशक्तीकरण का आधार है। वर्तमान में विभिन्न महिला संगठन, महिला आन्दोलन, नारीवादी विचारक तथा राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय राष्ट्रीय स्तर पर अनेक संगठन स्त्री की स्वतंत्रता, समानता, अस्मिता, न्याय और गरिमा की स्थापना के लिये प्रयत्नशील है। किन्तु अथक प्रयासों तथा उपायों के बावजूद लैंगिक असमानता आज भी विद्यमान है।

10.4 महिलाओं के प्रति हिंसा के कारण एवं इसका समाज पर प्रभाव

महिलाएं किसी भी अपराध की शिकार हो सकती है, चाहे ठगी की, कत्ल की या लूटपाट आदि की, परन्तु वे अपराध जिनकी केवल महिलाएं ही शिकार हो या जो केवल महिलाओं के प्रति ही होते हैं, उन्हें महिलाओं के प्रति अपराध कहा जाता है। विस्तृत रूप से महिलाओं के प्रति अपराधों को दो श्रेणियों में बांटा जाता है–

4 भारतीय दण्ड संहिता के अन्तर्गत अपराध : –

इसमें 6 प्रकार के अपराध सम्मिलित हैं। वे है:

1. बलात्कार,
2. अपहरण एवं भगा ले जाना,
3. दहेज के कारण हत्या,
4. शारीरिक एवं मानसिक उत्पीड़न अथवा पत्नी को पीटना,
5. शारीरिक छेड़छाड़, और
6. चिढ़ाना।

5 स्थानीय एवं विशेष विधानों के अन्तर्गत अपराध

इसमें चार प्रकार के अपराध सम्मिलित हैं। वे है:

1. अनैतिक अवैधपणन (1978 अधिनियम),
2. दहेज मांगना (1961 अधिनियम),
3. सती होने के लिये बाध्य करना (1987 अधिनियम), और
4. महिलाओं का अभद्र प्रदर्शन (1986 अधिनियम)।

महिलाओं के प्रति हिंसा की अवधारणा को भी स्पष्ट करना आवश्यक है। यदि हम यह कहें कि "हिंसा वह व्यवहार है जिसकी औपचारिक रूप से सामाजिक निन्दा की जाती हो या जो नियमाचारी समूहों के व्यवहार सम्बन्धी मानदण्डों से विचलन हो" तब महिलाओं के प्रति हिंसा के मामलों का क्षेत्र बहुत अधिक विस्तृत हो जाता है।

मेगार्गी ने हिंसा की परिभाषा इस प्रकार की है ऐसा कार्य जो जानबूझ कर, धमका कर या बलपूर्वक किया गया हो। जिसके परिणाम स्वरूप व्यक्ति को आघात पहुंचा हो या उसके सम्मान को ठेस लगी हो। समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण के अनुसार हिंसा को एक मानव घटना के रूप में पहचाना जाना चाहिये क्योंकि इसमें अधिकतर वे कार्य सम्मिलित होते हैं जो कि दूसरे की स्वतंत्रता में बाधा डालते हैं।

यदि हम महिलाओं के प्रति हिंसा की व्यावहारिक परिभाषा करे तो "किसी महिला से प्रत्यक्ष या परोक्ष बल प्रयोग करके कुछ लेना जो कि स्वेच्छा से वह देना नहीं चाहती तथा जिससे उस महिला को शारीरिक आघात या भावात्मक धक्का दोनों ही लगे हों। इस प्रकार बलात्कार, अपहरण, भगा ले जाना, कत्ल, दहेज, मृत्यु आदि सभी आपराधिक हिंसा के मामलों के अन्तर्गत माने जायेगें। पत्नी को पीटना, यौनाचार, विधवा या बड़ी उम्र की महिला के साथ दुर्व्यवहार आदि सभी घरेलू हिंसा के अन्तर्गत माने जायेगें। छेड़छाड़, पत्नी या बहू को भ्रूण हत्या के लिये बाध्य करना, युवा विधवा को सती होने के लिये बाध्य करना सामाजिक हिंसा के अन्तर्गत माने जायेगें।

महिला हिंसा की दर में वृद्धि

भारत में 1989 और 2005 के बीच महिलाओं के विरूद्ध घटित छ: प्रकार के अपराधों के आंकड़े संकेत करते हैं कि इन अपराधों में प्रतिवर्ष तेजी से वृद्धि हो रही है। महिलाओं के प्रति घटित आपराधिक घटनाओं में

सभी प्रकार के अपराधों जैसे छेडछाड, बलात्कार, अपहरण, दहेज मृत्यु हत्या, प्रताड़ना आदि में वृद्धि दर्ज की जा रही है। इनमें से अनेक राज्यों में तो यह दर राष्ट्रीय औसत के दुगने से भी अधिक पायी जाती रही है। हमारे देश में हर एक 3 घण्टे में दस शारीरिक छेड़छाड़ और प्रत्येक 3 घण्टे में 4 बलात्कार के मामले हो जाते हैं। बलात्कार के मामलों का एक बड़ा प्रतिशत तो दर्ज ही नहीं किया जाता इसका कारण है कि बलात्कार की शिकार महिला समाज के समझ शर्मिन्दगी उठाने का साहस नहीं करती या फिर उसका परिवार अपमानित नहीं होना चाहता या फिर पुलिस या बलात्कारी के बदला लेने की धमकी के डर से मामला दर्ज ही नहीं किया जाता। इस सन्दर्भ में महिलाओं के हिंसा के मामलों में छेड़छाड़ और बलात्कार के सर्वाधिक लगभग 38.4 प्रतिशत अपराध घटित होते हैं। समाज में महिलाओं के विरूद्ध घटित हिंसा के सभी मामले गंभीर प्रकृति के हैं। उनमें से बलात्कार को एक गंभीर समस्या के रूप में देखा जाना चाहिये। यह अपराध पीड़ित महिलाओं के व्यक्तित्व को अव्यवस्थित कर सकता है।

बलात्कार और शारीरिक छेड़छाड़ की तरह ही अपहरण की घटनाएं भी बढ रही है। हमारे देश में एक अध्ययन के अनुसार प्रत्येक 3 घण्टे में 5 लडकियों या महिलाओं का अपहरण किया जाता है। हमारे देश में अपहरण सम्बन्धी प्रति एक लाख की जनसंख्या पर 2 प्रतिशत की दर है।

इसी प्रकार दहेज मृत्यु की दर में भी प्रतिवर्ष वृद्धि हो रही है। एक अध्ययन के अनुसार मौटे तौर पर भारत में दहेज न देने या थोडा दहेज देने के कारण मृत्यु की घटनाएँ लगभग एक दिन में 14 होती है। इसी प्रकार आन्ध्र प्रदेश महिला संघ ने सर्वेक्षण के आधार पर दावा किया कि प्रतिदिन दहेज के कारण 100 के लगभग आत्महत्याएं या हत्याएं होती है। यद्यपि भारत में महिला हत्या का प्रतिशत पश्चिमी देशों के मुकाबले कम पाया जाता है। वही पुरुष हत्या के मुकाबले महिलाओं की हत्या की दर भी काफी कम पायी गयी है।

इसी प्रकार पति द्वारा पत्नी को पीटने, सास ससुर द्वारा निर्दयता से पीटे जाने के मामले हमारे समाज में शायद ही कभी पुलिस में दर्ज कराये जाते हों। फिर भी अनुमानतः: 800 या 1000 महिलाओं में से एक को ही प्रताड़ित किया जाना माना जाये तो प्रताड़ना की कुल संख्या अच्छी खासी हो सकती है।

महिला के प्रति हिंसा एवं उत्पीडित महिलाएं

हमारे देश में महिलाएं विविध प्रकार की हिंसा एवं अपराधों की शिकार होती है। यहाँ यह जानना आवश्यक है कि अपराधी उत्पीड़क पुरुष कौन है? पुरूषों को महिलाओं के प्रति अपराध के लिये कौन प्रेरित करता है। राम आहूजा द्वारा सन् 1983–84 और 1995 से 1997 में राजस्थान में "महिलाओं के प्रति अपराधों" पर किये गये अध्ययन का उल्लेख किया जा सकता है। इस शोधकार्य में आहूजा ने बलात्कार, अपहरण, दहेज मृत्यु पत्नी को पीटना तथा हत्या जैसे कुल 327 अपराधिक मामलों का अध्ययन किया था। इस शोध का विवरण "Violence Against Women, 1998 में भी देखा जा सकता है।

इन पाँच अपराधों के प्रति आहूजा ने तथ्यात्मक जानकारी के आधार पर निम्न महत्वपूर्ण जानकारी दी है –

बलात्कार के घटना के बारे में तथ्य इस प्रकार हैं : –

1. बलात्कार बिल्कुल अजनबियों के साथ नहीं होते हैं। इनमें से आधे मामलों में पीड़ित महिला अपने हमलावर की पहचानी हुई होती है।
2. यद्यपि बलात्कार आमतौर पर स्थितिजन्य कार्य होता है, लेकिन 10 में से 4 मामलों में यह पूर्णरूपेण आंशिक नियोजित घटना होती है।
3. युगल और सामूहिक बलात्कार के मामले सम्पूर्ण बलात्कार के मामलों का लगभग 40 प्रतिशत है।

4. बहुत कम संख्या में बलात्कार महिला द्वारा पहल करने के कारण होती है तथा अधिकतर मामलों में पीड़ित महिलाएँ बल प्रयोग की शिकार होती है।
5. यद्यपि बड़ी संख्या में इन मामलों में लालच या मौखिक अवपीड़न के सहारे पीड़ित महिला को दबाया जाता है।

आहूजा के अनुसार अपहरण और भगाने के मामलों में निम्न तथ्य पाये गये –

7. अपहरण व भगाने के मामलों की शिकार विवाहित महिलाओं की अपेक्षा अविवाहित लड़कियां अधिक होती है।

8. भगाने वाले पुरूषों और भगाई जाने वाली लड़कियों की आयु में अन्तर होता है। 22 प्रतिशत लडकियां 18 वर्ष से कम आयु की, 43 प्रतिशत 18 से 21 आयु समूह की और 35 प्रतिशत 22 से 25 आयु समूह की होती है।

9. भगायी जाने बाली लड़कियां व पुरूष एक दूसरे को पहचानते हैं तथा पूर्णत: अपरिचित नहीं होते हैं।

10. दोनों के बीच पारस्परिक सम्पर्क आम जगहों की अपेक्षा अपने घरों या पडौस में अधिक होता है।

11. लड़की के अपहरण या भगाने के मामले में आर्थिक उद्देश्य की अपेक्षा यौन सम्बन्ध व विवाह की इच्छा अधिक होती है।

12. भागने वाली लड़की तथा उसकी सामाजिक वर्ग सदस्यता में महत्वपूर्ण सम्बन्ध होता है।

आहूजा ने महिलाओं के उत्पीड़न में दहेज को प्रमुख तत्व माना है। इसके प्रमुख निम्न तत्व पाये गये हैं–

13. निम्न वर्गीय तथा उच्च वर्गीय महिलाओं की अपेक्षा मध्यम वर्गीय महिलाओं का दहेज सम्बन्धी उत्पीडन अधिक होता है।

14. दहेज के मामले में मारे जाने वाली लड़कियों में अधिकांश 21 से 24 आयु समूह की होती है जिसमें उन्हें न केवल शारीरिक रूप से बल्कि सामाजिक और भावात्मक रूप से भी परिपक्व समझा जाता है।

15. अधिकांशत: दहेज हिंसा वाले मामलों में जिन घरों में सास का प्रभुत्व होता है तथा पति समझौता नहीं करता है उनमें शोषण की दर अधिक होती है।

16. वास्तविक हत्या से पूर्व युवा दुल्हनों का अपमान व उन पर अनेक प्रकार के अत्याचार किये जाते हैं जो दर्शाता है कि जनन परिवार के सदस्यों का सामाजिक अनुकूलन कितना दोषपूर्ण होता है।

17. दहेज मृत्यु के मामलों में हत्यारे निर्दयी एवं शक्तिशाली होते हैं। महिला की हत्या हत्यारे के असन्तुलित एवं असामान्य व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति मात्र है।

महिलाओं के प्रति हिंसा का एक प्रमुख कारण पत्नियों को पीटा जाना भी है। राम आहूजा ने अपने अध्ययन में किये शोध कार्य में मारपीट सम्बन्धी मामलों के निम्न लक्षण बताये हैं –

18. 25 वर्ष की आयु से कम विवाहिताओं के शोषण की दर अधेड़ उम्र की महिलाओं से अधिक है।

19. यद्यपि अशिक्षित महिलाएं शिक्षित महिलाओं की अपेक्षा पति द्वारा पिटाई की शिकार अधिक होती है फिर भी पीटे जाने तथा शोषित महिला के शिक्षा सार में कोई खास सम्बन्ध नहीं होता है।

20. निम्न आयु वर्ग के परिवारों की महिलाएं अधिक सताई जाती है, यद्यपि पारिवारिक आय को महिला हिंसा व शोषण के सम्बन्ध में दर्शाना उचित प्रतीत नहीं होता है।

21. अधिकतर पति अपनी पत्नियों को शराब के नशे में नहीं पीटते हैं, वरन तब पीटते हैं जबकि वे नशे में नहीं होते हैं।

22. पत्नी को पीटने की दर परिवार में तनाव की स्थिति से सीधे सम्बन्धित है। तनाव की स्थिति कई कारणों से हो सकती है। जैसे आर्थिक समस्याएं, बेरोजगारी या पति का पार्ट टाईम रोजगार, सास–ससुर द्वारा बहु के साथ दुर्जवहार या बेमेल साथी का होना आदि।

इसी प्रकार राम आहूजा ने अपने अध्ययन में स्त्री हत्या के अपराध में मुख्य लक्षण बताये हैं –

1. हत्यारे व हत्या की शिकार महिलाएं अधिकतर एक ही परिवार के होते हैं तथा बड़ी संख्या में पति द्वारा अपनी पत्नी की हत्या की जाती है।
2. हत्या की गयी लगभग आधी महिलाएं वे होती हैं जिनके सम्बन्ध हत्यारे पुरूष से काफी लम्बे होते हैं।
3. स्त्री द्वारा विद्वेष पूर्ण निश्चित इरादे से की गयी हो या आवेग में अचानक हो गई हो, दोनों का अनुपात 4:6 है।
4. स्त्री हत्या में पारिवारिक असामन्जस्य सामान्य रूप से या वैवाहिक सम्बन्ध विशेष रूप से अत्यन्त महत्वपूर्ण होते हैं। हत्यापरक वाद विवाद या संघर्ष का सम्बन्ध, धन, ससुराल वालों का व्यवहार, बच्चों की देखभाल और अवैध सम्बन्धों से होता है।
5. जिनके पति या ससुराल वाले विकृत व्यक्तित्व वाले होते हैं।
6. जिनके पति शराबी होते हैं।

इस प्रकार महिलाओं के प्रति हिंसा या शोषण के प्रकार को निम्नानुसार देखा जा सकता है –

7. वह अपराध जो तनावपूर्ण पारिवारिक पर्यावरण का प्रतिफल है,
8. वह अपराध जिसका उद्देश्य केवल आनन्द लेना हो,
9. वह अपराध जो अपराधी के मनोविकारी व्यक्तित्व के कारण हो,
10. वह अपराध जो शोषित महिला के पहल करने के कारण हो,
11. वह अपराध हो मदिरा से प्रभावित हो।

इस प्रकार महिलाओं के विरूद्ध हिंसा में 5 कारकों को मुख्यत: ज्ञात किया जाना चाहिये।

12. जिस स्थिति में अपराध किया जाता है, उस स्थिति की संरचना,
13. परिस्थिति जन्य सुविधाएं जिन्होंने अपराध करवाया,
14. उत्तरदायी कारक जिनके कारण हिंसा की अभिव्यक्ति हुई,
15. व्यक्ति द्वारा अनुभव किये गये दबाव जैसे उसकी अपनी समस्याएं और
16. महिला के प्रति हिंसा किये जाने से पूर्व अपराधी के प्रति शोषित महिला का व्यवहार कैसा था? इन सभी कारकों को मिलाकर समष्टिवादी दृष्टिकोण कहा जा सकता है। यही दृष्टिकोण महिलाओं के प्रति हिंसा या अपराध की प्रवृत्ति के कारणों का सही ज्ञान दे सकता है।

वर्तमान समय में पुरूषों द्वारा महिलाओं के विरूद्ध बढ़ती हुई हिंसा के मुख्यत: तीन कारण मालूम पड़ते हैं–

17. अपराधी का बचपन का दुरूपयुक्त इतिहास जैसे कष्टप्रद पालन पोषण, मां बाप द्वारा शारीरिक यातनाएं तथा संवेगात्मक उपेक्षाएं,
18. परिवार की तनावपूर्ण स्थितियां, और
19. प्रस्थिति कुण्ठाएं।

पितृसत्तात्मक दृष्टिकोण

इन कारकों के साथ ही भारतीय समाज में प्राचीन काल से चली आ रही पुरूष प्रधान मानसिकता या पितृसत्तात्मक दृष्टिकोण भी महिलाओं के शोषण के लिये जिम्मेदार है। पितृसत्तात्मक दृष्टिकोण के अनुसार एक व्यक्ति द्वारा एक महिला का शोषण उसके साथ दुर्व्यवहार या उसका अपमान एक व्यक्तिगत समस्या नहीं है। यह

तो महिलाओं पर पुरूषों के प्रभावशीलता या प्रधानता की व्यवस्था की एक अभिव्यक्ति है । महिलाओं की दयनीय दशा की सामाजिक सहनशीलता पितृसत्तात्मक मानदण्डों की ही अभिव्यक्ति है जो समाज व परिवार में पुरूषों के वर्चस्व व प्रभुत्व का समर्थन करती है । प्रसिद्ध नारी वादी लेखक डेल मार्टिन ने अपनी पुस्तक "Battered wives, 1976" में लिखा है – "पितृ सत्तात्मक परिवार स्वरूप की ऐतिहासिक जड़े बड़ी प्राचीन एवं गहरी है । जब तक कि विवाह व परिवार के नये प्रतिमान नहीं बनाये जाते महिलाओं का शोषण प्राचीन समय से चली आ रही परम्पराओं से स्वभाविक रूप से पनपता रहेगा।

दुबाश और दुबाश, 1983 ने भी पितृ सत्तात्मक के कारक पर बल देते हुये महिलाओं के प्रति हिंसा को स्पष्ट किया है । उनका मानना है कि वे पुरूष जो महिलाओं के प्रति हिंसा का प्रयोग करते हैं वे वास्तव में समाज में प्रचलित सांस्कृतिक निर्देशों जैसे आक्रामकता पुरुष प्रधानता और स्त्रियों की अधीनता के आधार पर जीते हैं और वे अपने प्रभुत्व को बनाये रखने के लिये बल को साधन के रूप में प्रयोग करते हैं ।

10.5 महिलाओं के प्रति हिंसा रोकने के सरकार द्वारा किये गये विभिन्न प्रावधान

महिलाओं के प्रति किये गये अपराधों को रोकने हेतु भारतीय दण्ड संहिता (IPC) वर्णित प्रमुख धाराएं नारी का शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, आर्थिक शोषण रोकने हेतु एवं समाज में महिलाओं की छवि को सुधारने हेतु पुरुषों के कुकर्मों को रोकने हेतु भारतीय दण्ड संहिता की निम्न विशेष धाराएं लागू की गई हैं –

दहेज मृत्यु (धारा 304 ख) – विवाह के सात वर्ष के भीतर किसी स्त्री को जल जाने अथवा शारीरिक क्षति अथवा सामान्य परिस्थितियों से भिन्न मृत्यु हो जाती है । यह दर्शित किया जाता है कि मृत्यु से ठीक पहले उसके पति द्वारा अथवा पति के रिश्तेदारों द्वारा दहेज की मांग को लेकर परेशान किया गया था अथवा उसके साथ निर्दयतापूर्ण व्यवहार किया गया था तो उसे दहेज मृत्यु का जायेगा । इसके लिए भारतीय दण्ड संहिता में धारा 304 ख में आजीवन कारावास का प्रावधान किया गया है ।

बलात्कार (धारा 376) – किसी स्त्री की इच्छा के विरुद्ध या उसकी सहमति के बिना या उसे मृत्यु या चोट का भय बताकर सहमति प्राप्त करते हुये अथवा उसे उसका पति बताते हुये या यदि वह 16 वर्ष से कम आयु की है तो उसकी सहमति प्राप्त करके उसके साथ सहवास करना बलात्कार है । इसके लिये धारा 376 में अभियुक्त को आजीवन कारावास का प्रावधान किया गया है ।

लज्जा भंग (धारा 354) – स्त्री का हाथ पकड़ना उसे नीचे गिरा देना, निर्वस्त्र कर देना आदि लज्जा भंग के उदाहरण है । भारतीय दण्ड संहिता की धारा 354 में इसे दो वर्ष तक की अवधि के कारावास का दण्डनीय अपराध घोषित किया गया है ।

मानसिक शारीरिक यातनाएं (धारा 498–क) – छोटी छोटी बातों को लेकर नारी को प्रताडित करना, उत्पीडित करना और उसके साथ निर्दयतापूर्ण व्यवहार करना । इसके लिये भारतीय दण्ड संहिता की धारा 498 (क) के अन्तर्गत 7 वर्ष के कारावास का दण्डनीय अपराध है ।

कन्या भ्रूण हत्या (धारा 312 से 318) – यह एक गैर जमानती अपराध है जिसमें माता पिता, डाक्टर व इससे जुडे अन्य व्यक्तियों की सजा का प्रावधान है । भारतीय दण्ड संहिता की धारा 312 से 318 तक भ्रूण हत्या रोकने के लिये कई दाण्डिक प्रावधान किये गये हैं । धारा 312 में यह व्यवस्था है कि कोई व्यक्ति किसी स्त्री का जानबूझ कर गर्भपात करवाता है तो ऐसे व्यक्ति को तीन वर्ष के कारावास की सजा व जुर्माने से दण्डित किया जा सकता है ।

छेड़छाड़ (धारा 294) – यदि कोई व्यक्ति किसी सार्वजनिक स्थल पर अश्लील गाने, अश्लील हरकते अथवा अन्य कोई ऐसा कृत्य करता है जिससे महिला की भावना को ठेस पहुंचती है तो ऐसे व्यक्ति को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 294 में तीन माह की सजा व जुर्माने का प्रावधान किया गया है।

अपहरण व वेश्यावृत्ति (धारा 363 से 373) – महिला की इच्छा के विरूद्ध उसका अपहरण कर विवाह, संभोग एवं वेश्यावृत्ति के लिये अवयस्क लड़कियों का क्रय–विक्रय करना भारतीय दण्ड संहिता की धारा 363 से 373 तक दण्डनीय अपराध घोषित गया है।

अप्राकृतिक सहवास (धारा 377) – जो कोई पुरुष किसी स्त्री या जीव जन्तु के साथ प्रकृति की व्यवस्था के विरूद्ध स्वेच्छा इन्द्रिय योग करेगा। वह आजीवन कारावास से दस वर्ष तक सश्रम या साधारण कारावास से दण्डित किया जा सकेगा एवं जुर्माने से भी दण्डनीय होगा।

घरेलू हिंसा संरक्षण विधेयक (2002, 2005) – इसके अन्तर्गत महिला के प्रति अत्याचार करने के परिणामस्वरूप एक वर्ष के कारावास की व्यवस्था की गयी है। घरेलू हिंसा संरक्षण विधेयक के अनुसार– "पीडित स्त्री के किसी नातेदार द्वारा उस पर आदतन प्रहार करना अथवा उसके जीवन को दुखदायी बताना अथवा उसे चोट या क्षति पहुंचाना या उसे अनैतिक जीवन बिताने के लिये मजबूर करना, घरेलू हिंसा वाला आचरण माना जायेगा।

राष्ट्रीय महिला आयोग का गठन कर महिलाओं के प्रति घटित हिंसा को रोकने के व्यावहारिक उपाय किये गये हैं।

महिला हिंसा समाप्त करने के लिये सुझाव –

हमारे देश में महिलाओं के प्रति हिंसा को रोकने के लिये वर्तमान कानूनों को व्यावहारिक दृष्टिकोण से यथार्थपरक ढंग से लागू करने की आवश्यकता है। इसमें कानून लागू करने वाले अधिकारियों के दृष्टिकोण में परिवर्तन की आवश्यकता के साथ–साथ शोषित महिला के माता पिता के दृष्टिकोण में भी परिवर्तन की आवश्यकता है। घरेलू हिंसा के मामलों में जब हम अपना ध्यान केन्द्रित करते हैं तब प्रश्न उठता है कि माता–पिता को भी अपनी पुत्रियों की दुखी दशा के लिये दोषी क्यों न ठहराया जाये? एक प्रश्न यह भी है कि लड़कियां दबाव के आगे क्यों झुकती है? जीवन का अन्तिम लक्ष्य विवाह नहीं किन्तु प्रसन्नता है।

हमारे सांस्कृतिक वातावरण में हिंसा को सहन करना इतना गहरा बैठा है कि न केवल अनपढ़, कम शिक्षित और आर्थिक रूप से निर्भर स्त्रियाँ बल्कि कुलीन, उच्च शिक्षित व आर्थिक रूप से आत्म निर्भर स्त्रियाँ भी कानूनी या पुलिस संरक्षण नहीं लेती है। हमारे समाज में महिलाओं की दुर्दशा को नियंत्रित करने के उपाय खोजते समय तथा स्त्री निर्व्यैक्तिकरण के संकट से निपटने के लिये विचार करते समय निम्न बिन्दुओं पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है –

1. महिलाओं के प्रति पुरुषों के परम्परागत दृष्टिकोण को बदलने की आवश्यकता की चेतना पैदा करना।
2. महिलाओं के स्वैच्छिक संगठनों को मजबूत करना।
3. महिलाओं के लिये शिक्षा एवं प्रशिक्षण कार्यक्रम पर विशेष ध्यान देना।
4. महिलाओं के लिये महिला आवास खोले जाये।
5. अपराधी न्याय व्यवस्था में बदलाव लाया जाये।

10.6 सारांश

महिलाओं के प्रति हिंसा के घटित अपराधों का एक साथ विश्लेषण करने पर पता चलता है कि आम तौर पर हिंसा की शिकार वे महिलाएं होती हैं:

1. जो असहाय एवं हीन भावना से ग्रसित होने की पीड़ा, जिनमें स्व–अवमूल्यन व स्व निन्दा पायी जाती है या जिनका हिंसा के अपराधियों व कानून का उल्लंघन करने वालों द्वारा संवेगात्मक भयादोहन होता है या जो शक्तिहीन परहित चिन्तन से पीड़ित रहती हैं।
2. वे महिलाएं जो तनावपूर्ण पारिवारिक पर्यावरण में रहती है।
3. वे महिलाएं जो आर्थिक रूप से सदैव पूर्णत: दूसरों पर ही निर्भर रहती है।
4. जिनमें सामाजिक अन्तर – वैयक्तिक कुशलता का अभाव होता है जिसके कारण उन्हें व्यवहार सम्बन्धी समस्याओं का सामना करना पड़ता है।
5. जिनके पति या ससुराल वाले विकसित व्यक्तित्व वाले होते हैं।
6. जिनके पति शराबी होते हैं।

वर्तमान में महिलाओं के प्रति हिंसा में अर्न्तपारिवारिक यौन हिंसा या शोषण (Inter familial sexual Violence) भी निरन्तर बढ़ती जा रही है। जिस प्रकार ससुराल वालों या पति द्वारा मारपीट के मामले पुलिस में बहुत कम दर्ज कराये जाते हैं, उसी प्रकार परिवार के सदस्यों द्वारा किये जाने वाले यौन आक्रमण के मामले कानूनी एजेन्सियों के प्रकाश में बहुत कम लाये जाते हैं।

महिला हिंसा रोकने के सरकार द्वारा किये गये विशेष उपाय – महिलाओं के प्रति किये गये अपराध एवं हिंसा को रोकने के सम्बन्ध में अपनाये गये उपायों में तीन उल्लेखनीय है:

1. दिसम्बर, 1995 में राज्यसभा में एक विधेयक "महिलाओं के प्रति पाश्विक, निर्दयी, अपराध निरोधक विधेयक, 1995 प्रस्तुत किया गया। जिसमें महिलाओं के प्रति पाश्विक व बर्बर अपराध करने वाले के विरूद्ध मृत्यु दण्ड का प्रावधान किया गया था। विधेयक में यह कहा गया है कि ऐसे अपराधों को संज्ञेय तथा गैर जमानती घोषित किया जाये और अपराधियों पर विशेष अदालतों में मुकदमें चलाये जायें।
2. उच्चतम न्यायालय ने 17 जनवरी 1996 को एक निर्णय दिया कि नियमत:: बलात्कार के मुकदमों की सुनवाई बन्द कमरे में होनी चाहिये ताकि पीड़ित महिला गवाह के कटघरे में खड़ी होकर अपमानित होने से बच जाये। बन्द कमरे में मुकदमा न केवल उस महिला के आत्म सम्मान को बचायेगा बल्कि पीड़ित की गवाही की गुणवत्ता में सुधार की संभावना है। यह भी सुझाव दिया गया कि यौन हमलों के मामलों की सुनवाई जहाँ तक संभव हो महिला न्यायाधीशों द्वारा ही की जाये। इसमें यह भी कहा गया कि अदालतों को पीड़ित महिलाओं के नाम का उल्लेख करने से बचना चाहिये ताकि उस महिला को अपमान से बचाया जा सके।
3. दिल्ली में महिलाओं के प्रति किये गये अपराध के मामलों पर मुकदमे चलाये जाने के लिये महिला न्यायालयों की स्थापना की गयी है। महिला न्यायालयों में वातावरण इतना आक्रामक या रोष भरा नहीं होता है जितना कि अन्य न्यायालयों में जहां पीड़ित महिला को बचाव पक्ष के वकील के प्रश्नों की बौछार का सामना करना पड़ता है। साधारण न्यायालयों में पीड़ित महिलाओं को न्याय मिलने में कई वर्ष लग जाते हैं किन्तु महिला न्यायालय में कुछ महिने ही लगते हैं।

संक्षेप में, महिलाओं के निर्वैक्तिकरण के आघात को कम करने के लिये निम्नलिखित सुझाव दिये जा सकते हैं:

1. महिलाओं को कानूनी शिक्षा देना तथा मीडिया, प्रकाशित साहित्य और स्वैच्छिक संगठनों के माध्यम से उन्हें उनके अधिकारों के प्रति जागृत करना।
2. न्यायिक क्रियावाद अर्थात् कानून की शाब्दिक या तकनीकी व्याख्या देने की अपेक्षा उदार एवंरचनात्मक व्याख्या देना।

3. न्याय पर लगातार दृष्टि रखकर कानून के प्रभाव का निरन्तर परीक्षण करना।
4. सुरक्षा गृहों की देखभाल करना।
5. निशुल्क कानूनी सहायता संस्थाओं को मजबूत करना।
6. परिवार न्यायालयों एवं परिवार कानूनी सलाह सेवाओं की कार्य प्रणाली को अधिक प्रभावशाली बनाकर महिलाओं के प्रति हिंसा को रोका जा सकता है।

10.7 शब्दावली

महिला हिंसा – **किसी महिला से प्रत्यक्ष या परोक्ष बल प्रयोग करके कुछ लेना जो कि स्वेच्छा से वह देना नहीं चाहती तथा जिससे उस महिला को शारीरिक आघात या भावात्मक धक्का या दोनों ही लगे**

उत्पीडित महिलाएं – **वे महिलाएं जो पुरूष या महिला के द्वारा ही विविध प्रकार की हिंसा या अपराधों का शिकार बनती है।**

अर्न्तपारिवारिक यौन हिंसा – **परिवार के सदस्यों द्वारा किये जाने वाले यौन हमले जिससे महिला को भावनात्मक अवसाद व शारीरिक क्षति होती है।**

पितृसत्तात्मकता – **परिवार की सत्ता का अधिकारी या संरक्षण पुरूष के हाथ में होता है। निर्णय लेने की क्षमता भी पुरूष के हाथ में ही होती है।**

निर्वैयक्तिकरण – **जिसमें महिला के स्वतंत्र अस्तित्व को चुनौती दी जाती है।**

महिला आवास – **कामकाजी व अकेली रहने वाली महिलाओं के लिये सुविधा सम्पन्न आवास जिसमें उसे परिवार से अलग रहने पर संरक्षण दिया जाता है।**

10.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. भारतीय समाज में महिलाओं की ऐतिहासिक, सामाजिक पृष्ठ भूमि की विवेचना कीजिए?
2. महिलाओं के प्रति हिंसा के मूल कारण बताइये।
3. भारत में महिला हिंसा रोकने के लिये किये गये कानूनी प्रावधानों की व्याख्या कीजिये।
4. भारत में महिला हिंसा को रोकने के लिये स्वैच्छिक संगठनों व जनसंचार माध्यमों की भूमिका को बताइये।
5. घरेलू हिंसा अधिनियम पर टिप्पणी लिखिये।

10.10 संदर्भ ग्रंथ

1. राम आहूजा– क्राइम अगेन्स्ट वूम, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर 1987
2. मुकेश आहूजा– विडोज, न्यू ऐज पब्लिकेशन्स दिल्ली, 1996
3. चेयमेन जेन रोबर्टस व गेट्स माग्रेरेट (संपादित)– द विक्टीमाईजेशन ऑफ वूम सेज पब्लिकेशन्स, बेवरली हिल्स, 1978

4. आर. जे. जेलीस– इन्टीमेट वाइलेन्स इन फेमिलिज सेज पब्लिकेशन्स बेवरली हिल्स, 1985
5. क्राइम इन इंडिया 1995– नेशनल क्राइम रिकार्डस ब्यूरो दिल्ली, 1955
6. के. पी. कृष्णा व डी. पी. सिंह– विक्टिमस ऑफ क्राइम इन सोशल चेज सितम्बर 1982, वोल्यूम, 12 नं. 3
7. राम आहूजा– द प्रिजन सिस्टम – इफेक्टिवनेज एण्ड इफेक्टस ऑफ प्रिजन कॉस्टडी साहित्य भवन, आगरा,1981
8. कुसम चढ्ढा– द इंडियन जेल, विकास पब्लिकेशन्स, दिल्ली 1964 एम.पी. सिंह, "पर्सनलटी ऑफ क्रिमिनल" श्री राम पब्लिशर्स, आगरा– 1973
9. राम आहूजा– यूथ एण्ड क्राइमरावत पब्लिकेशन्स जयपुर, 1996

इकाई 11

साइबर अपराध

इकाई की रूपरेखा

11.0 उद्देश्य

11.1 प्रस्तावना

11.2 साइबर स्पेश

11.3 ई–कामर्स

11.4 साक्ष्य में इलेक्ट्रोनिक अभिलेख

11.5 साइबर अपराध

11.6 सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000

11.7 सारांश

11.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

11.9 शब्दाबली

11.10 संदर्भ ग्रन्थ

11.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- संसूचना और सूचना के इलेक्ट्रानिक भण्डारण और इलेक्ट्रानिक आदान प्रदान की आदर्श विधि का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- साइबर कानून की आवश्यकता को समझ सकेगें।
- साइबर कानून के बारे में समझ सकेंगे।
- साइबर कानून के बारे में जान सकेगें।
- साइबर अपराधों के बारे में जान सकेगें।
- साइबर अधिनियम के प्रावधानों को समझ सकेंगे।।
- कम्प्यूटर क्रांति और भूमण्डलीकरण के प्रभावों को समझ सकेगें।

11.1 प्रस्तावना

संयुक्त राष्ट्र महासभा ने अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में इलेक्ट्रानिक वाणिज्य संबंधी आदर्श विधि को अंगीकार कर लिया है। इसके तहत ही संसूचना और सूचना के भण्डारण के कागज आधारित तरीकों के अनुकल्पों को लागू

होने वाली विधि की एकरूपता की आवश्यकता को ध्यान में रखकर सूचना प्रौद्योगिकी, अधिनियम, 2000 आदर्श विधि को निर्धारित की गई है।

सूचना प्रौद्योगिकी की प्रभावी व कारगर क्रियान्विति से सकारात्मक परिणाम आये हैं। इससे कार्यो में पारदर्शिता आई है। लोगों के दृष्टिकोण में बदलाव आया है। भ्रष्टाचार उन्मूलन में सहायता मिली है।

आधुनिक संचार तंत्र और डिजिटल तकनीक से मानव जीवन में आश्चर्यजनक बदलाव आयें है। कम्प्यूटर क्रांति ने लोगों के व्यापार की गति में क्रांतिकारी परिवर्तन ला दिया है। उपभोक्ता और व्यापारी अधिकांशतः कम्प्यूटर का उपयोग करने लगे है। अब व्यापार में पारम्परिक कागजी तरीके के अलावा आधुनिक इलेक्ट्रानिक ट्रांजिट और इलेक्ट्रानिक डाटा संग्रहण किया जा सकता है।

इलेक्ट्रानिक तरीके से सूचना संग्रहण एवं इसके आदान–प्रदान के अनेक फायदे हैं। यह सस्ता, संग्रहण में सुलभ, आसानी से परिवर्तन और तीव्र गति से संचारित करने का उत्तम माध्यम है। यह कार्य विधि संगत तरीके से होना चाहिए। इसके लिए जरूरी है कि सूचनाओं का इलेक्ट्रानिक आदान–प्रदान भारतीय साइबर कानून के अन्तर्गत हो। इस कानून का प्रावधान सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 में वर्णित है।

कागज पर टंकित और हस्ताक्षरयुक्त सामग्री को ही विधि के अनुरूप माना जाता था। अब सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम में इलेक्ट्रानिक रूप से प्रदत्त सामग्री को विधि संगत माना गया है। इलेक्ट्रानिक गवर्नेन्स अथवा इलेक्ट्रानिक नियमन में यह उपबंध विधि मान्य है कि इलेक्ट्रानिक तरीके से पक्ष सामग्री को अपने अंकीय चिह्नक अर्थात् डिजिटल सिग्नेचर से अधिप्रमाणित किया जा सकता है।

अभी तक न्यायालय में साक्ष्य के रूप में लिखित दस्तावेज या मौखिक रूप से गवाही प्रस्तुत की जा सकती थी। अब भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1842 में भी संसोधन कर दिया गया है। अब साक्ष्य के तौर पर इलेक्ट्रानिक अभिलेख भी प्रस्तुत किये जा सकते हैं। रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया एक्ट, 1934 में भी यह व्यवस्था कर दी गई हैं कि वित्तीय संस्थान वित्त के आदान–प्रदान में इलेक्ट्रानिक कामर्स का उपयोग कर सकते है।

11.2 साइबर स्पेश

साइबर स्पेश में कम्प्यूटर, कम्प्यूटर प्रणाली और कम्प्यूटर नेटवर्क से सम्बन्धित सभी कार्यों का समावेश होता है। 'साइबर स्पेश' शब्द का सन 1984 से पहले कोई नहीं जानता था। इस शब्द को सर्वप्रथम विनिमय गिवनस ने अपने नोबल 'नेक्रोमेन्सर' में उपयोग किया था। इसका शाब्दिक अर्थ ऑन लाइन है। कम्प्यूटर एक दूसरे से मोडम द्वारा नेटवर्क से जुड़े होते है।

1 कम्प्यूटर

पहला पर्सनल कम्प्यूटर अल्टेयर का निर्माण सन 1975 में हुआ। सन् 1977 में अमेरिका के दो विद्यार्थी स्टीवन पी. जोब्स और स्टीफन जी. वोजिंग ने एपल कम्यूटर कम्पनी बनाई। इस कम्पनी द्वारा एपल II कम्प्यूटर को बाजार में लाया गया। यह कम्पयूटर सस्ता था और कम्प्यूटर के कार्य के परिणाम भी लोगों के सामने सकारात्मक आये।

सन 1981 में आई.बी.एम. कम्पनी कम्प्यूटर क्षेत्र में आई। इसने 'DOS' डिस्क आपरेटिंग सिस्टम शुरू किया। धीरे–धीरे अनेक कम्पनी बाजार में आने लगी

कम्प्यूटर को अधिनियम की धारा दो (झ) में परिभाषित किया गया है। कम्प्यूटर से ऐसी इलेक्ट्रानिक चुम्बकीय, प्रकाशीय या अन्य द्रुत डाटा संसाधन युक्ति या प्रणाली से अभिप्रेत है जा इलेक्ट्रोनिकी, चुम्बकीय या प्रकाशिय तंरगों के अभिचालनां द्वारा तर्कसंगत, अंकगणितीय और स्मृति फलन के रूप में कार्य करता है। इसके

अंतर्गत सभी निवेश, उत्पाद, प्रकमण, भण्डारण, कम्प्यूटर साफ्टवेयर या संचार सुविधाएं भी हैं जो किसी कम्प्यूटर प्रणाली या कम्यूटर नेटवर्क में कम्यूटर से संयोजित होती है।

.2 इन्टरनेट

कम्प्यूटर में दूरसंचार नेटवर्किंग करके डाटा का आदान–प्रदान करना इन्टरनेट कहलाता है। कम्प्यूटर का केन्द्रीय स्थर सरवर द्वारा अनेक कम्पयूटर का नेटवर्किंग किया जाता। इलेक्ट्रानिक डाटा में शब्द में शब्द सामग्री, चित्र, आवाज आदि सभी होते है। इसे मस्ती मीडिया कहा जाता है। इन्टरनेट के द्वारा विश्व के किसी भी कौने से सामग्री को भेजा जा सकता है जिसमें समय भी कुछ सैकण्डों का लगता है।

सूचना तकनीकी ने इलेक्ट्रानिक तरीके से डाटा संग्रहण, डाटा के आदान–प्रदान को बहुत की सरल व सुगम बना दिया है।

.3 इन्टरनेट नियमन

सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम के अध्याय 3 में इलेक्ट्रानिक अभिलेखों की विधिमान्यता को स्पष्ट किया गया है। इलेक्ट्रानिक तरीके से भेजे गये अभिलेखों में अंकीय चिह्नों (डिजिटल सिग्नेचर) को विधिमान्य माना गया है।

कानून में इंगित है कि अधिनियम की धारा 6,7,8 इस बात पर जोर देने का अधिकार प्रदान नहीं करती है कि दस्तावेजों को इलेक्ट्रानिक तरीके से ही प्रस्तुत किये जायें या स्वीकारें जायें।

ई–गवर्नेन्स से पूरे देश में उपभोक्ताओं को सेवाएं कम खर्च पर उपलब्ध कराई जा सकती है। इसमे सरकारी फसलों में जनता की भागीदारी बढाई जा सकती है। आसानी से जनता से सम्पर्क किया जा सकता है और नीति निर्धारण में भी जनता का सहयोग व प्रतिक्रियाएं ली जा सकती है।

11.3 ई–कामर्स

साधारणतया कॉमर्स को वाणिज्य कहा जाता है। जिसका अर्थ व्यापार करना होता है। यह वाणिज्य कम्प्यूटर इंटरनेट द्वारा किया जाये तो इसे इलेक्ट्रानिक कामर्स कहा जाता है। सूचना प्रोद्योगिकी अधिनियम, 2000 में उल्लेखित है कि इलेक्ट्रानिक डाटा के आदान–प्रदान द्वारा और इलेक्ट्रानिक संसूचना के अन्य साधनों द्वारा किया जाने वाला संव्यवहार इलेक्ट्रानिक वाणिज्य कहलाता है।

ई–कामर्स व्यापारियों के मध्य (B2B) और व्यापारी व उपभोक्ता के मध्य (B2C) के बीच होता है। पहला ई–कामर्स होलसेल कहलाता है और दूसरा व्यापार रिटेल कहलाता है। ई–कामर्स में धन का आदान–प्रदान ई.एफ.टी. (E.F.T.) इलेक्ट्रानिक फण्डस ट्रांसफर द्वारा किया जाता है।

11.4 साक्ष्य में इलेक्ट्रानिक अभिलेख

इलेक्ट्रानिक अभिलेखों को न्यायालय के निरीक्षण के लिए साक्ष्य के रूप में पेश किये जा सकते है। सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 की धारा 92 में भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 में किये गये संशोधन को वर्णित किया गया है।

इलेक्ट्रानिक अभिलेखों की अन्तर्वस्तु के बारे में मौखिक स्वीकृतियां सुसंगत मानी जायेगी यदि इलेक्ट्रानिक अभिलेख असली होगा।

11.5 साइबर अपराध

सूचना क्रांति का आधार कम्प्यूटर है। इससे कम्प्यूटर महत्वपूर्ण हो गया है। अब कार्यालय, साहित्य और बैंकिग आदि सभी कार्य कम्प्यूटर और कम्प्यूटर नेटवकिंग में किये जा रहे है। यह सरल और सुगम साधन बन गया है। इंटरनेट से कम्प्यूटर में रखे इलेक्ट्रानिक दस्तावेजों को बंद सैकण्डों में लाखों किलोमिटर दूरी पर पहुचाना सुलभ बना दिया है। इंटरनेट ने ही इलेक्ट्रानिक अभिलेखों को अब असुरक्षित भी हो गया है। इलेक्ट्रानिक अभिलेखों की सुरक्षा व्यवस्था के लिए भारतीय दंड सहिता, 1860 में आवश्यक संशोधन किये गये है।

.1 साइबर क्राइम

कम्प्यूटर के दस्तावेजों से छेड़छाड़ और उनका सम्बन्धित की असहमति से उपयोग से आये संकट से बचने के लिए सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम में ऐसे कार्यो को साबर क्राइम की श्रेणी में शामिल किया है।

कम्प्यूटर, कम्प्यूटर नेटवर्क, कम्प्यूटर डाटा, कम्प्यूटर प्रणाली कम्प्यूटर साधन से किसी डाटा स्त्रोत या सूचना को डाउनलोड करना, कॉफी करना, चुराना, कम्प्यूटर या कम्प्यूटर नेटवर्क में वायरस छोड़ना, अश्लील सूचनाओं का प्रकाशन, गोपनीयता या अंतरंगता भंग करना, कपटपूर्ण प्रयोजन में प्रकाशन आदि करना या ऐसे कार्यो में सहयोग करने को सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम में साइबर अपराध के दायरे में शामिल किया गया है।

ज्यादा से ज्यादा ज्ञान और जानकारी इलेक्ट्रानिक रूप में रखी जा रही है ऐसी स्थिति में केंपिंग, डाउन लोडिग, कम्प्यूटर में अवैध तरीके से प्रवेश, उसके गुणक्ता को कम करने, वायरस को दाखिल करने, कम्प्यूटर सिस्टम को नुकसान पहुचाने, उससे छेड़छाड़ करने, कम्प्यूटर सिस्टम में वैध प्रवेश को रोकना, दूसरों के इंटरनेट खातों का इस्तेमाल करना आदि सभी साइबर अपराधों में आते है। यह कार्य कम्प्यूटर प्रणाली को हैंकिग कर देते है।

2 दण्ड के प्रावधान

अधिनियम की धारा 66 में उल्लेख है कि कोई व्यक्ति, किसी व्यक्ति को सदोष हानि या नुकसान कारित करने का आशय से कम्प्यूटर संसाधन में रखी गई सूचनाओं को नष्ट करेगा या मिटायेगा या परिवर्तित करेगा अथवा उसके मूल्य या उपसुक्तता में हराम करेगा या उसे किसी साधन द्वारा हानिकारक रूप से प्रभावित करेगा तो वह सिस्टम को हैंकिग करता है। इसके लिए तीन वर्ष की कैद या दस लाख रूपये तक का जुर्माना अथवा दोनों से दण्डित किया जा सकता है।

तत्समय प्रवृत्त विधि द्वारा अपेक्षित कम्प्यूटर साधन कोड से छेडछाड करने वाले को भी अधिनितम धारा 65 में तीन वर्ष तक का कारावास या दो लाख रूपये तक का जुर्माना अथवा दोनों से दण्डित करने का प्रावधान है ।

3 अश्लील सूचनाओं का प्रकाशन

अश्लील सूचनाओं के प्रकाशन या कामोत्तेजक या कामुक रूचि की और आकर्षित करने वाली या व्यक्तियों के चरित्र बिगाडने वाली या भ्रष्ट करने वाली सूचनाओं को इलेक्ट्रानिक रूप से प्रकाशन करना या प्रेषित करना या करवाना जैसे कार्य साइबर अपराध है।

ऐसे अपराध के प्रथम दोष सिद्ध होने पर आरोपित व्यक्ति को पांच वर्ष तक की अवधि का कारावास या एक लाख रूपये तक के जुर्माने या दोनों से दण्डित किया जा सकता है।

ऐसे अपराधों का दूसरा पश्चात्वर्ती दोष सिद्ध होने की दशा में दस वर्ष तक की कैद या दो लाख रूपये तक का जुर्माना अथवा दोनों से ही दण्डित किया जा सकता है।

4 साइबर क्राइम केस

यहां साइबर क्राइम के कुछ उदाहरण दिये जा रहे है –

सिस्टम से छेड़छाड़

जयपुर शहर में साइबर क्राइम की श्रेणी में आने वाले मामले पकड़े गये है। वर्ष 2003 में सिंधी कैम्प में स्थित केन्द्रीय बस स्टैण्ड के टिकटिंक सिस्टम के साथ छेडछाड करने का मामला पुलिस थाने में दर्ज किया गया। रोडवेज के टिकिट बुकिंग के लिए 33 हब (बाहरी बुकिंग सेन्टर) बनाये गये। कनेक्टिविटि चैक करने के नाम पर किसी व्यक्ति ने सिस्टम के साथ छेडछाड करके उसमें गलत जानकारी डाल दी।

इस मामले को पुलिस ने सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम के तहत कम्प्यूटर स्त्रोत दस्तावेजों के साथ छेडछाड और कम्प्यूटर प्रणाली में अवैधानिक सूचना डालने के अपराध का कैस दर्ज किया।

कम्प्युटर नेटवर्क हैकिंग

वर्ष 2007 में जयपुर शहर के वैशाली नगर थाने में इलेक्ट्रानिक मेल की हैंकिग करने का मामला दर्ज किया गया। कुलदीप इंटरनेशनल एक्सपोर्ट कम्पनी के संचालक ने पुलिस में रिर्पोट की कि उसकी कम्पनी के इलेक्ट्रानिक मेल की प्राइवेट कुंजी का हैक कर कम्पनी के कम्प्यूटर नेटवर्क का दुरूपयोग किया।

इलेक्ट्रानिक दस्तावेजों की चोरीं

सूचना तकनीक के क्षेत्र में रिसर्च एण्ड डेबलपमेन्ट की कम्पनी एम्में टैली पॉवर लिमिटेड साइबर सिटी गुडगांव में काम कर रही थी। कम्पनी करोडों रूपये की लागत वाले प्रोजेक्ट के डाटा (इलेक्ट्रानिक दस्तावेज), चोरी होने का मामला पुलिस में दर्ज कराया। मोबाइल सर्विस प्रोवाइडर कम्पनी के लिए हार्डवेयर व साफ्टवेयर प्रोग्राम डेवलप करने वाली इस कम्पनी को डाटा चोरी से चार सौ करोड़ का नुकसान हो गया।

11.6 सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000

इलेक्ट्रानिक डाटा के आदान–प्रदान द्वारा और इलेक्ट्रानिक संसूचना के अन्य साधनों द्वारा जिन्हें सामान्यतया इलेक्ट्रानिक वाणिज्य' कहा जाता है और जिनमें संसूचना और सूचना के भंडारण के कागज– आधारित तरीकों के अनुकल्पों को उपयोग अंतवीलत है, किए गए संव्यवहारों को विधिक मान्यता देने, सरकारी अभिकरणों के अनुकल्पो का उपयोग अंतर्वलित है, किए गए संव्यवहारों को विधिक मान्यता देने, सरकारी अभिकरणों में दस्तावेजों को इलेक्ट्रानिक रूप में फाइल करना सुकर बनाने और भारतीय दंड संहिता, भारतीय साक्ष्य अधिनियम 1872 बैंककार वही साक्ष्य अधिनियम, 1891 और भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम, 1934 कर और संसोधन करने तथा उससे संबंधित या उसके अनुषंगिक विषयों का उपबंध करने के लिए अधिनियम।

संयुक्त राष्ट्र महासभा ने तारीख 30 जनवरी, 1997 के संकल्प ए/आर ई एस/51/162 द्वारा अंतराष्ट्रीय व्यापार विधि से संबंधित संयुक्त राष्ट्र आयोग द्वारा अंगीकार की गई इलेक्ट्रानिक वाणिज्य संबंधी आदर्श विधि को अंगीकार कर लिया है

उक्त संकल्प में अन्य बातों के साथ, यह सिफारिश की गई है कि सभी राज्य, जब वे अपनी विधियों का अधिनियमन या पुनरीक्षण करें, संसूचना और सूचना के भंडारण के कागज– आधारित तरीकों के अनुकल्पों को लागू होने वाली विधि की एकरूपता की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए, उक्त आदर्श विधि पर अनुकूल ध्यान दें –

उक्त संकल्प को प्रभावी करना और विश्वसनीय इलेक्ट्रानिक अभिलेखों द्वारा सरकारी सेवाएं दक्षतापूर्वक देने का संवर्धन रना आवश्यक समझा गया है

भारत गणराज्य के इक्यावनवें वर्ष में संसद द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित हो –

अध्याय 1

प्रारंभिक

4 (1) इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 है।

(2) इसका विस्तार संपूर्ण भारत पर होगा और, इस अधिनियम में जैसा अन्यथा उपबंधित है उसके सिवाय, यह किसी व्यक्ति द्वारा भारत के बाहर किये गए किसी अपराध या इसके अधीन उल्लंघन को भी लाग होता है।

(3) यह उस तारीक को प्रवृत्त होगा, जो केन्द्रीय सरकार, अधिसूचना द्वारा नियत करे और इस अधिनियम के भिन्न–भिन्न उपबंधों के लिए भिन्न–भिन्न तारीखें नियत की जा सकगी औरे किसी ऐसे उपबंध में अधिनियम के प्रारंभ के प्रति किसी निर्देश का अर्थ लगाया जायगा कि वह उस उपबंध के प्रारंभ के प्रति निर्देश है।

(4) इस अधिनियम की कोई बात निम्नलिखित को लागू नहीं होगी –

(क) परक्रात्य लिखित अधिनियम, 1881 की धारा 13 में यथापरिभाषित परक्राम्य लिखित;

(ख) मुख्यतारनामा अधिनियम, 1882 की धारा 1 (क) मं यथापरिभाषित मुख्यतानामा;

(ग) भारतीय न्यास अधिनियम 1882 की धारा 3 में यथापरिभाषित न्यास;

(घ) भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 की धारा 2 खंड (ज) मे यथापरिभाषित बिल, जिसके अन्तर्गत कोई अन्य वसीयत व्ययन भी आता है, चाहे उसका जो भी नाम हो;

(ङ) स्थावर संपति या ऐसी संपति में किसी हित के विक्रय या हस्तांतरण के लिए कोई संविधा;

(च) किसी ऐसे वर्ग का दस्तावेज या संव्यवहार, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा राजपत्र में अधिसूचित किया जाए।

5 (1) इस अधिनियम मं, जब तक कि संदर्भ में अन्यता अपेक्षित न हो –

(क) 'अभिगम' से, इसके व्याकरणिक रूपभेदों आर सजातीय पदों सहित अभिप्रेत है कम्पयूटर कम्प्यूटर या कम्प्यूटर नेटवर्क में प्रवेश प्राप्त करना, उसके तर्कसंगत, अंकगणितीय अथवा स्मृति फलन संसाधनों के द्वारा अनुदेश देना या संसूचना देना;

(ख) "प्रेषिती" से ऐसा व्यक्ति अभिप्रेत है जो इलेक्ट्रानिक अभिलेख प्राप्त करने के लिए प्रवर्तक द्वारा अशयत है किन्तु इसके अन्तर्गत कोई मध्यवर्ती नहीं है;

(ग) 'न्यायनिर्णायक अधिकारी, से धारा 46 की उपधारा (1) के अधीन नियुक्त न्यायनिर्णायक अधिकारी अभिप्रेत है;

(घ) अंकीय चिह्नक लगाना से इसके व्याकरणिक रुपभेदों और सजातीय पदों सहित अभिप्रेत है किसी इलेक्ट्रानिक अभिलेख को अंकीय चिह्नक द्वारा अधिप्रमाणित करने के प्रयोजन के लिए किसी व्यक्ति का कोई कार्यपद्धति या प्रक्रिया अंगीकार करना;

(ङ) 'समुचित सरकार' से

1 संविधान की सातवीं अनुसूची की सूची 2 में प्रमाणित,

2 संविधान की सातवीं अनुसूची की सूची 3 क अधीन अधिनियमित किसी राज्य विधि से संबंधित,

किसी विषय के संबंध में राज्य सरकार और किसी अन्य दशा में केन्द्रीय सरकार अभिप्रेत है

(च) 'असमित गूढ प्रणाली; से सुरक्षित कुंजी युग्म की कोई प्रणाली अभिप्रेत है जिसमें अंकीय चिह्नक सृजित करने के लिए एक प्रादवेट कुंजी और अंकीय चिह्नक को सत्यापित करने के लिए एक लोक कुंजी है

(छ) 'प्रमाणकर्त्ता प्राधिकारी; से ऐसा व्यक्ति अभिप्रेत है जिसे धारा 24 के अधीन अंकीय चिह्नक प्रमाणपत्र जारी करने के लिए अनुज्ञप्ति दी गई है

(ज) 'प्रमाणीकरण पद्धति विवरण से प्रमाणकर्ता द्वारा उन पद्धतियों को विनिर्दिष्ट करने के लिए जारी किया गया विवरण अभिप्रेत है जो प्रमाणकर्ता प्राधिकारी, अंकीय चिह्नक प्रमाणपत्र जारी करने में प्रयोग करता है।

(ङ) 'कम्प्यूटर से इलेक्ट्रानिक चुम्बकीय, प्रकाशीय या अन्य द्रुत डाटा संसाधन युक्ति या प्रणाली अभिप्रेत हे जो इलेक्ट्रानिक चुम्बकीय या प्रकाशीय तंरगों के अभिचालनों द्वारा तर्कसंगत अंकगणितीय और स्मृति फलन के रूप मे कार्य करता है ओर इसके अंतगर्त निवेश, उत्पाद, प्रकमण, भंडारण, कंम्पयूटरसाफ्टवेयर या संचार सुविधाएं भी है जो किसी कम्पयूटर प्रणाली या कम्प्यूटर नेटवर्क में कंम्पयूटर नेटवर्क में कम्प्यूटर से संयोजित या संबंधित होती है

(ल) कम्प्यूटर नेटवर्क से

(i) उपग्रह सूक्ष्म तरंग, भौतिक लाइन या अन्य संचार मीडिया के उपयोग, और

(ii) दो या अधिक अंत: संबद्ध कम्प्यूटरों से मिलकर बने टर्मिनलों या किसी सम्मिश्र चाहे अंत संबंध निरन्तर रखा जाता है या नहीं के माध्यम से एक या अधिक कम्यूटरों का अंत: संबंध अभिप्रेत है

(ट) 'कम्प्यूटर साधन' से कम्प्यूटर कम्प्यूटर प्रणाली कम्प्यूटर नेटवर्क, डाटा, कम्प्यूटर डाट संचय या साफ्टवेयर अभिप्रेत है

(ठ) 'कम्प्यूटर प्रणाली' से निवेश और निर्गम सहायक युक्तियां सहित और ऐसे कैलकुलेटरों को छोड़कर, जो क्रमादेश्य नहीं है और जो बाह्य फाइलों के साथ संयोजन में उपयोग में नहीं आ सकते, ऐसी युक्ति या युक्तियों का संग्रह अभिप्रेत है जिनमें कम्प्यूटर प्रोग्राम. भंडारण और पुन: प्राप्ति संचार नियंत्रण और अन्य कृत्य करती है।

(ड) नियंत्रक से धारा 17 की उपधारा 1 के अधीन नियुक्त प्रमाणकर्ता प्राधिकारियों का नियंत्रण अभिप्रेत है।

(ढ) 'साइबर अपील अधिकरण' से धारा 48 की उपधारा (1) के अधीन स्थापित साइबर विनिमयन अपील अधिकरण अभिप्रेत है।

(ण) 'डाटा से सूचना जानकारी तथ्यों, संकल्पनाओं या अनुदेशों कर निरूपण अभिप्रेत है जिन्हें एक निश्चित रीति से तैयार किया जा रहा है या तैयार किया गया है और जो कम्प्यूटर प्रणाली या कम्प्यूटर नेटवर्क में संसाधित किए जाने के लिए आशयित है, संसाधित किया जा रहा है या संसाधित किया गया हे आर किसी रूप में (जिसके अंतर्गत कम्प्यूटर प्रिन्टआउट, चुम्बकीय या प्रकाशीय भंडारण मीडिया, छिद्रित टेप है) या कम्प्यूटर की स्मृति प्रिन्टआउट, चुम्बकीय या प्रकाशीय भंडारण मीडिया छिद्रित टेप है। या कम्प्यूटर की स्मृति में आंतरिक रूप से भंडारित हो सकता है।

(त) 'अंकीय चिह्क' से किसी उपभोगकर्ता द्वारा धारा (3) के उपबंध के अनुसार किसी इलेक्ट्रानिक पद्धति या प्रक्रिया द्वारा किसी इलेक्ट्रानिक अभिलेख का अधिप्रमाणन अभिप्रेत है,

(थ) 'अंकीय चिह्नक प्रमाणपत्र' से धारा 35 की उपधारा (4) के अधीन जारी किया गया अंकीय चिह्नक प्रमाणपत्र अभिप्रेत है।

(द) 'सूचना' के संदर्भ में इलेक्ट्रानिक रूप से किसी मीडिया, चुम्बकीय प्रकाशीय कम्यूटर स्मृति माइक्रोफिल्म, कम्प्यूटर उत्पादित सूक्ष्मिका या समरूप युक्ति में उत्पादित प्रेषित प्राप्त भंडारित कोई सूचना अभिप्रेत है।

(ध) 'इलेक्ट्रानिक राजपत्र' से इलेक्ट्रानिक रूप से प्रकाशित राजपत्र अभिप्रेत है

(न) 'इलेक्ट्रानिक अभिलेख' से किसी इलेक्ट्रानिक रूप या माइक्रोफिल्म या कम्प्यूटर उत्पादित सूक्ष्मिका में डाटा, अभिलेख या उत्पादित डाटा भंडारित प्राप्त या प्रेषित प्रतिबिंब या ध्वनि अभिप्रेत है

(प) किसी कम्प्यूटर के संबंध मे 'फलन' के अंतर्गत किसी कम्प्यूटर से अथवा उसमें तर्क नियंत्रण, अंकबणितीय प्रक्रम, विलोप भंडारण और पुन: प्राप्ति तथा संचार या दूरसंचार भी आता है।

(फ) सूचना के अंतर्गत डाट पाठ, प्रतिबिंब, ध्वनि, वाणी, कोड, कम्प्यूटर कार्यक्रम, सूक्ष्मिका साफ्टवेयर और डाटा संचय माइक्रोफिल्म या कम्प्यूटर उत्पादित सूक्ष्मिका भी आती है।

(ब) किसी विशिष्ट इलेक्ट्रानिक संदेश के संबंध में मध्यवर्ती में ऐसा व्यक्ति अभिप्रेत है जो किसी अन्य व्यक्ति की और से उस संदेश को प्राप्त करता है, भंडारित करता है सा प्रेषित करता है अथवा उस संदेश के संबंध मे काई सेवा प्रदान करता है

(भ) असममित गूढ प्रणाली में कुंजी युग्म से प्राइवेट कुंजी और उसकी अंकगणितीय रूप से संबंधित लोक कुंजी अभिप्रेत है जो इस प्रकार संबंधित है कि लोक कुंजी उस अंकीय चिह्नक को सत्यापित कर सकती है जो प्राइवेट कुंजी द्वारा सृजित किया गया है

(म) 'विधि' के अंतर्गत संसद या राज्य विधान मंडल का कोई अधिनियम, तथास्थिति, राष्ट्रपति या राज्यपाल द्वारा प्रख्यापित अध्यादेश, अनुच्छेद 240 के अधीन राष्ट्रपति द्वारा बनाए गए विनिमय, संविधान के अनुच्छेद 357 के खंड (1) के उपखंड (क) के अधीन राष्ट्रपति के अधिनियमों के रूप में अधिनियमित विधेयक आते हैं ओर इनके अंतर्गत उनके अधीन बनाए गए नियम, विनियम, उपविधियां और जारी किए गए आदेश भी है

(य) 'अनुज्ञप्ति' ये धारा 24 के अधीन किसी प्रमाणकर्ता प्राधिकर्ता को अनुदत्त अनुज्ञप्ति अभिप्रेरित है।

(यक) प्रवर्तक के ऐसा व्यक्ति अभिप्रेत है जो किसी इलेक्ट्रानिक संदेश को भेजता है, उसका उत्पादन भंडारण करता है किसी अन्य को पारेषित करता है अथवा किसी इलेक्ट्रानिक संदेश को भिजवाता है, उसका उत्पादन, भंडारण करता है या किसी अन्य व्यक्ति को पारेषित करता है, किन्तु इसके अंतर्गत कोई मध्यवर्ती नहीं है।

(यख) 'विहित से इस अधिनियम के अधीन बनाए गए नियमों द्वारा विहित अभिप्रेत है

(यग) 'प्राइवेट, कुंजी' से कुंजी युग्म की वह कुंजी अभिप्रेत है जो अंकीय चिह्नक सृजित करने के लिए प्रयोग की जाती है

(यघ) 'लोक कुंजी' से कुंजी युग्म की वह कुंजी अभिप्रेत है जो अंकीय चिह्नक को सत्यापित करने के लिए प्रयोग की जाती है और अंकीय चिह्नक प्रमाणपत्र में सूचीबद्ध है

(यड) सुरक्षित प्रणाली से ऐसे कम्प्यूटर हार्डवेयर, सॉफ्टवेयर और प्रक्रियाएं अभिप्रेत है जो

(क) अप्राधिकृत प्रवेश और दुरूपयोग से युक्तियुक्त रूप से सुरक्षित है;

(ख) विश्वसनीयता और सही संचालन का युक्तियुक्त स्तर उपबंधित करती है;

(ग) आशयित कृत्य करने के लिए युक्तियुक्त रूप से उपयुक्त है;

(घ) साधारणत: स्वीकार्य सुरक्षा प्रक्रियाओं के अनुरूप है;

(यक) उपयोगकर्ता से ऐसा व्यक्ति अभिप्रेत है जिसके नाम से अंकीय चिह्नक जारी किया जाता है

(यक) सुरक्षा प्रक्रिया से धारा 16 के अधीन केन्द्रीय सरकार द्वारा विहित सुरक्षा प्रक्रिया अभिप्रेत है;

(यक) अंकीय चिह्नक इलेक्ट्रानिक अभिलेख या लोक कुंजी के संबंध में, "सत्यापि करना', से इसके व्याकरणिक रूप भेदों और सजातीय पदों सहित अभिप्रेत है यह अवधारणा करना क्या –

(क) प्रारंभिक इलेक्ट्रानिक अभिलेख पर उपयोगकर्ता की लोक कुंजी के तदनुरुपी प्राइवेट कुंजी का उपयोग करते हुए अंकीय चिह्नक लगाया गया है।

(ख) प्रारंभिक इलेक्ट्रानिक अभिलेख, ऐसे इलेक्ट्रानिक अभिलेख पर अंकीय चिह्नक इस प्रकार लगाए जाने के समय से ही अक्षुण्ण रखे गये हे या उसे उपांतरित किया गया है।

2. इस अधिनियम में किसी अधिनियीमीत या उसके उपबंध के प्रति किसी निदेश का, उस क्षेत्र के संबंध में जिसमें ऐसी अधिनियमिति या ऐसा उपबंध प्रवृत्त नहीं है, यह अर्थ लगाया जाएगा कि वह क्षेत्र में प्रवृता तत्स्थानी विधि से तत्स्थानी विधि से सुसंगत उपबंध, यदि कोई है, के प्रति निर्देश है

अध्याय 2

अकंयि चिह्नक 3

6 (1) इस धारा क उपबंधों के अधीन रहते हुए, कोई उपयोगकर्ता, किसी इलेक्ट्रानिक अभिलेख को अपने अंकीय चिह्नक लगाकर अधिप्रमाणित कर सकेगा।

(2) इलेक्ट्रानिक अभिलेख का अधिप्रमाणन असीमित गूढ प्रणाली और द्रुतान्वेषण फलन का उपयोग करके किया जाएगा जो प्रारंभिक इलेक्ट्रानिक अभिलेख को किसी अन्य इलेक्ट्रानिक अभिलेख में आवृत और रूपान्तर करता है।

सष्ट्ररकिरण – इस उपधारा के प्रयोजनों के लिए 'द्रुतान्वेषण फलन' से एल्गोरिथ्म मैंपिग या विटसकी एक श्रृंखला का दूसरी श्रृंखला में रूपांरण अभिप्रेत है, जो कि सामान्यत: ' द्रुतान्वेषण परिणाम के नाम से ज्ञात सेट से छोटी है और ऐसी हैं जिनमें कोई इलेक्ट्रानिक अभिलेख हर समय वही द्रुतान्वेषण परिणाम उत्पन्न करता है जब उसके निवेश के रूप में उसी इलेक्ट्रानिक अभिलेख के साथ एल्गोरिथ्म को निष्पादित किया जाता है तो वह अभिकलनीय रूप से निम्नलिखित के संबंध में असंभव हो जाता है –

(क) एल्गोरिथ्म द्वारा उत्पादित द्रुतान्वेषण परिणाम से मूल इलेक्ट्रानिक अभिलेख को व्युत्पन्न या पुन: संरचित करना;

(ख) दो इलेक्ट्रानिक आभिलेखों का एल्गोरिथ्म का उपयोग करके वैसा ही द्रुतान्वेषण परिणाम उत्पादित करना ।

(3) कोई भी व्यक्ति, उपयोगकर्ता की लोक कुंजी को उपयोग करके इलेक्ट्रानिक अभिलेख को सत्यापित कर सकता है।

(4) प्राइवेट कुंजी और लोक कुंजी का उपयोगकर्ता के लिए अद्वितीय है और वे फलनकारी कुंजी युग्म का निर्माण करती है।

अध्याय 3

इलेक्ट्रानिक नियमन

4 जहां कोई विधि यह उपबंध करती है कि सूचना या कोई अन्य विषय लिखित या टंकित या मुद्रित रूप में होगा, वहां ऐसी विधि मे अंतर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी,ऐसी अपेक्षा पूर्ण कर दी गई समझी जाएगी, यदि सूचना या विषय –

(क) किसी इलेक्ट्रानिक रूप में दिया जाता है या उपलब्ध कराया जाता है, और

(ख)इस प्रकार पहुंच योग्य है कि वह किसी पश्चात्वर्ती निर्देश के लिए उपयोग किए जाने योग्य है।

5 जहां किसी विधि में यह उपबंध किया गया हो कि सूचना या कोई अन्य विषय, उस पर हस्ताक्षर कर के अधिप्रमाणित किया जाए, या कोई दस्तावेज हस्ताक्षरित किया जाए अथवा उस पर व्यक्ति के हस्ताक्षर हों, वहां ऐसी विधि में अंतर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी, ऐसी अपेक्षा पूर्ण की दी गई समझी जाएगी, यदि ऐसी सूचना या विषय, ऐसी रीति से जो केन्द्रीय सरकार द्वारा विहित की जाए, अंकीय चिन्हक लगा कर अधिप्रमाणित किया गया हो।

स्पष्टीकरण – इस धारा के प्रयोजनों के लिए इसके व्याकरणिक रूप भेदों और सजातीय पदों के साथ हस्ताक्षरित से किसी व्यक्ति के संदर्भ में, अभिप्रेत है किसी दस्तावेज पर अपने हस्तलिखित करना या कोई चिह्न लगाना और "हस्ताक्षर पद' ' का तदनुसार अर्थ लगाया जाएगा।

6 (1) **जहां किसी विधि में –**

(क)समुचित सरकार के स्वामित्वाधीन या नियंत्रणाधीन किसी कार्यालय, प्राधिकरण,

(ख)निकाय या अभिकरण में कोई प्ररूप, आवेदन या कोई अन्य दस्तानेज़ किसी विशिष्ट रीति से फाइल करने का,

(ग) किसी अनुज्ञप्ति, अनुज्ञापत्र, मंजूरी या अनुमोदन, वह चाहे किसी भी नाम से ज्ञात हो किसी विशिष्ट रीति या मंजूर करने का किसी विशिष्ट रीति से धन की प्राप्ति या संदाय का, उपबंध है, वहां तत्समय प्रवृता किसी अन्य विधि में अंतविष्ट किसी बात के होते हुए भी, ऐसी अपेक्षा पूर्ण कर दी गई समझी जाएगी, यदि, यथास्थिति, ऐसा फाइल किया जाना, जारी किया जाना मंजूरी प्राप्ति या संदाय, ऐसे इलेक्ट्रानिक रूप से जो समुचित सरकार द्वारा विहित किया जाता है

2 उपधारा (1) के प्रयोजनों के लिए, समुचित सरकार, नियमों द्वारा निम्नलिखित विहित कर सकेगी

(क)वह रीति जिससे और वह रूपविधान जिसमें ऐसे इलेस्ट्रानिक अभिलेख फाइल सृजित या जारी किए जाएंगे

(ख)खंड क के अधीन किसी इलेक्ट्रानिक अभिलेख के फाइल, सृजित या जारी किए जाने के लिए किसी फीस या प्रभारों के संदाय की रीति या पद्धति।

7 (1) जहां किसी विधि में यह उपबंध है कि दस्तावेज, अभिलेख या सूचना किसी विनिर्दिष्ट अवधि के लिए प्रतिधारित की जाए, वहां ऐसी अपेक्षापूर्ण कर दी गई समझी जाएगी यदि ऐसे दस्तावेज, अभिलेख या सूचना इलेक्ट्रानिक रूप में प्रतिधारित की जाती है, यदि–

(क)उसमें अन्तर्विष्ट सूचना इस प्रकार पहुंच योग्य बनी रहती है कि पश्चावर्ती निर्देश के लिए उपयोग की जा सके

(ख)इलेक्ट्रानिक अभिलेख उसी रूपविधान में, जिसमें मूलत: उत्पादित, प्रेषित या प्राप्त किया गया था या उस रूपविधान में, जिसमें मूलत: उत्पादित, प्रेषित या प्राप्त की गई सूचना ठीक–ठीक निरूपण करने के लिए निदेर्शित का जा सकती है, प्रतिधारित किया जाता है,

(ग) वे ब्यौरा, जो ऐसे इलेक्ट्रानिक अभिलेख के उदभव, गंतव्य, पेषण या प्राप्ति की तारीख और समय के अभिज्ञान को सुकर बनाएंगे, इलेक्ट्रानिक अभिलेख में उपलब्ध है :

परन्तु यह खंड किसी ऐसी सूचना को लागू नहीं होता है जो किसी इलेक्ट्रानिक अभिलेख को केवल प्रेषित या प्राप्त करने में समर्थ बनाने के प्रयोजन के लिए स्वत: उत्पादित की जाती है।

(2) इस धारा की कोई बात किसी ऐसी विधि को लागू नहीं होगी जिसमें दस्तावेजों, अभिलेखों या सूचना का इलेक्ट्रानिक अभिलेखों के रूप में प्रतिधारण के लिए अभिव्यक्त रूप से उपबंध है।

8 जहां किसी विधि में यह उपबंध है कि कोई नियम, विनिमय, आदेश, उपविधि, अधिसूचना या कोई अन्य विषय, राजपत्र में प्रकाशित किया जाएगा वहां अपेक्षा पूर्ण कर दी गई समझी जाएगी यदि नियम, विनिमय, आदेश, उपविधि, अधिसूचना या कोई अन्य विषय राजपत्र इलेक्ट्रानिक राजपत्र में प्रकाशित किया जाता है

परन्तु जहां राजपत्र या इलेक्ट्रानिक राजपत्र में कोई नियम, विनिमय, आदेश उपविधि, अधिसूचना या कोई अन्य सामग्री को प्रकाशित किया जाता है वहां वही प्रकाशन की तारीख, उस राजपत्र की तारीख समझी जाएगी, जिसको वह प्रथमत: किसी रूप में प्रकाशित हुआ था।

9 धारा 6, धारा 7 और धारा 8 में अंतर्विष्ट कोई बात किसी व्यक्ति को इस बात पर जोर देने का अधिकार प्रदान नहीं करेगी कि केन्द्रीय सरकार या राज्य सरकार के किसी मंत्रालय या विभाग अथवा किसी विधि द्वारा या उसके अधीन स्थापित या केन्द्रीय या राज्य सरकार द्वारा नियंत्रित या वित्तपोषित किसी प्राधिकरण या निकाय को कोई दस्तावेज इलेक्ट्रानिक अभिलेखों के रूप में स्वीकार, जारी, सृजित, प्रतिधारित, संरक्षित करना चाहिए या इलेक्ट्रानिक रूप में कोई धनीय संयवहार करना चाहिए।

10 केन्द्रीय सरकार, इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए, नियमों द्वारा, निम्नलिखित विहित कर सकेगी,

(क) अंकीय चिह्नक का प्रकार;

(ख) वह रीति और रूपविधान जिसमें अंकीय चिह्नक लगाया जाएगा;

(ग) वह रीति और प्रक्रिया जो अंकीय चिह्नक लगाने वाले व्यक्ति की पहचान को सुकर बनाती है;

(घ) इलेक्ट्रानिक अभिलेखों या संदायों की यथोचित समवता सुरक्षा और गोपनीय सुनिश्चित करने के नियंत्रण पद्धति और प्रक्रियाएं; और

(ङ) कोई अन्य विषय, जो अंकीय चिह्नक को विधिक प्रभाव देने के लिए आवश्यक हो।

अध्याय 4

इलेक्ट्रानिक अभिलेखों का अधिक्तर, अभिस्वीकृति ओर प्रेषण

11 किसी इलेक्ट्रानिक अभिलेख का अधिकार प्रवर्तक को प्राप्त होगा,

(क) यदि वह स्वयं प्रवर्तक द्वारा;

(ख) किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा, जिसे उस इलेक्ट्रानिक अभिलेख की बाबत प्रवर्तक की और से कार्य करने का प्राधिकार थे; या

(ग) स्वत: प्रचालित किए जाने के लिए प्रवर्तक द्वारा या उसकी और से कार्यक्रीमत किसी सूचना प्रणाली द्वारा भेजा गया था।

12 जहां प्रवर्तक, प्रेषित से इस बात पर सहमत नहीं हुआ है कि इलेक्ट्रानिक अभिलेख की प्राप्ति की अभिस्वीकृति किसी विशिष्ट रूप में या किसी विशिष्ट पद्धति द्वारा दी जाए, वहां अभिस्वीकृति–

(क) प्रेषित द्वारा स्वाचालित या अन्यता किसी संसूचना द्वारा; या

(ख) प्रेषित के किसी आचरण द्वारा, जो प्रवर्तक को यह इंगित करने के लिए पर्याप्त है कि इलेक्ट्रानिक अभिलेख प्राप्त हो गया है, दी जा सकेगी।

(2) जहां प्रवर्तक ने यह नियत किया है कि इलेक्ट्रानिक अभिलेख, उसके द्वारा ऐसे इलेक्ट्रानिक अभिलेख की अभिस्वीकृति के प्राप्त होने पर ही आबद्धकर होगा, वहां जब तक अभिस्वीकृति इस प्रकार प्राप्त नहीं हो जाती है, ऐसा समझा जाएगा कि इलेक्ट्रानिक अभिलेख प्रवर्तक द्वाराकभी भेजा ही नहीं गया था।

(3) जहां प्रवर्तक ने यह नियत नहीं किया है इलेक्ट्रानिक अभिलेख, ऐसी अभिस्वीकृति प्राप्त हाने पर ही आबद्धकर होगा औरे प्रवर्तक द्वारा विनिर्दिष्ट या तय किए गए समय के भीतर या यदि काई समय विनिर्दिष्ट या तय नहीं किया गया है तो उचित समय के भीतर, अभिस्वीकृति प्राप्त नहीं की गई है वहां प्रवर्तक, प्रेषिती को यह कथन करते हुए कि उसके द्वारा अभिस्वीकृति प्राप्त नहीं की गई है और ऐसा उचित समय विनिर्दिष्ट करते हुए, जिस तक अभिस्वीकृति प्राप्त नहीं की गई है और ऐसा उचित समय विनिदिष्टे करते हुए, जिस तक अस्वीकृति प्राप्त नहीं की गई है ओर ऐसा उचित समय विनिर्दिष्ट करते हुए, जिस तक अभिस्वीकृति उसके द्वारा प्राप्त कर ली जानी चाहिए, नोटिस दे सकेगा और यदि पूर्वोक्त समय–सीमा के भीतर कोई अभिस्वीकृति प्राप्त नहीं होती है तो वह प्रेषिती को नोटिस देने के पश्चात् इलेक्ट्रानिक अभिलेख के बारे में इस प्रकार समझ सकेगा मानो, यह कभी भेजा ही न गया हो।

3 (1) प्रवर्तक और प्रेषित के बीच जैसा अन्यथा तय पाया गया है उसके सिवाय, किसी इलेक्ट्रानिक अभिलेख का प्रेषण उस समय होता है जब वह प्रवर्तक के नियंत्रण से बाहर किसी कम्प्यूटर साधन में डाला जाता है।

(2) प्रवर्तक और प्रेषित के बीच जैसा अन्यथा तय पाया गया है उसके सिवाय, किसी इलेक्ट्रानिक अभिलेख की प्राप्ति का समय निम्नलिखित रूप में अवधारित किया जाएगा, अर्थात

(क) यदि प्रेषित न इलेक्ट्रानिक अभिलेखों को प्राप्त करने के प्रयोजन के लिए कोई कम्प्यूटर साधन अभिहित कर लिया है

(i) तो प्राप्ति उस समय हो जाती है जब इलेक्ट्रानिक अभिलेख अभिहित कम्पयूटर साधन में डाला जाता है, या

(ii) यदि इलेक्ट्रानिक अभिलेख, प्रेषिती के ऐसे कम्प्यूटर साधन में भेजा जाता है तो अभिहित कम्यूटर साधन नहीं है तब प्राप्ति उस समय हो जाती है जब इलेक्ट्रानिक अभिलेख प्रेषित द्वारा पुन: प्राप्त कर लिया जाता है

(ख) यदि प्रेषिती ने विनिर्दिष्ट समयों के साथ–साथ, यदि कोई हो, कोई कम्प्यूटर साधन अभिहित नहीं किया है तो प्राप्ति तब होती है जब इलेक्ट्रानिक अभिलेख, अभिलेख, प्रेषिती के कम्प्यूटर साधन में डाला जाता है ।

(2) प्रवर्तक और प्रेषिती के बीच जैसा अन्यथा तय पाया गया है उसके सिवाय, कोई इलेक्ट्रानिक अभिलेख उस स्थान पर प्रेषिते कर दिया गया समझा जाता है जहां प्रवर्तक का अपना कारबार का स्थान है और उस स्थान पर प्राप्त हो गया हो समझा जाता है जहां प्रेषिती का अपना कारबार का स्थान है।

(3) उपधारा (2) के उपबंध इस बात के होते हुए भी लाग होंगे कि वह स्थान जहां कम्प्यूटर साधन अवस्थित है, उस स्थान से भिन्न हो सकता है जहां इलेक्ट्रानिक अभिलेख उपधारा (3) के अधीन प्राप्त कर लिया गया समझा जाता है

(4) इस धारा के प्रयोजनों के लिए –

(क) यदि प्रवर्तक या प्रेषिती के एक से अधिक कारबार के स्थान है तो कारबार का प्रायिक स्थान कारबार का स्थान होगा;

(ख) यदि प्रवर्तक या प्रेषिती के पास कारबार का स्थान नहीं है तो उसके निवास का प्रायिक स्थान कारबार का स्थान समझा जाएगा;

(ग) किसी नियमित निकाय के संबंध में निवास का प्रायिक स्थान से वह रजिस्ट्रीकृत हैं।

अध्याय 5

सुरक्षित इलेक्ट्रानिक अभिलेख और सुरक्षित चिह्न

14 जहां किसी इलेक्ट्रानिक अभिलेख को, समय के किसी विनिर्दिष्ट क्षण पर सुरक्षा प्रक्रिया लाग कि गई है वहां ऐसा अभिलेख, समय के ऐसे क्षण से सत्यापन के समय तक सुरक्षित इलेक्ट्रानिक अभिलेख समझा जाएगा।

15 यदि, संबद्ध पक्षकारों द्वारा तय पाई गई किसी सुरक्षा प्रक्रिया के उपयोजन द्वारा यह सत्यापित किया जा सकता है कि कोई अंकीय चिह्न, जिस समय वह लगाया गया था,

(क) उसे लगाने वाले उपयोगकर्ता के लिए अद्वितीय था;

(ख) ऐसे उपयोगकर्ता की पहचान करने में समर्थ था;

(ग) उपयोगकर्ता के अनन्य नियंत्रण के अधीन किसी रीति से या किसी साधन प्रयोग करके सृजित किया गया था और उस इलेक्ट्रानिक अभिलेख से संबंधित है जिससे वह ऐसी रीति से संबंद्ध है कि यदि इलेक्ट्रानिक अभिलेख बदला जाए तो अंकीय चिह्नक अविधिमान्य हो,

तब ऐसा अंकीय चिह्नक एक सुरक्षित अंकीय चिह्नक समझा जाएगा।

16 केन्द्रीय सरकार, इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए, उन वाणिज्यिक परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, सुरक्षा प्रक्रिया विहित करेगी, जो उस समय विद्यमान थी, जब प्रक्रिया का उपयोग किया गया था, जिसके अंतर्गत निम्नलिखित भी हैं –

(क) संव्यवहार की प्रकृति;

(ख) पक्षकारों की प्रौद्योगिकी क्षमता के प्रतिनिर्दश से उनकी सुविज्ञता का स्तर;

(ग) अन्य पक्षकारों द्वारा किए गए वैसे ही संव्यवहारों का परिणात;

(घ) प्रस्थापित किन्तु किसी पक्ष द्वारा अस्वीकृत विकल्पों की उपलभ्यता;

(ङ) (ड) वैकल्पित प्रक्रियाओं की लागत; और

(च) उसी प्रकार के संव्यवहारों या संसूचनाओं के लिए साधारणतया प्रयोग में आने वाली प्रक्रियाएं।

अध्याय 16

प्रमाणकर्ता प्राधिकारियों का विनिमयन

17 (1) केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए प्रमाणकर्ता प्राधिकारियों का एक नियंत्रण नियुक्त कर सकेंगी और उसी या पश्चातवर्ती अधिसूचना द्वारा उपनियंत्रक और सहायक नियंत्रण भी उतनी संख्या में नियुक्त कर सकेगी जितनी वह ठीक समझे।

(2) नियंत्रक, इस अधिनियम के अधीन अपने कृत्यों का केन्द्रीय सरकार के साधारण नियंत्रण। और निदेशों के अधीन रहते हुए निर्वहन करेगा।

(3) उप नियंत्रक और सहायक नियंत्रक, नियंत्रक द्वारा उन्हें समनुदेशित कृत्यों का निर्वहन के साधारण अधीक्षण और नियंत्रक के अधीन करेंगे।

(4) नियंत्रक, उपनियंत्रकों और सहायक नियंत्रकों की अर्हताएं, अनुभव और सेवा के निबंधन तथा शर्त वे होगी जो केन्द्रीय सरकार द्वारा विहित की जाएं।

(5) नियंत्रक कार्यालय का प्रधान कार्यालय और शाखा कार्यालय ऐसे स्थान पर होंगे, जो केन्द्रीय सरकार विनिर्दिष्ट करे और इनकी स्थापना ऐसे स्थानों पर हो सकेगी, जो केन्द्रीय सरकार ठीक समझे।

(6) नियंत्रक कार्यालय की एक मोहर होगी।

18 नियंत्रक, निम्नलिखित सभी या किन्ही कृत्यों का निष्पादन कर सकेगा, अर्थात –

(क) प्रमाणकर्ता प्राधिकारियों के क्रियाकलापों का पर्यवेक्षण करना;

(ख) प्रमाणकर्ता प्राधिकारियों की लोक कुंजियों को प्रमाणित करना;

(ग) प्रमाणकर्ता प्राधिकारियों द्वारा बनाए रखे जाने वाले मानक अधिकाथित करना;

(घ) ऐसी अर्हताएं और अनुभव विनिर्दिष्ट करना जो प्रमाणकर्ता प्राधिकारी के कर्मचारियों के पास होनी चाहिए

(ङ) ऐसी शर्ते विनिर्दिष्ट करना जिनके अधीन प्रमाणकर्ता प्राधिकारी। अपना कार्य करेगा,

(च) लिखित, मुद्रित या दृश्य सामग्री और विज्ञापनों की अनार्वस्तु विनिर्दिष्ट करना, जिसके अंकीय चिह्नक प्रमाणपत्र और लोक कुंजी का बाबत वितरण या उपयोग किया जा सकें;

(छ) किसी अंकीय चिह्नक प्रमाणपत्र और कुंजी का रूप और अन्तर्वस्तु विनिर्दिष्ट करना;

(ज) वह प्ररूप और रीति विनिर्दिष्ट करना, जिसमें प्रमाणकर्ता प्राधिकारियों द्वारा लेख रखे जाएंगे;

(झ) उन निबंधनों और शर्तो को विनिर्दिष्ट करना, जिनके अधीन लेखा–परीक्षकों की नियुक्ति की जा सकेगी और उनको पारिश्रमिक किया जा सकेगा।

(ल) प्रमाणकर्ता प्राधिकारी द्वारा अकेले या अन्य प्रमाणकर्ता प्राधिकारियां के साथ संयुक्त रूप से इलेक्ट्रानिक प्रणाली के स्थापन और ऐसी प्रणाली के विनिमयन को सुकर बनाना,

(ट) वह रीति विनिर्दिष्ट करना, जिसमें प्रमाणकर्ता प्राधिकारी उपयोगकर्ताओं के साथ व्यवहार करेंगे,

(ठ) प्रमाणकर्ता प्राधिकारियों और उनके उपयोगकर्ताओं के बीच हितों के किसी टकराव का समाधान करना,

(ड) प्रमाणकर्ता प्राधिकारियों के कर्तव्यों को अधिकथित करना,

(ढ) ऐसा डाटा संचय रखना, जिसमें प्रत्येक प्रमाणकर्ता प्राधिकारी का प्रकटन अभिलेख हो, जिसमें ऐसी विशिष्टयां अंतर्विष्ट हों, जो विनियमों द्वारा विनिर्दिष्ट की जाएं और जो जनता की पहुंच में हो।

19 (1) नियंत्रक, ऐसी शर्तो और निबंधनों के अधीन रहते हुए, जो विनियमों द्वारा विनिर्दिष्ट किए जाए केन्द्रीय सरकार के पूर्वानुमोदन से और राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, किसी विदेश प्रमाणकर्ता प्राधिकारी को इस अधिनियम के प्रयोजन के लिए प्रमाणकर्ता प्राधिकारी के रूप में मान्यता दे सकेगा।

(2) जहां किसी प्रमाणकर्ता प्राधिकारी का उपधारा (1)के अधीन मान्यता दी जाती है, वहां ऐसे प्रमाणकर्ता प्राधिकारी द्वारा जारी किया गया अंकीय चिह्नक प्रमाणकर्ता इस अधिनियम के प्रयोजन के लिए प्रमाण पत्र इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए विधिमान्य होगा।

(3) यदि नियंत्रक का यह समाधान हो जाता हे कि किसी प्रमाणकर्ता प्राधिकारी ने ऐसी शर्तो निर्बन्धनों में से किसी का, जिनके अध्यधीन उसे उपधारा 1 के अधीन मान्यता प्रदान की गई थी, उल्लंघन किया है तो वह उन कारणों से, जो लेखबद्ध किए जाएंगे, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, ऐसी मान्यता को प्रतिसंहत कर सकेगा।

20 (1) नियंत्रक इस अधिनियम के अधीन जारी किए गए सभी अंकीय चिह्नक प्रमाणपत्रों का निधान होगा।

(2) नियंत्रक, यह सुनिश्चित करने के लिए कि अंकीय चिह्नक की गोपनीयता और सुरक्षा आश्वस्त है–

(क) हार्डवेयर, साफ्टवेयर और उन प्रक्रियाओं का उपयोग करेगा जो अतिक्रमण और दुरूपयोग से सुरक्षित हो,

(ख) ऐसे अन्य मानकों का पालन करेगा, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा विहित किए जाएं

(3) नियंत्रक, सभी लोक कुंजियों का एक कम्प्यूटरीकृत डाटा संचय ऐसी रीति में रखेगा जिसमें ऐसा डाटा संचय और लोक कुंजियों का एक कम्प्यूटरीकृत डाटा संचय ऐसी रीति में रखेगा जिसमें ऐसा डाटा संचय और लोक कुंजियां जनता के किसी भी सदस्य के लिए उपलब्ध होगी।

21 (1) उपधारा (2) के उपबंधों के अधीन रहते हुए, कोई व्यकित, अंकीय चिह्नक प्रमाणपत्र जारी करने की अनुज्ञप्ति के लिए नियंत्रक को आवेदन कर सकेगा।

(2) उपधारा (1) के अधीन कोई अनुज्ञप्ति तब तक जारी नहीं की जाएगी जब तक कि आवेदक, अर्हता, विशेषता, जनशक्ति, वित्तीय संसाधन और अन्य अवसंरचात्मक सुविधाओं की बाबत ऐसी अपेक्षाएं पूरी न करता हो, जो ऐसे अंकीय चिह्नक प्रमाणपत्रों को जारी करने के लिए आवश्यक हो, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा विहित की जाएं।

(3) इस धारा के अधीन अनुदत्त कोई अनुज्ञप्ति –

(क) प्रमाणन पद्धति विवरण;

(ख) आवेदन की पहचान करने की बावत विवरण, जिसमें प्रक्रियाएं भी सम्मिलित है; ऐसे निबंधनों और शर्तो के अधीन होगी, जो विनियमों द्वारा विनिर्दिष्ट की जाएं।

22 (1) अनुज्ञप्ति जारी करने के लिए प्रत्येक आवेदक ऐसे प्ररूप में होगा जो केन्द्रीय सरकार द्वारा विहित, किया जाए।

(2) अनुज्ञप्ति जारी करने के लिए प्रत्येक आवेदक के साथ निम्नलिखित संलग्न होंगे –

(क) प्रमाणन पद्धति विवरण;

(ख) आवेदक की पहचान करने की बाबत विवरण, जिसमें प्रक्रियाएं भी सम्मिलित है;

(ग) पच्चीस हजार रूपये से अनधिक की ऐसी फीस का संदाय, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा विहित की जाएं

(घ) ऐसे अन्य दस्तावेज, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा विहित किए जाएं।

23 किसी अनुज्ञप्ति के नवीनकरण के लिए आवेदक –

(क) ऐसे प्ररूप में;

(ख) ऐसी फीस सहित होगा, जो पांच हजार रूपये से अधिक नहीं होगी; जो केन्द्रीय सरकार द्वारा विहित की जाए और अनुज्ञप्ति की विधिमान्यता की अवधि क अवसान में पैंतालिस दिन से अन्यून अवधि से पूर्व किया जाएगा।

24 नियंत्रक, धारा 21 की उपधारा 1 के अधीन आवेदक की प्राप्ति पर आवेदक के साथ संलग्र दस्तावेज और ऐसी अन्य बातों पर, जिन्हें वह ठीक समझे, विचार करने के पश्चात अनुज्ञप्ति अनुदत्त कर सकेगा या आवेदक को नाममंजूर कर सकेगा, परन्तु इस धारा के अधीन कोई भी आवेदन तब तक नाममंजूर नहीं किया जाएगा जब तक कि आवेदक को अपना पक्ष कथन प्रस्तुत करने का युक्तियुक्त अवसर ने दे दिया गया हो।

25 (1) नियंत्रक, यदि उनका ऐसी जांच करने के पश्चात, जिसे वह ठीके समझे, यह समाधान हो जाता है कि प्रमाणकर्ता प्राधिकारी, –

(क) ने अनुज्ञप्ति जारी करने या उसके नवीनकरण के लिए आवेदन में या ऐसा संबंध में ऐसा कोई कथन किया है जो तात्विक विशिष्टियसें के बारे में गलत है या मिथ्या है;

(ख) उन निबंधनों और शर्तो का, जिनके अध्यधीन अनुज्ञप्ति अनुदत्त की गई थी, पालन करने मे असफल रहा है

(ग) धारा 20 की उपधारा (2) के खंड (ख) के अधीन विनिर्दिष्ट मानकों को बनाए रखने में असफल रहा है;

(घ) ने इस अधिनियम, उसके अधीन बनाए गए नियमों या। विनिमयों या किए गए तो अनुज्ञप्ति को प्रतिसंहक कर सकेगा,

परन्तु कोई भी अनुज्ञप्ति तब तक प्रीतसंहत नहीं की जाएगी जब तक कि प्रमाणकर्ता प्राधिकारी को प्रस्तावित प्रतिसहरण के कारण दर्शित करने का युक्तियुक्त अवसर न दे दिया गया हो।

(2) नियंत्रक, यदि उसके पास यह विश्वास करने का युक्तियुक्त हेतु है कि उपधारा 1 के अधीन अनुज्ञप्ति को प्रीतसंहत करने के लिए कोई आधार है, आदेश द्वारा, उसके द्वारा आदेशित किसी जांच के पूरा होने तक ऐसी अनुज्ञप्ति को निलंबित कर सकेगा-

परन्तु कोई भी अनुज्ञप्ति दस दिन से अनधिक की अवधि के लिए तब तक निलंबित नहीं की जाएगी जब तक कि प्रमाणकर्ता प्राधिकारी को, प्रस्तावित निलम्बन के विरूद्ध कारण बताने का उचित अवसर न दे दिया गया हो।

(3) ऐसा कोई प्रमाणकर्ता प्राधिकारी, जिनकी अनुज्ञप्ति निलंबित कर दी गई है, पैसे निलंबन के दौरान कोई अंकीय चिह्नक प्रमाणपत्र जारी नहीं करेगा।

26 (1) जहां कोई प्रमाणकर्ता प्राधिकारी की कोई अनुज्ञप्ति निलंबित या प्रीतसंहत कर दी गई है
वहां नियंत्रक यथास्थिति ऐसे निलंबन या प्रीतसंहरण की एक सूचना, उसके द्वारा रखे जाने वाले डाटा–संचय में प्रकाशित करेगा।

(2) जहां एक या अधिक निधान विनिर्दिष्ट किए गए हैं वहां नियंत्रक, यथास्थिति ऐसे निलंबन या प्रीतसंहरण की सूचना, ऐसे सभी निधानों में प्रकाशित करेगा,

परन्तु, यथास्थिति, ऐसे निलंबन या प्रतिसंहरण की सूचना से युक्त डाटा संचय ऐसी बेवसाइट के माध्यम से उपलब्ध कराया जाएगा, जो दिन–रात पहुंच में होगी,

परन्तु, यह ओर कि यदि नियंत्रक, आवश्यक समझे तो वह, ऐसे इलेक्ट्रानिक या अन्य मीडिया में, जिसे वह उपयुक्त समझें, डाटा–संचय की अन्तर्वस्तु को प्रचारित कर सकेगा।

27 नियंत्रक, इस अध्याय के अधीन नियंत्रक की किन्हीं शाक्तियों का प्रयोग करने के लिए उप नियंत्रक, सहायक नियंत्रक या किसी अधिकारी को लिखित रूप में प्राधिकृत कर सकेगा।

28 (1) नियंत्रक या उसके द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत कोई अधिकारी, इस अधिनियम,
तद्वीन बनाए गए नियमों या विनियमों के उपबंधों के किसी भी उल्लंघन का अन्वेषण करेगा।

(2) नियंत्रक या उसके द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत कोई अधिकारी,वैसा ही शक्तियों का प्रयोग करेगा जो आय–कर अधिनियम, 1981 के अध्याय 13 के अधीन आय–कर प्राधिकारियों को प्रदत्त है और ऐसी शक्तियों को प्रयोग उस अधिनियम के अधीन अधिकथित सीमाओं के अधीन रहते हुए करेगा।

29 (1)धारा 69 की उपधारा (1) के उपबंधो पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, नियंत्रक या उसके
प्राधिकृत किसी व्यक्ति के पास, यदि यह संदेह करने का उचित कारण है कि इस अधिनियम, उसके अधिन बनाए गए नियमों या विनियमों के उपबंधों का उल्लंघन किया गया है, तो उसे किसी कम्पयूटर प्रणाली, किसी साधित्र, डाटा या ऐसी प्रणाली से संबंधित किसी अन्य सामग्री तक, ऐसी कम्प्यूटर प्रणाली में उपलब्ध या अन्तर्विष्ट कोई सूचना या डाटा अभिप्राप्त करने, के लिए उसमें तलाशी करने या करवारने के प्रयोजन के लिए पहुंच होगी।

(2) उपधारा 1 के प्रयोजनों के लिए नियंत्रक या उसके द्वारा प्राधिकृत कोई व्यक्ति, ऐसे किसी व्यक्ति को, जिसके भार साधन में कम्प्यूटर प्रणाली, डाटा साधित्र या सामग्री है या वह उसके प्रचालन से अन्यथा संबंधित है, ऐसी युक्तियुक्त तकनीकी और अन्य सहायता, जिसे वह आवश्यक समझे, प्रदान करने के लिए, आदेश द्वारा निदेश दे सकेगा।

30 प्रत्येक प्रमाणकर्ता प्राधिकारी, –

(क) हार्डवेयर. साफ्टवेयर और ऐसी प्रक्रियाओं का उपयोग करेगा, जो अतिक्रमण और दुरूपयोग से सुरक्षित है

(ख)अपनी सेवाओ में विश्वसनीयता का युक्तियुक्त स्तर उपलब्ध कराएगा, जो आशयित कृत्यों के निर्वहन के लिए युक्तियुक्त रूप से उपयुक्त है,

(ग) वह सुनिश्चित करने के लिए सुरक्षा प्रक्रियाओं का पालन करेगा, जिसके कि अंकीय चिन्हको की गोपनीयता और एकान्तता सुनिश्चित हो सके, और

(घ) ऐसे अन्य मानकों का पालन करेगा, जो विनिमयों द्वारा विनिर्दिष्ट किए जाएं।

31 प्रत्येक प्रमाणकर्ता, प्राधिकारी, यह सुनिश्चित करेगा कि उसके द्वारा नियोजित या अन्यथा नियुक्त प्रत्येक व्यक्ति, अपने नियोजन या नियुक्त के दौरान अधिनियम या उसके अधीन बनाए गए नियमों, विनिमयों और किए गए आदेशों के उपबंधों का पालन करता है।

32 प्रत्येक प्रमाणकर्ता प्राधिकारी, अपनी अनुज्ञप्ति को उस परिसर में उस सहदृश्य स्थान पर, जिसमें वह अपना कारबार करता है, संप्रदर्शित करेगा।

33 (1) ऐसा प्रत्येक प्रमाणकर्ता प्राधिकारी, जिसकी अनुज्ञप्ति निलंबित या प्रतिसंहत कर दी गई है, ऐसे निलंबन या पतिसंहरण के ठीक पश्चात् नियंत्रण को अनुज्ञप्ति अभ्यर्पित करेगा।

(2) जहां कोई प्रमाणकर्ता प्राधिकारी उपधारा 1 के अधीन किसी अनुज्ञप्ति का अभ्यर्पण करने में असफल रहेगा वहां वह व्यक्ति, जिसके पक्ष में अनुज्ञप्ति जारी की गई है, अपराध का दोषी होगा और कारावास से, जो छह मास तक हो सकेगा या जुर्माने से, जो दस हजार रूपये तक को सकेगा या दोनों से दंडित किया जाएगा।

34 (1) प्रत्येक प्रमाणकर्ता प्राधिकारी. विनिमयों द्वारा विनिर्दिष्ट रीति से, –

(क) अपने अंकीय चिह्न प्रमाणपत्र को प्रकट करेगा, जिसमें उस प्रमाणकर्ता प्राधिकारी द्वारा किसी अन्य अंकीय चिह्न प्रमाणपत्र को अंकनीय रूप से चिह्न लगाने के लिए उपयोग की गई प्राइवेट कुंजी क अनुरूप लोक कुंजी अंतर्निष्ठ हो,

(ख)उससे सुसंगत कोई प्रमाणन पद्धति विवरण प्रकट करेगा,

(ग) उसके प्रमाण कर्ता प्रमाणपत्र, यदि कोई हो, के प्रतिसहरण या निलंबन की सूचना प्रकट करेगा, और

(घ) ऐसा कोई अन्य तथ्य प्रकट करेगा, जो किसी अंकीय चिह्नक प्रमाणपत्र की, जिसे उस प्रधिकारी ने जारी किया है, विश्वसनीयता को या उस प्राधिकारी का अपनी सेवाओं को निष्पादित करने की योग्यतसा को, तात्विक और प्रतिकूल रूप से प्रभावित करता है

(2) जहां प्रमाणकर्ता प्राधिकारी की राय में कोई घटना घटित हुई है या ऐसी कोई परिस्थिति उत्पन्न हुई है जिससे उसकी कम्पयूटर प्रणाली की अखंडता या ऐसी शर्तो पर, जिनके अध्यधीन उसका अंकीय चिह्क प्रमाणपत्र अनुदता किया गया था, प्रतिकूल प्रभाव पडता है, तब प्रमाणकर्ता प्राधिकारी –

(क)ऐसे प्रत्येक व्यक्ति को, जिसके उससे प्रभावित होने की संभावना है, अधिसूचित करने के लिए युक्तियुक्त प्रयास करेगा; या

(ख)ऐसी घटना या अवस्थिति से निपटने के लिए प्रमाणन पद्धति विवरण में विनिर्दिष्ट प्रक्रिया के अनुसार कार्य करेगा।

अध्याय 7

अंकीय चिहक प्रमाणपत्र

35 (1)कोई भी व्यक्ति, अंकीय चिह्नक प्रमाणपत्र जारी करने के लिए प्रमाणकर्ता प्राधिकारी को ऐसे प्रारूप में आवेदन कर सकेगा, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा विहित किया जाए।

(2) ऐसे प्रत्येक आवेदन के साथ प्रमाणकर्ता प्राधिकारी को संदेय की जाने वाली पच्चीस हजार रूपये से अनधिक उतनी, फीस संलग्र होगी, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा विहित की जाए,

(3) परन्तु उपधारा 2 के अधीन फीस विहित करते समय, आवेदकों के विभिन्न वर्गों के लिए विभिन्न फीसें विहित की जा सकेगी।

(4) ऐसे प्रत्येक आवेदक के साथ प्रमाणन पद्धति विवरण संलग्र होगा या जहां ऐसा विवरण नहीं है वहां ऐसी विशिष्टियों वाला विवरण संलग्र होगा जो विनियमों द्वारा निर्दिष्ट किया जाए।

(5) उपधारा 4 के अधीन आवेदक प्राप्त होने पर, प्रमाणकर्ता प्राधिकारी उपधारा (3) के अधीन प्रमाणन पद्धति विवरण या अन्य विदरण पर विचार करने और ऐसी जांच करने के पश्चात जो ठीक समझें, अंकीय चिह्क प्रमाणपत्र मंजूर कर सकेगा या आवेदन को, उन कारणों से लेखबद्ध किए जाएंगे, नामंजूर कर सकेगा।

परन्तु अंकीय चिह्क प्रमाणपत्र तक मंजूर नहीं किया जाएगा जब तक कि प्रमाणकर्ता प्राधिकारी का यह समाधान नहीं हो जाता है कि –

(क) आवेदक के पास अंकीय चिह्क प्रमाणपत्र में सूचीबद्ध की जाने वाली लोक कुंजी के अनुरूप प्राइवेट कुंजी है;

(ख) आवेदक के पास ऐसी प्राइवेट कुंजी है जो अंकीय चिह्क सृजित करने में समक्ष है;

(ग) प्रमाण पत्र में सूचीबद्ध की जाने वाली लोक कुंजी का, आवेदक द्वारा धारित प्राइवेट

(घ) कुंजी द्वारा लगाए गए अंकीय चिह्क का सत्यापन करने में उपयोग किया जा सकता परन्तु यह और कि कोई आवेदक तब तक नामंजूर नहीं किया जाएगा जब तक कि आवेदक को प्रस्तावित नामंजूर के विरूद्ध कारण दर्शित करने के लिए उचित अवसर न दे दिया गया हो।

36 अंकीय चिह्क प्रमाण पत्र जारी करते समय प्रमाणकर्ता प्राधिकारी यह प्रमाणित करेगा कि–

(क) उसने इस अधिनियम, उसके अधीन बनाए गए नियमों और विनियमों का अनुपालन किया है,

(ख) उसने अंकीय चिह्क प्रमाणपत्र प्रकाशित किया है या उसे उस पर विश्वास करने वाले व्यक्ति को अन्यथा उपलब्ध कराया है और उपयोगकर्ता ने उसे स्वीकार किया है,

(ग) उपयोगकर्ता के पास अंकीय चिह्क प्रमाणपत्र में सूचीबद्ध लोक कुंजी के अनुरूप प्राइवेट कुंजी है

(घ) उपयोगकर्ता की लोक कुंजी और प्राइवेट कुंजी मिलकर एक कार्यकारी कुंजी युग्म बनाती है;

(ङ) अंकीय चिह्क प्रमाण पत्र में अंतर्विष्ट सूचना सही है; और

(च) उसके पास किसी ऐसे सारवान तथ्य की जानकारी नहीं है जिसे यदि अंकीय

(छ) चिह्क प्रमाण पत्र में सम्मिलित किया गया तो उसका खंड (क) से खंड (घ) में किए गए व्यपदेशनों की विश्वसनीयता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

37 (1) ऐसा प्रमाणकर्ता प्राधिकारी, जिसने अंकीय चिह्क प्रमाणपत्र जारी किया है, उपधारा

(2) के उपबंधों के अधीन रहते हुए –

(क) (i) अंकीय चिह्क प्रमाणपत्र में सूचीबद्ध उपयोगकर्ता से; या

(ii) उस उपयोगकर्ता की और से कार्य करने के लिए सम्यक् रूप से प्राधिकृत किसी व्यक्ति से, उस आशय के अनुरोध की प्राप्ति पर;

(ख) यदि उसकी यह राय है कि अंकीय चिह्क प्रमाणपत्र लोकहित में निलंबित किया जाना चाहिए,

(2) अंकीय, चिह्क प्रमाणपत्र पन्द्रह दिन से अधिक के लिए तब तक निलंबित नहीं किया जाएगा जब तक कि उपयोगकर्ता को उस विषय पर सुने जाने का अवसर न दे दिया गया हो।

(3) इस धारा के अधीन अंकीय चिह्क प्रमाणपत्र के निलंबन पर प्रमाणकर्ता प्राधिकारी उपयोगकर्ता को उसकी संसूचना देगा।

38 (1) प्रमाणकर्ता प्राधिकारी, अपने द्वारा जारी किया गया अंकीय चिह्क प्रमाणपत्र उस दशा में प्रतिसंहृत कर सकेगा –

(क) जहां उपयोगकर्ता या उसके द्वारा प्राधिकृत कोई अन्य उस आशय का अनुरोध करें; या

(ख) उपयोगकर्ता की मृत्यु को जाती है; या

(ग) फर्म का विघटन या कंपनी का परिसमापन हो जाता है, यदि उपयोगकर्ता फर्म या कंपनी है।

(2) उपधारा (3) के उपबंधों के अधीन रहते हुए और उपधारा (1) के उपबंधों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, प्रमाणकर्ता प्राधिकारी, अपने द्वारा जारी किए गए अंकीय चिह्क प्रमाणपत्र को किसी भी समय प्रीतसंहृत कर सकेगा, यदि उसकी यह राय है कि –

(क) अंकीय चिह्क प्रमाणपत्र में दिया गया कोई सारवान तथ्य मिथ्या है, या उसे छिपा दिया गया है;

(ख) अंकीय चिह्क प्रमाणपत्र के जारी किए जाने से संबंधित अपेक्षाएं ही. नहीं की गई है;

(ग) प्रमाणकर्ता प्राधिकारी की प्राइवेट कुंजी या सुरक्षा प्रणाली ऐसी रीति से गोपनीय नहीं रह गई है जिससे अंकीय चिह्क प्रमाणपत्र की विश्वसनीयता तात्विक रूप से प्रभावितहोती है;

(घ) उपयोगकर्ता को दिवालिया या मृत घोषित किया गया है जहां उपयोगकर्ता फर्म या कंपनी है वहां उसका विघटन या परिसमापन हो गया है या वह अन्यथा अस्तित्व में नहीं रह गई है।

(3) कोई अंकीय चिह्नक प्रमाणपत्र तब तक नियुक्त नहीं किया जाएगा जब तक कि उपयोगकर्ता को मामले में सुनवाई का अवसर न दे दिया गया हो।

(4) इस धारा के अधीन अंकीय चिह्क प्रमाणपत्र का प्रतिसंहरण होने पर प्रमाणकर्ता प्राधिकारी, उसकी संसूचना उपयोगकर्ता को देगा।

39 (1) जहां कोई अंकीय चिह्क प्रमाणपत्र, धारा 37 या धारा 38 के अधीन निलंबित या प्रतिसंहृत किया जाता है वहां प्रमाणकर्ता प्राधिकारी, तथास्थिति, ऐसे निलंबन या प्रतिसंहरण की सूचना, ऐसी सूचना के प्रकाशन के लिए अंकीय चिह्क प्रमाणपत्र में विनिर्दिष्ट निधान में, प्रकाशित करेगा।

(2) जहां एक से अधिक निधान निर्दिष्ट किए गए हैं वहां प्रमाणकर्ता प्राधिकारी, ऐसे सभी निधानों में, तथास्थिति, ऐसे निलंबन या प्रीतसंहरण की सूचनाएं प्रकाशित करेगा।

अध्याय – 8

उपयोगकर्ताओं के कर्तव्य

40 जहां कोई अंकीय चिह्क प्रमाणपत्र, जिसकी लोक कुंजी उस उपयोगकर्ता की प्राइवेट कुंजी के अनुरूप है जो अंकीय चिह्क प्रमाण पत्र में सूचीबद्ध की जानी है, उपयोगकर्ता द्वारा स्वीकार कर लिया गया है तब ऐसा उपयोगकर्ता सुरक्षा प्रक्रिया अपनाकर कुंजी–युग्म तैयार करेगा।

41 (1) किसी उपयोगकर्ता के बारे में यह समझा जाएगा कि उसके अंकीय चिह्क प्रमाणपत्र स्वीकार कर लिया है, यदि वह अंकीय चिह्क प्रमाण पत्र को –

(क) एक या अधिक व्यक्तियों को;

(ख) किसी निधान में, प्रकाशित करता है या उसका प्रकाश प्राधिकृत करता है, या अंकीय चिह्नक प्रमाणपत्र के लिए अपना अनुमोदन किसी रीति में अन्यथा प्रदर्शित करता है।

(1) अंकीय चिह्नक प्रमाणपत्र को स्वीकार करके उपयोगकर्ता उन सभी को, जो अंकीय चिह्नक प्रमाणपत्र में अंतर्विष्ट सूचना पर युक्तियुक्त रूप से विश्वास करते हैं, प्रमाणित करता है कि –

(क) उपयोगकर्ता के पास अंकीय चिह्नक प्रमाणपत्र में सूचीबद्ध लोक कुंजी के अनुरूप प्राइवेट कुंजी है और वह उसे रखने का हकदार है;

(ख) प्रमाणकर्ता प्राधिकारी को उपयोगकर्ता द्वारा किए गए सभी व्यपदेशन और अंकीय चिह्नक प्रमाणपत्र में अंतर्विष्ट सूचना से सुसंगत सभी तात्विक तथ्य सही हैं;

(ग) अंकीय चिह्नक प्रमाणपत्र में की ऐसी सभी सूचनाएं, जो उपयोगकर्ता की जानकारी में है, सही है।

42 (1) प्रत्येक उपयोगकर्ता, अपने अंकीय चिह्नक प्रमाणपत्र में सूचीबद्ध लोक कुंजी के अनुरूप प्राइवेट कुंजी का नियंत्रण रखने में युक्तियुक्त सावधानी बरतेगा और ऐसे व्यक्ति को, जो उपयोगर्ता के अंकीय चिह्नक लगाने के लिए प्राधिकृत नहीं है, उसे प्रकट न होने देने के लिए सभी उपाय करेगा।

(2) यदि अंकीय चिह्नक प्रमाणपत्र में सूचीबद्ध लोक कुंजी के अनुरूप प्राइवेट कुंजी गोपनीय नहीं रह गई है, तो उपयोगकर्ता, इसकी संसूचना प्रमाणकर्ता प्राधिकारी को ऐसी रीति में अविलम्बन देगा, जो विनियमों द्वारा विनिर्दिष्ट की जाए।

स्पष्टीकरण – शंकाओं को दूर करने के लिए यह घोषित किया जाता है कि उपयोगकर्ता तब तक दायी होगा जब तक कि उसने प्रमाणकर्ता प्राधिकारी को सूचित न कर दिया हो कि प्राइवेट कुंजी गोपनीय नहीं रह गई है।

अध्याय – 9

शास्तियां और अधिनिर्णय

43 यदि कोई व्यक्ति, ऐसे स्वामी या किसी अन्य व्यक्ति की, जो किसी कंप्यूटर, कंप्यूटर प्रणाली या कंप्यूटर नेटवर्क प्रणाली का भारसाधक है, अनुज्ञा के बिना –

(क) ऐसे कंप्यूटर, कंप्यूटर नेटवर्क प्रणाली में पहुंचना है, या पहुंच प्राप्त करना है;

(ख) ऐसे कंप्यूटर, कंप्यूटर प्रणाली या कंप्यूटर नेटवर्क से कोई डाटा, कंप्यूटर डाटा, संचयया सूचना, जिसके अंतर्गत किसी स्थानान्तरणीय भंडारण माध्यम में धृत या संचित कोई सूचना या डाटा भी है, डाउनलोड करता है, प्रतिलिपि करता है, या उसका उद्धरण लेता है;

(ग) किसी कंप्यूटर, कंप्यूटर प्रणाली नेटवर्क में किसी कंप्यूटर कंप्यूटर नेटवर्क में किसी कंप्यूटर संदूषक या कंप्यूटर वाइरस का प्रवेश करता है, या प्रवेश करवाता है;

(घ) ऐसे कंप्यूटर, कंप्यूटर प्रणाली या कंप्यूटर नेटवर्क में के किसी कंप्यूटर, कंप्यूटर प्रणाली या कंप्यूटर नेटवर्क, डाटा, कंप्यूटर डाटा संचय' या किसी अन्द कार्यक्रम को नुकसान पहुंचाता है या पहुंचवाता है;

(ङ) किसी कंप्यूटर, कंप्यूटर प्रणाली या कंप्यूटर नेटवर्क को विच्छिन्न करता है या करवाता है;

(च) किसी कंप्यूटर, कंप्यूटर प्रणाली या कंप्यूटर नेटवर्क में पहुंच के लिए प्राधिकृत किसी व्यक्ति की किसी भी साधन से पहुंच से इंकार करता है या करवाता है;

(छ) इस अधिनियम, इसके अधीन बनाए गए नियमों या विनियमों के उल्लंघन किसी कंप्यूटर, कंप्यूटर प्रणाली या कंप्यूटर नेटवर्क में किसी व्यक्ति की पहुंच को सुकर बनाने के लिए कोई सहायता प्रदान करता है;

(ज) किसी कंप्यूटर, कंप्यूटर प्रणाली या कंप्यूटर नेटवर्क में छेड़छाड़ या छल साधन करके, किसी व्यक्ति द्वारा उपभोग की गई सेवाओं के प्रभारों को किसी अन्य व्यक्ति के लेखे में डालता है, तो वह इस प्रकार प्रभावित व्यक्ति को प्रतिकर के रूप में ऐसी नुकसानी का जो एक करोड़ रूपये से अधिक नहीं होगी, संदाय करने का दायी होगा।

स्पष्टीकरण – इस धारा के प्रयोजन के लिए –

(i) "कंप्यूटर संदूषक" से कंप्यूटर अनुदेशों का ऐसा सेट अभिप्रेत है, जो निम्नलिखित के लिए अभिकल्पित किया गया हो –

(क) किसी कंप्यूटर, कंप्यूटर प्रणाली या कंप्यूटर नेटवर्क में के डाटा या कार्यक्रम को उपांतीरत, नष्ट, अभिलिखित या पारेषित करने; या

(ख) कंप्यूटर, कंप्यूटर, प्रणाली या कंप्यूटर नेटवर्क के सामान्य प्रवर्तन का किसी भी साधन से अनधिकार ग्रहण करने,

(ii) "कंप्यूटर डाटा संचय" से पाठ, प्रतिबिंब, श्रव्य, दृश्य में सूचना, जानकारी, तथ्य, संकल्पना और अनुदेशों का व्यपदेशन अभिप्रेत है जो प्रारूपित रीति में तैयार किया जा रहा है या तैयार किया गया है अथवा कंप्यूटर, कंप्यूटर प्रणाली या कंप्यूटर नेटवर्क द्वारा उत्पादित किया गया है और जो कंप्यूटर, कंप्यूटर प्रणाली या कंप्यूटर नेटवर्क में उपयोग के लिए आशयित है;

(iii) "कंप्यूटर वाइरस" से ऐसा कोई कंप्यूटर अनुदेश, सूचना, डाटा या कार्यक्रम अभिप्रेत है जो किसी कंप्यूटर साधन के निष्पादन को नष्ट करता है, नुकसान पहुंचाता है, ह्रास करता है, या प्रतिकूल प्रभाव डालता है अथवा स्वयं को किसी अन्य कंप्यूटर साधन से संलग्न कर लेता है और वह तब प्रवर्तित होता है जब कोई कार्यक्रम, डाटा या अनुदेश निष्पादित किया जाता है या उस कंप्यूटर साधन में कोई अन्य घटना घटती है ;

(iv) "नुकसान" से किसी माध्यम द्वारा किसी कंप्यूटर साधन को नष्ट करना, परिवर्तित करना, हटाना, जोड़ना, उपान्तरित या पुन: व्यवस्थित करना अभिप्रेत है।

44 यदि कोई व्यक्ति, जिससे इस अधिनियम या इसके अधीन बनाए गए किन्हीं नियम या विनियमों के अधीन –

(क) नियंत्रक अथवा प्रमाणकर्ता प्राधिकारी को कोई दस्तावेज, विवरणी या रिपोर्ट देना अपेक्षित है, उसे देने में असफल रहेगा, तो वह, ऐसी प्रत्येक असफलता के लिए एक लाख पचास हजार रूपए से अनधिक की शास्ति का दायी होगा ;

(ख) विनियमों में उनके देने के लिए विनिर्दिष्ट समय के भीतर कोई विवरण फाइल करने या कोई जानकारी, पुस्तक या अन्य दस्तावेज देना अपेक्षित है, विनियमों में उनके देने के लिए विनिर्दिष्ट समय के भीतर विवरणी फाइल करने या उसे देने में असफल रहेगा, तो वह, ऐसे प्रत्येक दिन के लिए, जिसके दौरान ऐसी असफलता बनी रहती है, पाँच हजार रूपए से अनधिक की शास्ति का दायी होगा,

(ग) लेखा बहियां या अभिलेख बनाए रखना अपेक्षित है, उन्हें बनाए रखने में असफल रहता है, तो वह, ऐसे प्रत्येक दिन के लिए, जिसके दौरान ऐसी असफलता बनी रहती है, दस हजार रूपए से अनधिक की शास्ति की दायी होगा।

45 जो कोई, इस अधिनियम के अधीन बनाए गए किन्हीं नियमों या विनियमों का उल्लंघन करेगा, तो वह ऐसे उल्लंघन के लिए, जिसके लिए अलग से किसी शास्ति का उपबंध नहीं किया गया है, ऐसे उल्लंघन से प्रभावित व्यक्ति को पच्चीस हजार रूपए से अनधिक के प्रतिकर का संदाय करने या पच्चीस हजार रूपए से अनधिक की शास्ति का दायी होगा।

46 (1) इस अध्याय के अधीन न्यायीनिर्णयन करने के प्रयोजन के लिए, जहां किसी व्यक्ति ने इस अधिनियम या इसके अधीन बनाए गए किसी नियम, विनियम, दिए गए निर्देश या किए गए आदेश के उपबंधों में से किसी का उल्लंघन किया है वहां केन्द्रीय सरकार, उपधारा (3) के उपबंधों के अधीन रहते हुए, भारत सरकार के निदेशक की पंक्ति से अनिम्न किसी अधिकारी या राज्य सरकार के किसी समतुल्य

अधिकारी को, केन्द्रीय सरकार द्वारा विहित रीति में जांच करने के लिए, न्यायनिर्णायक अधिकारी के रूप में नियुक्त कर सकेगी।

(2) न्यायनिर्णायक अधिकारी, उपधारा (1) में निर्दिष्ट व्यक्ति को उस मामले में अभ्यावेदन करने के लिए युक्तियुक्त अवसर देगा और यदि ऐसी जांच के पश्चात्, उसका यह समाधान हो जाता है कि उस व्यक्ति ने उल्लंघन किया है, तो वह, उस धारा के उपबंधों के अनुसार ऐसी शास्ति अधिरोपित कर सेकेगा ऐसा प्रतिकर अधिनिर्णीत कर सकेगा. जिसे वह ठीक समझे।

(3) कोई व्यक्ति, न्यायीनर्णायक अधिकारी के रूप में तब तक नियुक्त नहीं किया जाएगा जब तक कि उसके पास सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में ऐसा अनुभव और ऐसा विधिक या न्यायिक अनुभव न हो, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा विहित किया जाए।

(4) जहां एक से अधिक न्यायनिर्णायक अधिकारी नियुक्त किए गए हैं वहां केन्द्रीय सरकार, आदेश द्वारा उन विषयों और स्थानों को विनिर्दिष्ट करेगी जिनकी बाबत् ऐसे अधिकारी अपनी अधिकारिता का प्रयोग करेगे।

(5) प्रत्येक न्यायीनर्णायक अधिकारी को सिविल न्यायालय की बे शक्तियाँ होगी, जो धारा 58 की उपधारा (2) के अधीन साइबर अपील अधिकरण को प्रदान की गई है, और

(क) उसके समक्ष की सभी कार्यवाहियां भारतीय दंड संहिता की धारा 193 और धारा 228 के अर्थान्तर्गत न्यायिक कार्यवाहियां समझी जाएगी;

(ख) उसे दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 345 और धारा 346 के प्रयोजनार्थ सिविल न्यायालय समझा जाएगा।

47 इस अध्याय के अधीन प्रतिकर की मात्रा का न्यायनिर्णयन करते समय, न्यायनिर्णायक अधिकारी, निम्नलिखित बातों पर सम्यक् ध्यान देगा अर्थात :–

(क) व्यतिक्रम के परिणामस्वरूप हुए अभिलाभ या अनुचित फायदे की रकम, जहां वह परिमाण निर्धारण योग्य हो ;

(ख) व्यतिक्रम के परिणामस्वरूप किसी व्यक्ति को हुई हानि की रकम;

(ग) व्यतिक्रम की आवृत्तीय प्रकृति।

अध्याय – 10

साइबर विनियमन अपील अधिकरण

48 (1) केन्द्रीय सरकार, अधिसूचना द्वारा, साइबर विनियमन अपील अधिकरण नामक एक या अधिक अपील अधिकरणों की स्थापना करेगी।

(2) केन्द्रीय सरकार, उपधारा (1) में निर्दिष्ट अधिसूचना में, वे विषय और स्थान भी विनिर्दिष्ट करेगी, जिनके संबंध में साइबर अपील अधिकरण, अधिकारिता का प्रयोग करेगा।

49 साइबर अपील अधिकरण केवल एक व्यक्ति से मिलकर बनेगा (जिसे इसमें इसके पश्चात् साइबर अपील अधिकरण का पीठासीन अधिकारी कहा गया है), जिसकी नियुक्त केन्द्रीय सरकार द्वारा, अधिसूचना द्वारा की जाएगी।

50 साइबर अपील अधिकरण के पीठासीन अधिकारी के रूप में नियुक्त के लिए कोई व्यक्ति, तब तक अर्हित नहीं होगा जब तक कि वह –

(क) उच्च न्यायालय का न्यायाधीश न हो या न रहा हो या होने के लिए अर्हित न हो;

या

भारतीय विधिक सेवा का सदस्य न हो या न रहा हो और उस सेवा के ग्रेड – I में कम से कम तीन वर्ष के लिए कोई पद धारण न कर रहा हो या धारित न किया हो।

51 किसी साइबर अपील अधिकरण का पइभसीन अधिकारी, उस तारीख से, जिसको वह अपना पद ग्रहण करता है, पाँच वर्ष की अवधि तक या पैंसठ वर्ष की आयु प्राप्त करने तक, इनमें से जो भी पहले हो, पदधारण करेगा ।

52 साइबर अपील अधिकरण के पीठासीन अधिकारी को संदेय वेतन और भले तथा उसके सेवा के अन्य निबंधन और शर्तें, जिनके अन्तर्गत उसकी पेंशन, उपदान और अन्य सेवानिवृत्ति फायदे भी हैं, वें होंगी, जो विहित की जाएं :

परन्तु पीठासीन अधिकारी के न तो वेतन और भले और न ही उसकी सेवा के अन्य निबंधन और शर्तें नियुक्ति के पश्चात उसके लिए अलाभकारी रूप से परिवर्तित की जाएगी।

53 यदि साइबर अपील अधिकरण के पीठासीन अधिकारी के पद में अस्थायी अनुपस्थिति से भिन्न कारण से कोई रिक्ति होती है तो केन्द्रीय सरकार, उस रिक्ति को भरने के लिए इस अधिनियम के उपबंधों के अनुसार किसी अन्य व्यक्ति की नियुक्ति करेगी और साइबर अपील अधिकरण के समक्ष कार्यवाहियां उस प्रक्रम से चालू रखी जा सकेगी जिस पर रिक्ति भरी होती है।

54 (1) साइबर अपील अधिकरण का पीठासीन अधिकारी, केन्द्रीय सरकार को संबोधित स्वहस्ताक्षरित लिखित सूचना द्वारा अपने पद का त्याग कर सकेगा.

परन्तु उक्त पीठासीन अधिकारी, जब तक कि उसे केन्द्रीय सरकार द्वारा उससे पहले पद का त्याग करने के लिए अनुज्ञान न किया गया हो, ऐसी सूचना की प्राप्ति की तारीख से तीन मास की समाप्ति तक या उसके उत्तरवर्ती के रूप में सम्यक्त: नियुक्त व्यक्ति के पद–ग्रहण करने तक या उसकी पदावधि की समाप्ति तक, जो भी पूर्वतम हो, अपना पद धारण करता रहेगा।

(2) साइबर अपील अधिकरण के पीठासीन अधिकारी को, उच्चतक न्यायालय के किसी न्यायाधीश द्वारा की गई ऐसी जांच के पश्चात्, जिसमें संबद्ध पीठासीन अधिकारी को उसके विरूद्ध आरोपों की सूचना दे दी गई हो और इन आरोपों की बाबत् सुनवाई का उचित अवसर दे दिया गया हो, साबित कदाचार या असमर्थता के आधार पर केन्द्रीय सरकार द्वारा किए गए आदेश से ही उसके पद से हटाया जाएगा, अन्यथा नहीं।

(3) केन्द्रीय सरकार, पूर्वोक्त पीठासीन अधिकारी के कदाचार या असमर्थता के अन्वेषण व 12की प्रक्रिया को नियमों द्वारा विनियमित कर सकेगी।

55 केन्द्रीय सरकार का साइबर अपील अधिकरण के पीठासीन अधिकारी के रूप में किसी व्यक्ति की नियुक्ति करने वाला कोई आदेश किसी भी रीति से प्रश्नगत नहीं किया जाएगा और साइबर अपील अधिकरण का कोई कार्य या उसके समक्ष कार्यवाही केवल इस आधार पर किसी भी रीति से प्रश्नगत नहीं की जाएगी कि साइबर अपील अधिकरण के गठन में कोई दोष है।

56 (1) केन्द्रीय सरकार, साइबर अपील अधिकरण को उतने अधिकारी और कर्मचारी उपलब्ध कराएगी जितने वह सरकार उचित समझे।

(2) साइबर अपील अधिकरण के अधिकारियों और कर्मचारियों के वेतन और भत्ते तथा उनकी सेवा की अन्य शर्तें वे होगी जो विहित की जाएं।

(3) साइबर अपील अधिकरण के अधिकारियों और कर्मचारियों के वेतन और भत्ते तथा उनकी सेवा की अन्य शर्तें वे होगी जो विहित की जाएं।

57 (1) उपधारा (2) में जैसा उपबंधित है उसके सिवाय, इस अधिनियम के अधीन नियंत्रक या

न्यायनिर्णायक अधिकारी द्वारा किए गए किसी आदेश से व्यथित कोई व्यक्ति, उस साइबर अपील अधिकरण को अपील कर सकेगा, जिसकी उस विषय पर अधिकारिता है।

(2) न्यायनिर्णायक अधिकारी द्वारा पक्षकारों की सहमति से किए गए किसी आदेश के विरूद्ध अपील साइबर अपील अधिकरण को नहीं होगी।

(3) उपधारा (1) के अधीन प्रत्येक अपील, उस तारीख से, जिसको नियंत्रक या न्यायनिर्णायक अधिकारी द्वारा किए गए आदेश की प्रति व्यथित व्यक्ति द्वारा प्राप्त की जाती है, पैंतालीस दिन की अवधि के भीतर फाइल की जाएगी और वह ऐसे प्ररूप में होगी और उसके साथ उतनी फीस होगी जो विहित की जाए :

परन्तु साइबर अपील अधिकरण, उक्त पैंतालीस दिन की अवधि की समाप्ति के अपील ग्रहण कर सकेगा यदि उसका यह समाधान हो जाता है कि उक्त अवधि के भीतर उसे फाइल न किए जाने के लिए पर्याप्त कारण था।

(4) साइबर अपील अधिकरण, उपधारा (1) के अधीन अपील की प्राप्ति पर, अपील के पक्षकारों को सुनवाई का अवसर देने के पश्चात, उस आदेश पर जिसके विरूद्ध अपील की गई है, उसकी पुष्टि, उपान्तरण या अपास्त करने वाला ऐसा आदेश पारित करेगा, जो उचित समझे।

(5) साइबर अपील अधिकरण, अपने द्वारा किए गए प्रत्येक आदेश की एक प्रति अपील के पक्षकारों और संबंधित नियंत्रक या न्यायनिर्णायक अधिकारी को भेजेगा।

(6) उपधारा (1) के अधीन साइबर अपील अधिकरण के समक्ष फाइल की गई अपील यथासंभव शीघ्र निपटाई जाएगी और अपील की प्राप्ति की तारीख से छह माह के भीतर अपील को अंतिम रूप से निपटाने का प्रयास किया जाएगा।

58 (1) साइबर अपील अधिकरण सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 द्वारा अधिकथित प्रक्रिया से आबद्ध नहीं होगा, किन्तु नैसर्गिक न्याय के सिद्धान्तों से मार्गदर्शित होगा और इस अधिनियम के अन्य उपबंधों तथा किन्हीं नियमों के अधीन होगा। साइबर अपील अधिकरण को, अपनी प्रक्रिया को जिसके अंतर्गत वह स्थान भी है जहसं एयकी बैंठकें होगी, विनियमित करने की शक्ति होगी।

(2) साइबर ' अपील अधिकरण को इस अधिनियम के अधीन अपने कृत्यों के निर्वहन के प्रयोजनों के लिए निम्नलिखित विष संबंध में वही शक्तियां होंगी, जो किसी वाद का विचारण करते समय सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के अधीन सिविल न्यायालय में निहित है, अर्थात:–

(क) किसी व्यक्ति को समन करना और हाजिर कराना तथा शपथ पर उसकी परीक्षा करना;

(ख) दस्तावेजों या अन्य इलैक्ट्रॉनिक अभिलेखों को प्रकट और पेश करने की अपेक्षा करना;

(ग) शपथपत्रों पर साक्ष्य ग्रहणकरना :

(घ) साक्षियों या दस्तावेजों कि परीक्षा के लिए कमीशन निकालना :

(ङ) (ड) अपने विनिश्चयों का पुनर्विलोकन करना ;

(च) किसी आवेदन को व्यतिक्रम के लिए खारिज करना या एक पक्षीय विनिश्चिय करना;

(छ) कोई विषय जो विहित किया जाए।

(3) साइबर अपील अधिकरण के समक्ष प्रत्येक कार्यवाही भारतीय दंड संहिता की धारा 193 और धारा 228 के अर्थान्तर्गत और धारा 196 के प्रयोजनार्थ न्यायिक कार्यवाही समझी जाएगी और साइबर अपील अधिकरण, दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 195 और अध्याय 28 के सभी प्रयोजनों के लिए सिविल न्यायालय समझा जाएगा।

59 अपीलार्थी, साइबर अपील अधिकरण के समक्ष अपना मामला प्रस्तुत करने के लिए स्वयं हाजिर हो सकेगा या एक अथवा अधिक विधि व्यावसायियों को अथवा अपने किसी अधिकारी को प्राधिकृत कर सकेगा।

60 परिसीमा अधिनियम, 1963 के उपबंध, जहां तक हो सके, साइबर अपील अधिकरण को की गई अपील को लागू होंगे।

61 ऐसे किसी विषय की बाबत जिसके संबंध में इस अधिनियम के अधीन नियुक्त कोई न्यायनिर्णायक अधिकारी या इस अधिनियम के अधीन गठित कोई साइबर अपील अधिकरण, इस अधिनियम 'द्वारा या उसके अधीन अवधारित करने के लिए सशक्त है, कोई बाद या कार्यवाही ग्रहण करने की किसी न्यायालय को अधिकारिता नहीं होगी और इस अधिनियम द्वारा या उसके अधीन प्रदत्त किसी शक्ति के अनुसरण में की गई या की जाने वाली किसी कार्यवाही की बाबत् किसी न्यायालय या अन्य प्राधिकारी द्वारा कोई व्यादेश अनुदत्त नहीं किया जाएगा।

62 साइबर अपील अधिकरण के किसी विनिश्चय या आदेश से व्यथित कोई व्यक्ति, ऐसे विनिश्चय या आदेश से उदभूत होने वाले तथ्य या विधि के किसी प्रश्न पर, साइबर अपील अधिकरण के विनिश्चय या आदेश की उसे संसूचना की तारीख से साठ दिन के भीतर उच्च न्यायालय को अपील कर सकेगा :

परन्तु यदि उच्च न्यायालय का यह समाधान हो जाता है कि अपीलार्थी, उक्त अवधि के भीतर अपील फाइल करने से पर्याप्त कारण से निवारित किया गया था तो वह ऐसी और अवधि के भीतर, जो साठ दिन से अधिक नहीं होगी, अपील फाइल करने के लिए अनुज्ञात कर सकेगा।

63 (1) इस अध्याय के अधीन कोई उल्लंघन, न्यायनिर्णय कार्यवाहियों के संस्थापन के पूर्व या पश्चात, यथास्थिति, नियंत्रक या उसके द्वारा इस निमित्त विशेष रूप से प्राधिकृत किसी अन्य अधिकारी द्वारा या न्यायनिर्णायक अधिकारी द्वारा, ऐसी शर्तो के अधीन रहते हुए, जो नियंत्रक या ऐसे अन्य अधिकारी द्वारा विनिर्दिष्ट की जाए, शमन किया जा सकेगा

परन्तु ऐसी राशि, किसी भी दशा में, शास्ति की उस अधिकतम रकम से अधिक नहीं होगी, जो इस अधिनियम के अधीन इस प्रकार शमन किए गए उल्लंघन के लिए अधिरोपित है।

(2) उपधारा (1) की कोई बात, उस व्यक्ति को लागू नहीं होगी, जो उसके द्वारा किए गए पहले उल्लंघन, जिसका शमन किया गया था, की तारीख से तीन वर्ष की अवधि के भीतर वहीं या वैसा ही उल्लंघन करता है।

स्पष्टीकरण – इस उपधारा के प्रयोजनों के लिए, उस तारीख से, जिसको उल्लंघन का पहले शमन किया गया था, तीन वर्ष की अवधि की समाप्ति के पश्चात किया गया कोई दूसरा या पश्चात्वर्ती उल्लंघन पहला उल्लंघन समझा जाएगा।

(3) जहां उपधारा (1) के अधीन किसी उल्लंघन का शमन किया गया है, वहा इस प्रकार शमन किए गए उल्लंघन की बाबत् उस उल्लंघन के दोषी व्यक्ति के विरूद्ध,

तथास्थिति, कोई कार्यवाही या अतिरिक्त कार्यवाही नहीं की जाएगी।

64 इस अधिनियम के अधीन अधिरोपित कोई शास्ति, यदि उसका संदाय नहीं किया जाता है, भू–राजस्व की बकाया के रूप में वसूल की जाएगी और तथास्थिति, अनुज्ञप्ति या अंकीय चिह्नक प्रमाणपत्र शास्ति का संदाय किए जाने तक निलंबित रखा जाएगा।

अध्याय – 11

अपराध

65 जो कोई, कम्प्यूटर, कम्प्यूटर कार्यक्रम, कम्प्यूटर प्रणाली या कम्प्यूटर नेटवर्क के लिए उपयोग किए जाने वाले किसी कम्प्यूटर साधन कोड को, जब कम्प्यूटर साधन कोड का रखा जाना या अनुरक्षित किया जाना तत्समय

प्रवृत्त विधि द्वारा अपेक्षित हो, जानबूझकर या साशय छिपाता है, नष्ट करता है या परिवर्तित करता है अथवा साशय या जानबूझकर किसी अन्य से छिपवाता है, नष्ट कराता है या परिवर्तित कराता है तो वह कारावास से, जो तीन वर्ष तक का हो सकेगा या जुर्माने से, जो दो लाख रुपये तक का हो सकेगा, या दोनों से, दंडनीय होगा ।

स्पष्टीकरण – इस धारा के प्रयोजनों के लिए, ''कम्प्यूटर साधन कोड'' से कार्यक्रमों, कम्पयूटर समादेशों, डिजाइन और विन्यास का सूचीबद्ध करना तथा कम्प्यूटर साधन का किसी भी रूप में कार्यक्रम विश्लेषण अभिप्रेत है ।

66 (1) जो कोई, जनता या किसी व्यक्ति को सदोष हानि या नुकसान कारित करने के आशय से या यह जानते हुए कि उससे सदोष हानि या नुकसान कारित होने की संभावना है, कम्प्यूटर संसाधन में रखी गई किसी सूचना को नष्ट करेगा या मिटाएगा या परिवर्तित करेगा अथवा उसके मूल्य या उपयुक्तता में ह्रास करेगा या उसे किसी साधन द्वारा हानिकारक रूप से प्रभावित करेगा, तो वह हैकिंग करता है ।

(2) जो कोई हैकिंग करेगा, वह तीन वर्ष तक के कारवास से या जुर्माने से, जो दस लाख रूपये तक का हो सकेगा, या दोनों से, दण्डित किया जायेगा ।

67 जो कोई, किसी ऐसी सामग्री को, जो कामोत्तेजक है, या कामुक रूचि की है और आकर्षिक करती है अथवा यदि उसका प्रभाव ऐसा है कि ऐसे व्यक्तियों का चरित्र बिगड़े या उन्हें भ्रष्ट करे, जिनके सभी सुसंगत परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए उसमें अन्तर्विष्ट सन्निविष्ट विषय को पढ़ने, देखने या सुनने की संभावना है, इलैक्ट्रॉनिक रूप से प्रकाशित या प्रेषित करता है या प्रकाशित करवाता है तो, वह प्रथम दोषीसद्धि पर, दोनों में से किसी भांति के कारावास से, जिसकी अवधि पांच वर्ष तक हो सकेगी और जुर्माने से, जो एक लाख रूपये तक हो सकेगा और दूसरी या पश्चात्वर्ती दोषसिद्धि की दशा में, दोनों में से किसी भांति के कारावास से, जिसकी अवधि दस वर्ष तक की हो सकेगी और जुर्माने से भी, जो दो लाख रूपये तक का हो सकेगा, दंडित किया जाएगा।

68 (1) नियंत्रक, आदेश द्वारा, प्रमाणकर्ता प्राधिकारी या ऐसे प्राधिकारी के किसी कर्मचारी को आदेश में विनिर्दिष्ट उपाय करने या ऐसे क्रियाकलापों को बंद कर देने का निदेश दे सकेगा यदि वे इस अधिनियम या इसके अधीन बनाए गये नियमों या किन्हीं विनियमों के किन्हीं उपबंधों के अनुपालन को सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक है ।

(2) ऐसा कोई व्यक्ति, जो उपधारा (1) के अधीन किसी आदेश का अनुपालन करने में असफल रहता है, अपराध का दोषी होगा और दोषसिद्धि पर कारावास से, जिसकी अवधि तीन वर्ष से अधिक नहीं होगी या ऐसे जुर्माने का जो दो लाख रूपये से अधिक का नहीं होगा अथवा दोनों का दायी होगा ।

69 (1) यदि नियंत्रक का यह समाधान हो जाता है कि भारत की प्रभुता या अखण्डता राज्य की सुरक्षा, विदेशों के साथ मैत्रीपूर्ण संबंधों अथवा लोक अवस्था के हित में या किसी संज्ञेय अपराध के किए जाने को प्रेश्रित करने से निवारित करने के लिए ऐसा करना आवश्यक या समीचीन हो तो वह, उन कारणों से जो लेखबद्ध किए जाएंगे, आदेश द्वारा सरकार के किसी अभिकरण को किसी कंप्यूटर साधन के माध्यग से पारेषित की जाने वाली किसी भी जानकारी में विघ्न डालने का निदेश दे सकेगा ।

(2) उपयोगकर्ता या कंप्यूटर साधन का भारसाधक कोई व्यक्ति, जब भी उसे किसी ऐसे अभिकरण जिसे उपधारा (1) के अधीन निदेश दिया गया है द्वारा बुलाया जाए, तब उस जानकारी को चित्रित करने के लिए सभी सुविधाएं और तकनीक सहायता प्रदान करेगा ।

(3) उपयोकर्ता या ऐसा कोई व्यक्ति, जो उपधारा (2) में विनिर्दिष्ट अभिकरण की सहायता करने में असफल रहता है, ऐसे कारावास से, जिसकी अवधि सात वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा।

70 (1) समुचित सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, यह घोषित कर सकेगी कि कोई कंप्यूटर, कंप्यूटर प्रणाली या कंप्यूटर नेटवर्क संरक्षित प्रणाली होगी।

(2) समुचित सरकार, लिखित आदेश द्वारा ऐसे व्यक्ति को प्राधिकृत कर सकेगी जो उपधारा (1) के अधीन अधिसूचित संरक्षित प्रणाली तक पहुंचने के लिए प्राधिकृत है।

(3) कोई व्यक्ति, जो इस धारा के उपबंधों के उल्लंघन में किसी संरक्षित प्रणाली तक पहुंच प्राप्त कर लेता है या पहुंच प्राप्त करने का प्रयत्न करता है, दोनों में से किसी भांति के कारावास से, जिसकी अवधि दस वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और जुर्माना का भी दायीं होगा।

71 जो कोई नियंत्रक या प्रमाणकर्ता प्राधिकारी के समक्ष, यथास्थिति. कोई अनुज्ञप्ति या अंकीय चिह्नक प्रमाणपत्र प्राप्त करने के लिए कोई दुर्व्यपदेशन करता है या किसी तात्विक तथ्य को छिपाता है तो वह ऐसे कारावास से, जिसकी अवधि दो वर्ष तकनकी हो सकेगी, या ऐसे जुर्माने से, जो एक लाख रूपये तक का हो सकेगा, अथवा दोनों से दण्डित किया जाएगा।

72 इस अधिनियम या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में जैसा अन्यथा उपबंधित है उसके सिवाय यदि किसी व्यक्ति ने, इस अधिनियम, इसके अधीन बनाए गए नियमों या विनियमों के अधीन प्रदत्त किन्हीं शक्तियों के अनुसरण में किसी इलैक्ट्रॉनिक अभिलेख, पुस्तक, रजिस्टर, पत्राचार, सूचना, दस्तावेज या अन्य सामग्री से सम्बद्ध व्यक्ति की सहमति के बिना पहुंच प्राप्त कर ली है और वह किसी व्यक्ति को उस इलैक्ट्रानिक अभिलेख, पुस्तक, रजिस्टर, पत्राचार, सूचना, दस्तावेज या अन्य सामग्री को प्रकट करता है तो वह ऐसे कारावास से, जिसकी अवधि दो वर्ष तक हो सकेगी, या ऐसे जुर्माने से, जो एक लाख रूपये तक का हो सकेगा, अथवा दोनों से, दण्डित किया जाएगा।

73 (1) कोई व्यक्ति, अंकीय चिह्नक प्रमाणपत्र को तब तक प्रकाशित नहीं करेगा या किसी अन्य व्यक्ति को अन्यथा उपलब्ध नहीं कराएगा, यदि उसे जानकारी है कि –

(क) प्रमाण पत्र में सूचीबद्ध प्रमाणकर्ता प्राधिकारी ने उसे जारी नहीं किया है; या

(ख) प्रमाण पत्र में सूचीबद्ध हस्ताक्षरकर्ता ने उसे स्वीकार नहीं किया है; या

(ग) वह प्रमाण पत्र प्रीतसंहृत या निलम्बित कर दिया गया है,

जब तक कि ऐसा प्रकाशन, ऐसे निलम्बन या प्रतिसंहरण से पूर्व सृजित अंकीय चिह्नक के सत्यापन के प्रयोजनार्थ न हो।

(2) ऐसा कोई व्यक्ति, जो उपधारा (1) के उपबंधों का उल्लंघन करता है, ऐसे कारावास से जिसकी अवधि दो वर्ष तक हो सकेगी या ऐसे जुर्माने से, जो एक लाख रूपये तक का हो सकेगा, अथवा दोनों से दण्डित किया जाएगा।

74 जो कोई, किसी कपटपूर्ण या विधिविरूद्ध प्रयोजन के लिए कोई अंकीय चिह्नक प्रमाणपत्र जानबूझकर सृजित करता है, प्रकाशित करता है या अन्यथा उपलब्ध कराता है, कारवास से, जिसकी अवधि दो वर्ष तक की हो सकेगी, या जुर्माने से, जो एक लाख रूपये तक का हो सकेगा या दोनों से, दंडित किया जाएगा।

75 (1) उपधारा (2) के उपबंधों के अधीन रहते हुए, उस अधिनियम के उपबंध किसी व्यक्ति द्वारा भारत से बाहर किए गए किसी अपराध या उल्लंघन को भी, उसकी राष्ट्रियता को विचार में लाए बिना, लागू होंगे।

(2) उपधारा (1) के प्रयोजनों के लिए, यह अधिनियम किसी व्यक्ति द्वारा भारत से बाहर किए गए किसी अपराध या उल्लंघन को लाग होगा यदि उस कार्य या आचरण में, जिससे यह अपराध या उल्लंघन होता है, भारत में व्यस्थित कोइ कंप्यूटर, कंप्यूटर प्रणाली या कंप्यूटर नेटवर्क अंतर्वलित हो।

76 ऐसा कोई कंप्यूटर, कंप्यूटर प्रणाली, फ्लापी, काम्पैक्ट डिस्क, टेप चालन या उससे संबंधित कोई ऐसे अन्य उपसाधन, जिनकी बाबत इस अधिनियम, इसके अधीन बनाए गए नियमों, किए गए आदेशों या. बनाए गए विनियमों के किसी उपबंध का उल्लंघन किया जा रहा है, अधिहरणीय होगा।

परन्तु जहां अधिहरण या अधिनिर्णय देने वाले न्यायालय के समाधानप्रद रूप में यह सिद्ध हो जाता है कि वह व्यक्ति, जिसके कब्जे, शक्ति या नियंत्रण में ऐसा कम्यूटर, कंप्यूटर प्रणाली, फ़्लापी . काम्पैक्ट डिस्क. टेप चालन या उससे संबंधित कोई अन्य उपसाधन पाया जाता है, इस अधिनियम इसके अधीन बनाए गए नियमों, किए गए आदेशों या बनाए गए विनियमों के उपबंधों के उल्लंघन के लिए उत्तरदायी नहीं. है वहां न्यायालय, ऐसे कंप्यूटर, कंप्यूटर प्रणाली, फ्लापी, काम्पैक्ट डिस्क. टेप चालन या उससे संबंधित किसी अन्य उपसाधन के अधिहरण का आदेश करने के बजाय इस अधिनियम या इसके अधीन बनाए गए नियमों, किए गए आदेशों या बनाए गए विनियमों के उपबंधों का उल्लंघन करने वाले व्यक्ति के विरूद्ध इस अधिनियम द्वारा प्राधिकृत ऐसा अन्य आदेश कर सकेगा, जो ठीक समझे।

77 इस अधिनियम के अधीन अधिरोपित कोई शास्ति या किया गया अधिहरण किसी ऐसे अन्य दंड के अधिरोपण को निर्वारित नहीं करेगा जिसके लिए उनके द्वारा प्रभावित व्यक्ति तत्समय प्रवृता किसी अन्य विधि के अधीनदायी है।

78 दंड प्रक्रिया संहिता 1973 में अंतर्दिष्ट किसी बात के होते हुए भी, कोई ऐसे पुलिस अधिकारी, जो उपपुलिस अधीक्षक की पंक्ति से नीचे का न हो, इस अधिनियम के अधीन किसी अपराध का अन्वेषण करेगा।

अध्याय – 12

नेटवर्क सेवा प्रदाताओं का कतिपय मामलों में दायी न होना

79 शंकाओं को दूर करने के लिए यह घोषित किया जाता है कि ऐसा कोई व्यक्ति, जो नेटवर्क सेवा प्रदाता के रूप में कोई प्रदान कर रहा है, इस अधिनियम या इसके अधीन बनाए गए नियमों या विनियमों के अधीन किसी अन्य व्यक्ति द्वारा उपलब्ध कराई गई सूचना या डाटा के लिए दायी नहीं होगा, यदि वह साबित कर देता है कि वह अपराध या उल्लंघन उसकी जानकारी के बिना किया गया था अथवा ऐसे अपराध या उल्लंघन के लिए जाने को निवारित करने के लिए उसने सभी सम्यक् तत्परता बरती थी।

स्पष्टीकरण – इस धारा के प्रयोजनों के लिए –

(क) 'नेटवर्क सेवा प्रदाता' से कोई मध्यवर्ती अभिप्रेत है;

(ख) "अन्य व्यक्ति द्वारा उपलब्ध कराई गई सूचना' से कोई सूचना अभिप्रेत है जिसे किसी नेटवर्क सेवा प्रदाता द्वारा मध्यवर्ती की हैसियत में काम में लाया गया है।

अध्याय – 13

प्रकीर्ण

80 (1) दंड प्रक्रिया संहिता 1973 में किसी बात के होते हुए भी कोई पुलिस अधिकारी, जो उपपुलिस अधीक्षक की पंक्ति से नीचे का न हो, या केन्द्रीय सरकार या किसी राज्य सरकार का कोई ऐसा अन्य अधिकारी, जिसे केन्द्रीय सरकार द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत किया गया हो, किसी सार्वजनिक स्थान

में प्रवेश कर सकेगा और उसकी तलाशी ले सकेगा तथा वहा पाए गए किसी ऐसे व्यक्ति को बिना वारण्ट गिरफ्तार कर सकेगा जो युक्तियुक्त रूप से संदिग्ध व्यक्ति है या जिसने इस अधिनियम के अधीन कोई अपराध किया है या कर रहा है या करने वाला है।

स्पष्टीकरण – इस उपधारा के प्रयोजनों के लिए, 'सार्वजनिक स्थान' पद के अन्तर्गत कोई सार्वजनिक वाहन, कोई होटल, कोई दुकान या कोई ऐसा स्थान भी आता है, जो जनता द्वारा उपयोग के लिए आशीयत है, या उनकी पहुंच में है।

(2) जहां कोई व्यक्ति, उपधारा (1) के अधीन पुलिस अधिकारी से भिन्न किसी अधिकारी द्वारा गिरफ्तार किया जाता है वहां ऐसा अधिकारी, बिना किसी अनावश्यक विलंब के गिरफ्तार किए गए व्यक्ति को उस मामले में अधिकारिता रखने वाले मजिस्ट्रेट के समक्ष या पुलिस थाने के भारसाधक अधिकारी के समक्ष ले जाएगा या भेजेगा।

(3) दंड प्रक्रिया संहिता 1973 के उपबंध, इस धारा के उपबंधों के अधीन रहते हुए, जहां तक हो सके, इस धारा के अधीन किए गए किसी प्रवेश, ली गई तलाशी या गिरफ्तार के संबंध में लागू होंगे।

81 इस अधिनियम के उपबंध, तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में इससे अंसगत किसी बात के होते हुए भी प्रभावी होंगे।

82 साइबर अपील अधिकरण के पीठासीन अधिकारी और अन्य अधिकारी गया कर्मचारी नियंत्रक, उपनियंत्रक तथा सहायक नियंत्रक, भारतीय दंड संहिता की धारा 21 के अर्थान्तर्गत लोक सेवक समझे जाएंगे।

83 केन्द्रीय सरकार, किसी राज्य की सरकार को इस अधिनियम या इसके अधीन बनाए गए नियम, विनियम या किए गए आदेश के किन्हीं उपबंधों के राज्य में निष्पादित करने के लिए निदेश दे सकेगी।

84 इस अधिनियम, इसके अधीन बनाए गए किसी नियम, विनियम या किए गए किसी आदेश के अनुसरण में सदभावनापूर्वक की गई या की जाने के लिए आशीयत किसी वात के लिए कोई वाद, अभियोजन या अन्य विधिक कार्यवाही, केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकार, नियंत्रक या उसकी और से कार्य करने वाले किसी व्यक्ति, साइबर अपील अधिकरण के पीठासीन अधिकारी, न्यायर्णायक अधिकारियों और कर्मचारिवृंद के विरुद्ध नहीं होगी।

85 (1) जहां कोई व्यक्ति, जो एक कंपनी है, इस अधिनियम या उसके अधीन बनाए गए किसी नियम या किए गए किसी निदेश या आदेश के किन्हीं उपबंधों का उल्लंघन करता है, वहां प्रत्येक ऐसा व्यक्ति, जो उस उल्लंघन के किए जाने के समय उस कंपनी के कारोबार के संचालन के लिए उस कम्पनी का भारसाधक और उसके प्रति उत्तरदायी था और साथ ही वह कंपनी भी, ऐसे उल्लंघन के दोषी समझे जाएंगे और तदनुसार अपने विरूद्ध कार्यवाही किए जाने और दंडित किए जाने के भागी होंगे,

परन्तु इस उपधारा की कोई बात किसी ऐसे व्यक्ति को दंड का भागी नहीं बनाएगी यदि वह यह साबित कर देता है कि ऐसा उल्लंघन उसकी जानकारी के बिना किया गया था या उसने ऐसे उल्लंघन के किए जाने का निवारण करने के लिए सब सम्यक तत्परता बरती थी

(2) उपधारा (1) में किसी बात के होते हुए भी, जहां इस अधिनियम या उसके अधीन बनाए गए किसी नियम या किए गए किसी निदेश या आदेश के किन्हीं उपबंधों का उल्लंघन किसी कंपनी के किसी निदेशक, प्रबंधक, सचिव या अन्य अधिकारी की सहमति या मौनानुकूलता से किया गया है या उस अपराध का किया जाना उसकी किसी उपेक्षा के कारण माना जा सकता है, वहां ऐसा निदेशक, प्रबंधक, सीचव या अन्य अधिकारी भी उस अपराध या उल्लंघन का दोष समझा जाएगा और तदनुसार अपने विरूद्ध कार्यवाही किए जाने और दंडित किए जाने का भागी होगा।

स्पष्टीकरण – इस धारा के प्रयोजनों के लिए –

(i) "कंपनी" से कोई निगमित निकाय अभिप्रेत है और उसके अन्तर्गत फर्म या व्यष्टियों का अन्य संगम भी है; और

(ii) फर्म के संबंध में "निदेशक" से उस फर्म का भागीदार अभिप्रेत है।

86 (1) यदि इस अधिनियम के उपबंधों को प्रभावी करने गे कोई कठिनाई उत्पन्न होती है तो केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में प्रकाशित आदेश द्वारा, ऐसे उपबंध कर सकेगी जो इस अधिनियम के उपबंधों से असंगत न हों और कठिनाई को दूर करने के लिए उसे आवश्यक या समीचीन प्रतीत हो;

परन्तु इस धारा के अधीन ऐसा कोई आदेश इस अधिनियम के प्रारम्भ से दो वर्ष की अवधि की समाप्ति के पश्चात् नहीं किया जाएगा।

(2) इस धारा के अधीन किया गया प्रत्येक आदेश इसके किए जाने के पश्चात् तथाशीघ्र संसद के प्रत्येक सदन के समक्ष रखा जाएगा।

87 (1) केन्द्रीय सरकार, इस अधिनियम के उपबंधों को कार्यान्वित 'करने के लिए राजपत्र और इलैक्ट्रॉनिक राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, नियम बना सकेगी।

(2) विशिष्टतया और पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना ऐसे नियमों में निम्नलिखित सभी या किन्हीं विषयों के लिए उपबंध किया जा सकेगा, अर्थात :–

(क) वह रीति, जिसमें धारा 5 के अधीन चिह्नक के माध्यम से कोई जानकारी या बात अधिप्रमाणित की जाएगी ;

(ख) वह इलैक्ट्रौनिक रूप, जिसमें धारा 6 की उपधारा (1) के अधीन फाइल करने, जारी करने, अनुदान, या संदाय का कार्य किया जाएगा;

(ग) धारा 6 की उपधारा (2) के अधीन वह रीति और रूपविधान, जिसमें इलैक्ट्रॉनिक अभिलेख फाइल किया जाएगा या जारी किया जाएगा और संदाय करने का ढंग;

(घ) धारा 10 के अधीन अंकीय चिह्नक की किस्म से संबंधित विषय, वह रीति और रूपविधान, जिसमें इसे लगाया जाएगा;

(ङ) (ड) धारा 16 के अधीन सुरक्षित इलैक्ट्रॉनिक अभिलेख और सुरक्षित अंकीय चिह्नक का सृजन करने के। प्रयोजन के लिए सुरक्षा प्रक्रिया;

(च) धारा 17 के, अधिन नियंत्रक, उपनियंत्रकों और सहायक नियंत्रकों की अर्हताएं, अनुभव और उनकी सेवा के निबंधन और शर्तें;

(छ) धारा 20 की उपधारा (2) के खंड (ख) के अधीन नियंत्रक द्वारा अपनाए जाने वाले अन्य मानक;

(ज) धारा 21 की उपधारा (2) के खंड (क) के अधीन अनुदज्ञ अनुज्ञप्ति की विधिमान्यता की अवधि;

(झ) धारा 21 की उपधारा (3) के खंड (क) के अधीन अनुदत्त अनुज्ञप्ति की विधिमान्यता की अवधि;

(ञ) वह प्ररूप, जिसमें धारा 22 की उपधारा (1) के अधीन अनुज्ञप्ति के लिए आवेदन किया जा सकेगा;

(ट) धारा 22 की उपधारा (2) के खंड (ग) के अधीन संदेय फीसों की रकम;

(ठ) ऐसे अन्य दस्तावेज, जो धारा 22 की उपधारा (2) के खंड (घ) के अधीन अनुज्ञप्ति के लिए आवेदन के साथ लगाए जाएंगे,

(ड) धारा 23 के अधीन अनुज्ञप्ति के नवीकरण के लिए प्ररूप और उसके लिए संदेय फीस;

(ढ) वह प्ररूप, जिसमें धारा 35 की उपधारा (1) के अधीन अंकीय चिह्नक प्रमाणपत्र जारी किए जाने के लिए आवेदन किया जा सकेगा,

(ण) धारा 35 की उपधारा (2) के अधीन अंकीय चिह्नक प्रमाणपत्र जारी किए जाने के लिए प्रमाणकर्ता अधिकारी को संदाय की जाने वाली फीस;

(त) वह रीति, जिसमें धारा 46 की उपधारा (1) के अधीन न्यायनिर्णायक अधिकारी जांच करेगा;

(थ) वह अर्हता और अनुभव जो धारा 46 की उपधारा (3) के अधीन न्यायनिर्णायक अधिकारी के पास होगा;

(द) धारा 52 के अधीन पीठासीन अधिकारी के वेतन और भत्ते तथा उसकी सेवा से अन्य निबंधन और शर्त ;

(ध) धारा 54 की उपधारा (3) के अधीन पीठासीन अधिकारी के कदाचार और असमर्थता का अन्वेषण करने की प्रक्रिया;

(न) धारा 56 की उपधारा (3) अधीन अन्य अधिकारियो और कर्मचारियों के वेतन और भत्ते तथा सेवा की अन्य शर्त ;

(ऩ) वह प्रारूप, जिसमें धारा 57 की उपधारा (3) के अधीन अपील फाइल की जा सकेगी और उसके लिए फीस ;

(प) सिविल न्यायालय की कोई अन्य शक्ति, जिसका धारा 58 की उपधारा (2) के खंड

(फ) के अधीन विहित किया जाना अपेक्षित है; और

(ब) कोई अन्य विषय, जो विहित किया जाना है या विहित किया जाए।

(3) धारा 1 की उपधारा (4) के खंड (च) के अधीन केन्द्रीय सरकार द्वारा निकाली गई प्रत्येक शासकीय और अशासकीय सदस्य होगें जो मुख्य रूप से प्रभावित हितों का प्रतिनिधित्व करते हों अधिसूचना और उसके द्वारा बनाया गया प्रत्येक नियम उसके निकाले जाने या बनाए जाने के पश्चात् यशाशीघ्र संसद के प्रत्येक सदन के समक्ष, जब वह सत्र में हो कुल तीस दिन की अवधि के लिए रखी जाएगी/रखा जाएगा। यह अवधि एक सत्र में अथवा दो या अधिक आनुक्रमिक सत्रों में पूरी हो सकेगी। यदि उस सत्र के या पूर्वोक्त आनुक्रमिक सत्रों के ठीक बाद के सत्र के अवसान के पूर्व उस अधिसूचना या नियम में कोई परिवर्तन करने के लिए सहमत जो जाएं तो तत्पश्चात् वह ऐसे में परिवर्तित रूप में ही प्रभावी होगी/होगा। यदि उक्त अवसान के पूर्व दोनों सदन सहमत हो जाएं कि वह अधिसूचना नहीं निकाली जानी चाहिए या नियम नहीं बनाया जाना चाहिए तो तत्पश्चात वह निष्प्रभाव हो जाएगी/जाएगा। किंतु उक्त अधिसूचना या नियम के ऐसे परिवर्तित या निष्प्रभाव होने से उसके पहले की गई किसी बात की विधिमान्यता पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पडेगा।

88 (1) केन्द्रीय सरकार, इस अधिनियम के प्रारम्भ के पश्चात् तथाशीघ्र एक समिति का गठन करेगी जिसे साइबर विनियमन सलाहकार समिति कहा जाएगा।

(2) साइबर विनियमन सलाहकार समिति में एक अल्पक्ष होगा और उतनी संख्या में ऐसे अन्य या जिन्हें विषयवस्तु का विशेष ज्ञान हो, जो केन्द्रिय सरकार ठीक समझे।

(3) साइबर विनियमन सलाहकार समिति –

(क) केन्द्रिय सरकार को या तो साधारणतया किन्ही नियमों के संबध में या इस अधिनियम से संबध किसी अन्य प्रयोजन के लिए:

(ख) नियंत्रण को इस अधिनियम के अधीन विनियम बनाने में, सलाह देगी।

(ग) ऐसी समिति के अशाकीय सदस्यों को ऐसे यात्रा और अन्य भत्ते संदत्त किए जाएंगे, जो केन्द्रिय सरकार नियम करे।

89 (1) निंयत्रक, साइबर विनियमन सलाहकार समिति से परामर्श करने के पश्चात् और

केन्द्रिय सरकार के पूर्व अनुमोदन से, राजपत्र में अधिसुचना द्वारा इस अधिनियम के प्रयोजनों को क्रियान्वित करने के लिए इस अधिनियम और इसके अधीन बनाए गए नियमों से संगत विनियम बना सकेगा।

(2) विशिष्टतया और पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, ऐसे विनियमों में निम्नलिखित सभी या किन्ही विषयों के लिए उपबंध किया जा सकेगा, अर्थात:–

(क) धारा 18 के खंड (ढ़) के अधीन प्रत्येक प्रमाणकर्ता प्राधिकारी के प्रकटन, अभिलेख के युक्त डाटा संचय के अनुरक्षण से संबधित विशिष्टियां,

(ख) वे शर्ते और निर्बन्धन, जिनके अधीन रहते हुए नियंत्रक धारा व 19 की उपधारा; (1) के अधीन किसी विदेशी प्रमाणकर्ता प्राधिकारी को मान्यता प्रदान कर सकेगा;

(ग) वे निबन्धन और शर्त, जिनके अधीन रहते हुए धारा 21 की उपधारा (3) के खंड (ग) के अधीन कोई अनुज्ञप्ति अनुदत्त की जा सकेगी,

(घ) प्रमाणकर्ता प्राधिकारी द्वारा धारा के खंड (घ) के अधीन पालन किए जाने वाते अन्य मानक;

(ङ) वह रीति जिसमें प्रमाणकारी प्राधिकारी, धारा 34 की उपधारा (1) में विनिर्दिष्ट विषय प्रकट करेगा,

(च) विवरण की विशिष्टियॉ जो धारा 35 की उपधारा (3) के अधीन आवेदन के साथ संलग्न होगी; और

(छ) वह रीति जिसमें उपयोगकर्ता, धारा 42 की उपधारा (2) के अधीन प्रमाणकर्ता प्राधिकारी को प्राइवेट कुंजी गोपनीय न रह जाने की सूचना देना।

(3) इस अधिनियम के अधीन बनाया गया प्रत्येक विनियम, बनाए जाने के पश्चात् यथाशीघ्र, संसद के प्रत्येक सदन के समक्ष, जब वह सत्र में हो कुल तीस दिन की अवधि के लिए रखा जाएगा। यह अवधि एक सत्र में अथवा दो या अधिक सत्रों में पूरी हो सकेगी। यदि उस सत्र के या पूर्वोक्त आनुक्रमिक सत्रो के ठीक बाद के सत्र के अवसान पूर्व दोनों सदन उस नियम में कोई परिवर्तन के लिए सहमत हो जाए तो तत्पश्चात् वहा ऐसे परिवर्तित रूप में ही प्रभावी होगा। यदि उक्त अवसान के पूर्व दोनो सदन सहमत हो जाएं कि वह विनियम नही बनाया जाना चाहिए तो तत्पश्चात् वह निष्प्रभाव हो जाएगा। कितुं विनियम के ऐसे परिवर्तित होने से उसके अधीन पहले की गई किसी बात की विधिमान्यता पर प्रतिकूल प्रभाव नही पड़ेगा।

(1) राज्य सरकार, इस अधिनियम के उपबंधो को कार्यान्वित करने के लिए, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा नियम बना सकेगी।

(2) विशिष्टत्या और पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, ऐसे नियम निम्नलिखित सभी या किन्ही विषयों के लिए उपंबध कर सकेंगे. अर्थात् –

(क) वह इलेक्ट्रोनिक रूप जिसमें धारा की 6 उपधारा के अधीन फाइल करना, जारी करना, अनुदत्त करना, प्राप्त करना या संदाय करना किया जाएगा;

(ख) ऐसे विषयों के लिए जो धारा 6 की उपधारा (2) मे विनिर्दिष्ट किए जाएं;

(ग) कोई अन्य विषय जो राज्य सरकार द्वारा नियमों द्वारा उपंबीधत किए जाने के उपेक्षित है।

(3) इस धारा के अधीन राज्य सरकार द्वारा बनाया गया प्रत्येक नियम, इसके बनाए जाने के पश्चात् तथाशीघ्र जहां राज्य विधान–मंडल के दो' सदन हैं, वहा प्रत्येक सदन के समक्ष या जहां राज्य विधान–मंडल का एक सदन है वहां उस सदन के समक्ष रखा जाएगा।

91 भारतीय दंड संहिता का इस अधिनियम की पहली अनुसूची में विनिर्दिष्ट रीति से संशोधन किया जायेगा।

92 भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 का इस अधिनियम की दूसर अनुसूची में विनिर्दिष्ट रीति से संशोधन किया जायेगा।

93 बैंककार वही भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1891 का इस अधिनियम की दूसर अनुसूची में विनिर्दिष्ट रीति से संशोधन किया जायेगा।

94 भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम. 1934 का इस अधिनियम की दूसरी अनुसूची में विनिर्दिष्ट रीति से संशोधन किया जायेगा।

11.7 सारांश

राष्ट्रीय सूचना तकनीकी नीति में सभी मंत्रालयों और सरकारी दिमागों में कप्यूटरीकृत करने का प्रमुख ध्येय था। इसके अलावा योजनाओं और सरकारी कार्यो के प्रति नागरिकों के विचार इलेक्ट्रानिक तरीके से सरकार प्राप्त करना चाहती थी। इसके लिए सूचना कियोस्क, सरकारी बेवसाइट्स और सरकार व नागरिकों के मध्य सूचनाओं के आदान–प्रदान के लिए सम्पर्क की व्यवस्था की गई।

व्यक्तिगत वित्तिय सूचनाओं को बैंक से प्रदाता को स्थानान्तिरित करने और व्यक्तिगत चिकित्सा सूचनाओं को विशेषज्ञों से सलाह के लिए देने जैसे आदि अनेक व्यवस्थाओं के सुरक्षा और गोपनीयता बनाये रखने की समस्या सामने आयी।

इन बिन्दुओं के आधार पर ही साइबर कानून की आवश्यकता प्रतिपादित हुई जिसके बनने से निम्नलिखित नये मार्ग भी दिखाई दिये –

- साइबर अपराधों से बचाव;
- डिजिटल हस्ताक्षर आर इलेक्ट्रानिक तरीके से राशि का आदान–प्रदान;
- इन्टरनेट पर बौद्धिक सम्पति का अधिकार;
- इलेक्ट्रानिक गवर्नेन्स;
- भूमि रिकार्डस का कम्प्यूटरीकृत;
- उपभोक्ता सामानों की कोंडिग और बाट एवं माप अधिनियम में आवश्यक संशोधन।

दस्तावेजों की गोपनीयता

राष्ट्रीय सूचना तकनीकी नीति से देश में विकास के पथ पर तीव्र गति से चलने के लिए साइबर क्रांति आई। सूचनाओं का आदान–प्रदान कुछ सैकण्डों का कार्य हो गया है। अब कार्यालयों में कार्य भी पेपरलैस हो गया है। कम्प्यूटर युग में इलेक्ट्रानिक तरीके से ही सूचनाआं और दस्तावेजों का संधारण ओर आदान–प्रदान हो रहा है। वैश्वीकरण के युग में विकास की प्रतिस्पर्द्धा में अस्तित्व बनाये रखने के लिए सूचना तकनीक से जुडना आवश्यक है।

सूचनाआं के फैलते जाल और इन्टरनेट पर वेबसाइट की बढ़ती संख्या से इन इलेक्ट्रानिक सूचनाओं व दस्तावेजों की सुरक्षा में अपराधिक वृत्ति के लोगों ने सैंघ लगानी शुरू कर दी। साइबर अपराधों से बचाव ओर वैधिक रीति से इलेक्ट्रानिक तरीके से कार्य करने के लिए विधिक प्रावधान बनाए गये।

11.8 शब्दावली

साइबर स्पेश – कम्प्यूटर, कम्पयूटर प्रणाली और कम्प्यूटर नेटवर्क से सम्बन्धित कार्य

इन्टरनेट – **कम्प्यूटर में दूरसंचार नेटवर्किंग करके डाटा का आदान प्रदान करना**

अंकीय चिह्नक – **इलेक्ट्रानिक अभिलेख का अधिप्रमणीकरण**

इलेक्ट्रानिक नियमन – **इलेक्ट्रानिक अभिलेखों की विधि मान्यता**

11.9 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. भारतीय साइबर कानून की आवश्यकता प्रतिपादित कीजिए।
2. साइबर अपराध क्या है? विस्तृत रूप से बताए?
3. साइबर स्पेश के बारे में बताइए?
4. ई–कामर्स क्या है। सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम 2000 में वर्णित इसके प्रावधान को समझाइए।

11.10 संदर्भ ग्रंथ

1 सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000
2 द इण्डियन साइबर लों–सुरेश टी. विश्वनाथन
3 राजस्थान पत्रिका
4 दैनिक भारस्कर
5 दैनिक जागरण
6 जनसत्ता
7 राष्ट्रदूत
8 समाचार जगत
9 हिन्दुस्तान

इकाई 12

आतंकवाद

इकाई की रूपरेखा

12.0 उद्देश्य

12.1 प्रस्तावना

12.2 आतंकवाद की परिभाषा एवं अर्थ

12.3 आतंकवाद के प्रकार

12.4 अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में आतंकवादी संगठन

12.5 अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद को समझने का तीसरी दुनिया का दृष्टिकोण

12.6 11.9.2001 अमेरिका पर आतंकी आक्रमण के अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति पर प्रभाव

12.7 सारांश

12.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

12.9 संदर्भ ग्रन्थ

12.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- आतंकवाद की अवधारणा को समझ सकेंगे।
- आतंकवाद के प्रकारों को जान सकेंगे।
- आतंकवाद तर्क राजनीति के बीच संबंधों का विश्लेषण कर सकेंगे।
- आतंकवाद के प्रति विभिन्न दृष्टिकोणों को समझ सकेंगे।

12.1 प्रस्तावना

आतंकवाद पिछले चार दशक से अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति का एक महत्वपूर्ण पहलू है जिसने राष्ट्र–राज्य (Nation state) के राजनीति संचालन को सबसे अधिक प्रभावित किया है। आतंकवाद का प्रभाव वर्तमान में कई राज्यों पर गहरा है और इसके फलस्वरूप कई राज्यों में हिंसा, भय और तनाव का वातावरण रहता है, आतंकवाद से जुडे समूहों को अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के विश्लेषण में गैर राज्यकीय अभिनेता (Non state actor) कह कर सम्बोधित किया जा सकता है क्योंकि इनका कार्यक्षेत्र राज्य की तरह नहीं है और न ही ये राज्य की तरह अन्तर्राष्ट्रीय कानून, परम्परा और अन्य आचरणों से बाध्य हैं। वर्तमान में तो ये समूह उच्च तकनीक से सम्पन्न शस्त्रों से सुसज्जित हैं और शस्त्रों से जुड़े नियम इन पर लागू नहीं होते हैं। इन संगठनों का कार्यक्षेत्र सुनिश्चित नहीं है। ये विश्व स्तर पर अपनी गतिविधियाँ संचालित करते हैं और राष्ट्र–राज्यों के निर्णयों को प्रभावित करते हैं। अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में आतंकवाद के फलस्वरूप हिंसा की घटनाओं में वृद्धि हुई है और अधिकांशत: अवसरों

पर उन लोगों के विरूद्ध हिंसा को देखा जा सकता है जो बिल्कुल ही निर्दोष है। अन्तर्राष्ट्रीय कानून में आतंकवाद को परिभाषित करने का प्रयास ही नहीं किया गया है वरन् 1970 के दशक में कतिपय नियम बनाने का कार्य भी किया गया है जिसने आतंकवाद विरोधी नियमों का स्वरूप लिया है। एशियाई, अफ्रीकी, लेटिन अमेरीकी एवं हाल में अमेरिका भी इन घटनाओं से प्रभावित रहा है। भारत में आतंकवाद की घटनाएँ पिछले तीन दशकों में राजनीति और सामान्यजन को प्रभावित करती रही हैं। कई बडे शहर, धार्मिक स्थान ही नहीं वरन् भारत की संसद पर यह आक्रमण हो चुका है। आतंकवाद के विश्लेषण को व्यापक संदर्भो में समझना आवश्यक है।

12.2 आतकंवाद की परिभाषा एवं अर्थ

आतंकवाद क्या है? इसके बारे में बहुत सी भ्रांतियाँ हो सकती हैं। आतंकवाद एक विवादास्पद मसला है जिसने राष्ट्रीय राज्यों की स्थिरता व भौगोलिक अखंडता को प्रभावित किया है। साथ ही यह विश्व शांति एवं सुरक्षा के लिए भी दूरगामी दुष्परिणाम पैदा करने वाला है। आतंकवाद हिंसा का आपराधिक स्वरूप है। इससे तात्पर्य उस हिंसक कार्रवाई से है जो किन्हीं निहित राजनीति उद्देश्यों की पूर्ति के लिए की जा रही हो। इस प्रकार आतंककारी एक राजनीतिक इकाई के रूप में देखे जा सकते है। एक सोची–समझी चाल के रूप में आतंकवाद को देखा जा सकता है जो कि संगठित व प्रशिक्षित रूप में अपने लक्ष्यों की पूर्ति का प्रयास करते हैं। आतंकवाद अपने आप में एक साध्य नहीं अपितु साधन है–निश्चित उद्देश्य को प्राप्त करने का। हिंसा आतंकवाद का एक आवश्यक अंग बन गया है। यह हिंसा व्यक्ति के विरूद्ध हो सकती है तथा समाज के विरूद्ध अथवा राज्य के भी हो सकती है ।

ले. मेलिंन का कहना था कि – "'जब कूटनीतिज्ञ विफल हो जाते हैं तो सैनिक कार्यवाही करते हैं और जब सैनिक कार्यवाही विफल हो जाती है तो आतंकवाद हरकत में आते हैं। वस्तुत: समस्या यहीं से प्रारम्भ होती है जब आतंकवाद को विदेश नीति व कूटनीति के साधन के रूप में प्रयोग में लाना शुरू किया जाता है।" जो देश अपने हितों की पूर्ति के लिए आतंकवाद को बढ़ावा देने का प्रयास करते हैं वे वस्तुत: आतंकवाद के सशक्तिकरण का कार्य करते हैं। आतंककारी संगठन इसी की तलाश में रहते हैं। राष्ट्रीय हितों की पूर्ति के लिए आतंकवाद को सहारा देने में दो बातें समिलित रहती हैं। आतंककारी संगठनों को एक दूसरे के विरुद्ध खड़ा कर सामाजिक–राजनीतिक असंतोष पैदा करना आतंकवाद को राजा के विरूद्ध कर राज्य की शक्ति को क्षीण करना तथा राजनीतिक अस्थिरता पैदा करना।

आतंकवाद एक ऐसी मानसिकता है जिसमें आतंक, भय, दहशत और अन्य साधनों दारा लक्ष्यों की पूर्ति करने का सफल या असफल प्रयास किया जाता है। वैसे तो आतंकवाद की कोई सर्वमान्य परिभाषा नहीं है परन्तु इसको परिभाषित करने का प्रयास कुछ समीक्षकों ने किया है। इनको यहाँ उद्धत किया जा सकता है।

जी. पार्थसारथी (पाकिस्तान में भारत के पूर्व उच्चायुक्त)– "आतंकवाद एक भावना भी है और एक विचारधारा भी है। भावना के रूप में वह लोगों को संगठित करती है तथा विचारधारा के रूप में वह लोगों में आस्था पैदा करती है।"

के. आर. नारायणन (भारत के पूर्व राष्ट्रपति) – "निर्धारित लक्ष्यों एवं उद्देश्यों का संगठित–परिवर्तित होना आतंकवाद का द्योतक है।"

महात्मा गाँधी – "आदर्शवाद जब बिगड़ता है तो वह बीच का मार्ग न अपनाकर आतंकवादी बन जाता है। तब वह साधन एवं साध्यों को आतंक का पर्याय मानकर कार्य करता रहता है।"

ये परिभाषा आतंकवाद को समझने की एक दृष्टि है। एक अन्य अर्थ में आतंकवाद को इस प्रकार से भी समझा जा सकता है – आतंकवाद की कोई मानक परिभाषा नहीं होने के पीछे समझ यह है कि समय, परिस्थितियों

और आवश्यकताओं के अनुसार आतंकवाद के अर्थ में हेरफेर किया जा सके। 11 सितम्बर, 2001 के हादसे के बाद आतंकवाद की परिभाषा में आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए समय–समय पर काट–छाँट की गई। पहले तो यह कहा गया कि अमेरिकी नागरिकों के खिलाफ कहीं भी हिंसा की गीतिविधि आतंकवाद है। यदि ऐसी हिंसा किसी दूसरे देश के नागरिकों के साथ हो तो उसका कोई महत्व नहीं है। लेकिन जब इस परिभाषा पर कुछ ऐसे देशों द्वारा एतराज किया गया जिन्हें अमेरिका आतंकवाद उन्मूलन अभियान में अपने साथ रखना चाहता था तो परिभाषा को कुछ विस्तृत कर दिया गया। लेकिन यदि अमेरिका स्वयं इस प्रकार की गतिविधि में लिप्त हो तो उसे आतंकवाद नहीं कहा जा सकता है। यह भी देखने को मिला है कि उग्र एवं हिंसात्मक गतिविधियों के संलग्नवादी राज्य के आतंकवाद की भर्त्सना करते हैं पर स्वयं को आतंकवादी नहीं अपितु जेहादी या स्वतंत्रता सेनानी कहते हैं। राज्य स्वयं अपनी हिंसा को आतंकवाद नहीं मानता अपितु राज्य के अनुसार तो यह कार्यवाही राष्ट्रीय संप्रभुता की सुरक्षा के लिए है। कुछ विद्वान तो अब भूख, गरीबी, बेरोजगारी और पर्यावरण विनाश को भी आतंकवाद मानने लगे हैं।

इस अस्पष्टता की स्थिति में आतंकवाद की व्यवहारपरक परिभाषा आवश्यक है। समस्या की गंभीरता और साथ ही साथ व्यापकता को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि **राजनीतिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए व्यापक भय फैलाने हेतु कहीं भी और मुख्यतया नागरिक ठिकानों में हिंसा का प्रयोग या प्रयोग की धमकी ही आतंकवाद है।** यह गीतिविधि राज्य के द्वारा भी की जा सकती है, समूहों के द्वारा भी और एक व्यक्ति द्वारा भी। किसी राज्य के द्वारा ऐसी गतिविधि के लिए किसी व्यक्ति या समूह को सहयोग और संरक्षण भी प्रदान किया जा सकता है जिससे कि ऐसा राज्य किसी अन्य राज्य के विरुद्ध अपने राजनीतिक उद्देश्यों की प्राप्ति कर सके। यहाँ इस बात का महत्व नहीं है कि हिंसा करने वाले और उसे सहने वाले की पस्त, जाति, राष्ट्रीयता लिंग, धर्म आदि क्या है और न ही राजनीतिक उद्देश्य का महत्व क्या है, चाहे उस उद्देश्य का संबंध धर्म, राष्ट्रवाद, राष्ट्रीय–हित. राष्ट्रीय सुरक्षा, राष्ट्रीय एकता, राष्ट्रीय स्वाधीनता, लोकतंत्र, साम्यवाद, शाश्वत–न्याय या फिर स्थायी स्वतंत्रता से क्यों न हो। महत्व केवल इस बात का है कि हिंसा या खून का उद्देश्य ऐसी गीतिविधि की वास्तविकता को नहीं बदल सकता। हिंसा करने वाला व्यक्ति, समूह या राज्य यह कहकर अपनी आपराधिक प्रवृत्ति से मुक्त नहीं हो सकता कि यह तो समानोदक नाश (Collateral damage) है। जिस हिंसात्मक कार्य से बडे पैमाने पर मानव क्षति होती है ऐसा कार्य तो मानवता के विरुद्ध जघन्य अपराध है।

प्रश्न यहाँ पर यह उठता है कि कुछ ऐसी हिंसा भी है क्या जिसे आतंकवाद नहीं माना जा सकता। किसी भी आक्रामक सैनिक अभियान का सशस्त्र विरोध आतंकवाद की श्रेणी में नहीं आएगा और न ही किसी ऐसी हिंसा को आतंकवाद कहा जा सकता है जहाँ हिंसक इस यंत्र का सहारा इसलिए लेता है क्योंकि उसे विरोधी पक्ष ने उसके वतन से बेदखल कर दिया हो। फिलिस्तनियों द्वारा की जा रही कार्यवाही इसी श्रेणी में आती है। किसी ऐसे नेता की हत्या जो सामूहिक स्तर पर जातीय, नस्ली या अन्य किसी आधार पर लोगों को मौत के घाट उतार देता है या फिर उन्हें और कहीं भेज देता है–हिटलर, ईटी अमीन, पॉल पॉट इसी श्रेणी में आते हैं।

12.3 आतकंवाद के प्रकार

आतंकवाद आधुनिक विश्व की नवीनतम अवधारणा बनकर उभर रही है। आतंकवाद की प्रकृति विकृत होने के कारण इसमें स्वरूपों को निश्चित सीमा में तो नहीं बाँध सकते, परन्तु इसका सीमित विस्तार अध्ययन की दृष्टि से अवश्य किया जा सकता है। इसके प्रकारों को निम्न भागों ने बाँट सकते हैं –

(1) क्रांतिकारी आतंकवाद – राजनीतिक आतंकवाद के रूप को प्राय: आंदोलनकारी या निचले स्तर के आतंकवाद की संज्ञा दी जाती है। इसका प्राथमिक उद्देश्य राजनीतिक आर्थिक सत्ता को अव्यवस्थित करना या उसे उखाड़ फेंकना है। यह कार्य जनसमर्थन को उद्वेलित करके किया जाता है – चेचेन्या

गणराज्य, चीन में सिक्यांग प्रांत, तिब्बत में लामाओं का आंदोलन आदि इस प्रकार के आतंकवाद के प्रतीक हैं।

(2) प्रतिक्रियावादी आतंकवाद – यह भी आतंकवाद का ही एक रूप है जिसमें उसका लक्ष्य सुधारवाद का विरोध करना होता है और सुधार की प्रतिक्रिया स्वरूप अपने क्रियाकलापों का संचालन किया जाता है। इस विचारधारा के समर्थक चेग्वेवारा को माना गया है। ईरान की इस्लाम क्रांति और पाकिस्तान में पनप रही मजहबी कट्टरता इसके उदाहरण माने जा सकते हैं।

(3) पुरातनपंथी आतंकवाद – इस तरह के आंतकवाद का उद्देश्य पुरानी व्यवस्था की पुनर्स्थापना करना होता है और मुख्यत: इनका विरोध प्रगतिशील एवं क्रांतिकारी शक्तियों के खिलाफ होता है। पाकिस्तान और ईराक के उलेमाओं के बढ़ रहे प्रभाव को इसका प्रतीक मान सकते हैं।

(4) साम्राज्यवाद विरोधी आतंकवाद – इस तरह के आतंकवाद को लेकर विद्वानों में मतभेद है और कुछ विचारकों का मानना है कि साम्राज्यवाद से मुक्ति के लिए किया जाने वाला व्यवस्थित या अव्यवस्थित संघर्ष आतंकवाद की श्रेणी में नहीं आता, जबकि कुछ विचारक इसके खिलाफ हैं। कुछ भी हो, स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान भारतीय स्वतंत्रता सैनानियों का संघर्ष इस श्रेणी में आता है। इसके अतिरिक्त लेटिन अमेरीकी राष्ट्रों में साम्राज्यवाद विरोधी आतंकवाद का मिश्रित रूप देखने को मिलता है

(5) राज्य आतंकवाद – जनता पर असाधारण शक्ति का दबाव डालना जिससे कि आंदोलन चलाने की इच्छा को तोड़ा जा सके, इसे ही राज्य आतंकवाद कहते हैं। कई बार पंजाब, जम्मू–कश्मीर और उत्तरी पूर्वी राज्यों में कुछ पुलिस और सैनिक पद्धतियों के अपनाने पर इस तरीके का प्रयोग होता है क्योंकि पुलिस एवं सेना को जनता पर असहनीय अत्याचार करने की छूट इसमें रहती है।

यदि पुलिस एवं सेना को आतंकवादियों/उग्रवादियों को आतंकित करने के लिए आज्ञा दी जाती है तो इसे भी आतंकवाद का ही एक रूप माना जाएगा क्योंकि इससे आतंकवादियों/उग्रवादियो के कुत्सित प्रयासों से जनता को नुकसान उठाना पड़ता है। उदाहरण–इजराइल, श्रीलंका, भारत, रूस, पाकिस्तान आदि राष्ट्रों के प्रांतों में यह रूप थोड़ा बहुत देखने को अवश्य मिल जाएगा।

(6) राज्य प्रायोजित आतकंवाद – इसमें आतंकवाद का प्रयोग सीमा पार से सीमा को अव्यवस्थित करने एवं दूसरे राज्य की शक्ति को कमजोर करने के लिए किया जाता है। इसमें क्रांतिकारी/उग्रवादी/आतंकवादी को दूसरे देशों द्वारा प्रेरित एवं प्रायोजित किया जाता है। पंजाब, जम्मू–कश्मीर एवं उत्तरी पूर्वी भारत के राज्यों के मामलों में पाकिस्तान हमेशा प्रायोजक राष्ट्र की भूमिका निभाता रहा है। वर्तमान में आतंकवादियों द्वारा 1 अक्टूबर को श्रीनगर विधानसभा के गेट के बाहर विस्फोट करवाना, 13 दिसम्बर को संसद पर हमला और 22 जनवरी को कोलकता में अमेरिकी सूचना केंद्र पर हमला करवाने के मामले में ठोस एवं पुख्ता प्रमाण उपलब्ध हुए हैं।

(7) धार्मिक आतंकवाद – इसमें आत्म–त्याग या कठोर नैतिक–कूट जो कि एक विशेष धार्मिक समुदाय से संबद्ध होते हैं, में विश्वास रखा जाता है। इस तरह के आतंकवाद में हिंसा को मुक्ति का मार्ग माना जाता है। इसमें राष्ट्रीय लाभ की परवाह नहीं की जाती है। पाकिस्तान में शिया और सुन्नी समुदायों का झगड़ा, भारत में ईसाई मिशनरियों पर हमला और बांग्लादेश में अल्पसंख्यक हिन्दुओं की हत्या इस प्रकार के आतंकवाद का प्रतीक बन गए हैं।

अपने सार रूप में आतंकवाद भीड़ भरी हिंसा और जनविद्रोह से भी भिन्न है। मौब वायलेंस (भीड़ हिंसा) एक असुनियोजित व अनियंत्रित आंदोलन है जो किसी त्वरित प्रेरणा से मार्गदर्शन लेता है, जो समझदारी भरा कार्य नहीं होता है और न ही निर्धारित कार्यक्रम पर निर्भर होता है। जनविद्रोह आवश्यक नहीं कि पूर्व चिंतनीय हो और

यह सामान्यत: बिना किसी विशेष प्राथमिक तैयारी के ही उत्पन्न होता है। यद्यपि आतंकवाद अपनी पद्धति के रूप में इन दोनों' का प्रयोग कर सकता है।

12.4 अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में आतंकवादी संगठन

आतंकवाद से जुड़े विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों को समझना आतंकवाद को समझने के लिए विशेष रूप से उपयोगी रहेगा। इस दृष्टि से कुछ संगठनों का परिचय आतंकवाद से जुड़े समूहों के आधारों और गतिविधियों को स्पष्ट करते हैं और यह भी समझ विकसित करते हैं कि इन संगठनों के स्वरूप धार्मिक हैं और विभिन्न देशों के युवा समूह इनसे जुडे हैं जो व्यापक असंतोष और नाराजगी के प्रतीक तो हैं ही।

इस्लामिया ग्रुप (आईजी) – इस्लामिया ग्रूप का पूरा नाम अलगामात अल इस्तामिया है। यह एक कट्टरपंथियों का इजिप्टियन ग्रुप 1970 के उत्तरार्द्ध में अस्तित्व में आया। इसका संचालन और प्रबंधन मजबूत नहीं है। न ही इसका कोई प्रमुख संचालक है। लेकिन शेख उमर अब्दुल्ला रहमान इस ग्रूप का सर्वमान आदरणीय आध्यात्मिक गुरु है। इस संगठन का मुख्य लक्ष्य होस्नी मुबारक की सरकार को मिस्र की सत्ता से हटाकर इस्लामिक संगठन से संबंधित किसी इस्लामिक सरकार की स्थापना करना है। इस संगठन ने मिस्र के सैन्य बलों, महत्वपूर्ण सरकारी अधिकारियों और इस्लामिक कट्टरता के विरोधी लोगों को अपना निशाना बनाया है। इसकी गीतविधिया गरीब, बेरोजगार और कम पढे–लिखे लोगों को अपने संगठन से जोड़कर उनसे कार्य करवाना है वैसे यह संगठन मुख्य रूप से दक्षिण मिस्र में ही अधिक मजबूत आधार लिए हुए है

हिजबुल्लाह – हिजबुल्लाह को कई नामों से बुलाया जाता है जैसे पार्टी ऑफ गॉड, इस्लामिक जेहाद, रिवोल्यूशनरी जस्टिस आर्गेनाइजेशन और इस्लामिक जेहाद फार द लिबरेशन ऑफ फिलीस्तीन। इस संगठन की स्थापना लेबनान के शिया मुसलमानों ने की है। यह संगठन लेबनान में ईरान की तरह एक इस्लामिक गणतंत्र स्थापित करना चाहता है। यह माना जाता है कि अमेरिका के खिलाफ हुए कई आतंकशदी हमलों के लिए यह संगठन जिम्मेदार है। इसमें अक्टूबर, 1983 और सितम्बर 1984 में बेरूत में अमेरीकी दूतावास और यू.एस.मेरीन बेरेक में हुए बम विस्कोट भी शामिल हैं। इस संगठन की हिंसक गीतविधिया विशेष रूप से बेरूत के दक्षिण में स्थित उपनगर बेत्कावैली और दक्षिणी लेबनान में होती है। इसके अलावा यह यूरोप, अफ्रीका, दक्षिण अफ्रीका और उत्तरी अमेरिका तक फैला हुआ है। मदद के तौर पर ईरान हर तरह से सब कुछ करता है।

आम्र्ड इस्लामिक संगठन (जी.आई.ए.) – यह संगठन अल्जीरिया में सक्रिय है, जो अल्जीरिया में स्थापित धर्मनिरपेक्ष सरकार के स्थान पर इस्लामिक राज्य की स्थापना करना चाहता है। इसने अपनी गतिविधियों का प्रारम्भ 1992 में किया था जब अल्जीरिया की जनता ने वही की सबसे बड़ी इस्लामिक पार्टी इस्मिक सालवेशन फ्रंट का दिसम्बर 1991 में हुए आम चुनावों में विजय प्राप्त करने पर उसे अमान्य घोषित कर दिया था। इस संगठन 'की गतिविधियों का क्षेत्र अल्जीरिया है। 1994 में फ्रांस के एक विमान का अपहरण व 1995 के दौरान फ्रांस में हुए एक बम विस्फोट में इसी का हाथ माना जाता है। इस संगठन को अल्जीरिया से बाहर जाकर बसे मुस्लिमों से सहायता प्राप्त होती है। इसके अलावा अल्जीरिया सरकार का यह मानना है कि ईरान व सूडान द्वारा भी इसे मदद पहुँचाई जाती है।

हमास या इस्लामिक रेसिंस्टेंस मूवमेंट – हमास की स्थापना 1987 में मुस्लिम – ब्रदर हुड की फिलीस्तीनी ब्रांच के धीरे–धीरे बढ़कर काफी शक्तिशाली हो जाने के कारण हुई थी। इस संगठन ने अपनी इजराइल विरोधी नीति और उसकी धरती पर इस्लामिक फिलीस्तीनी राज्य की स्थापना की। इसने अपनी योजना को साकार करने के लिए राजनीतिक स्तर के अलावा आतंकवादी गतिविधियों का भी सहारा लिया है। लेकिन यह ठीक से संगठित संगठन नहीं है। इसके सदस्य मस्जिदों और समाजसेवी संगठनों के साथ काम कर सदस्यों की भर्ती, चंदा एकत्रित करना गतिविधियों का संचालन करना और अन्य लोगों को अपने संगठन से जोड़ने के लिए

नई–नई योजनाएं बनाने का काम करते हैं। यह संगठन वेस्ट बैंक और गाजा पट्टी क्षेत्रों में काफी मजबूत स्थिति में है, साथ ही राजनीतिक रूप से भी सक्रिय है। हमास अपने आधुनिक हथियारों की सहायता से अब तक कई इजराइली सैनिक और रिहायिसी क्षेत्रों को निशाना बना चुके है और इनकी गतिविधियों का प्रमुख क्षेत्र भी इजराइल और जॉर्डन ही है। इस संगठन को अपनी गतिविधियों को संचालित करने के लिए फिलीस्तीन छोड़कर बाहर जा बसे प्रवासियों के अलावा ईरान और सऊदी अरब के कुछ अरबपतियों से मदद प्राप्त होती है।

अल–जिहाद – इस संगठन के कई नाम हैं जैसे जिहाद ग्रुप, वेनगार्ड्स ऑफ कान्कवेस्ट, तालाह जिहाद ग्रुप अल फतेह, इंटरनेशनल जस्टिस ग्रुप, वर्ल्ड जस्टिस ग्रुप आदि हैं। यह मिस्र का उग्रवादी संगठन 1970 से सक्रिय है। इसका मुख्य उद्देश्य मिस्र के राष्ट्रपति होस्नी मुबारक को सत्ता से हटाकर पूर्व इस्लामिक राज्य की स्थापना करना था। इसने अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए मिस्र सरकार के वरिष्ठ अधिकारियों पर हमले कर उन्हें खत्म किया है।

डोमेस्टिक फ्रंट फॉर द लिबरेशन ऑफ फिलीस्तीन – यह एक मार्क्सवादी संगठन है। इसका जन्म 1969 में पीएफएलपी से अलग होने पर हुआ है। यह संगठन 1993 में निर्धारित किए गए डिक्लेरेशन ऑफ प्रिसीपल्स (डीओपी) का विरोधी है। 1991 में यह दो हिस्सों में विभाजित हो गया था–एक अराफात समर्थक और दूसरा कट्टरपंथी नईफ हवतमाह समर्थक। एक संगठन इजराइल में हुए रुई बम विस्फोटों और हिंसक घटनाओं के लिए जिम्मेदार है। यह इजराइल और पीएलओ के बीच शांति समझौता होने के सख्त खिलाफ है। इसकी गतिविधियों का क्षेत्र सीरिया, लेबनान और इजराइल अधिकृत क्षेत्र है। इसे सीरिया व लीबिया से आर्थिक और आधुनिक हथियारों की मदद मिलती है।

बास्वा फादरलैंड फंड लिंबर्टी – यह संगठन मार्क्सवादी विचारधारा से प्रभावित है। इसकी स्थापना 1959 में हुई थी। इसका लक्ष्य है स्पेन के बास्का क्षेत्र को स्वतंत्र राज्य का दर्जा प्रदान करवाना। इस संगठन ने कई शासकीय कार्यालय, महत्वपूर्ण इमारतों को बम विस्फोटों से नष्ट कर दिया एवं महत्वपूर्ण लोकप्रिय व्यक्तियों पर हमले किए। यह संगठन फ्रांस द्वारा अपने खिलाफ कार्यवाही में स्पेन सरकार का सहयोग देने के कारण फ्रांस से भी नाराज है। यह अपहरण फिरौती, डकैती, सुपारी लेकर कत्ल करने जैसे काम कर अपने संगठन के लिए धन एकत्रित करता है। यह संगठन मुख्यत: उत्तरी स्पेन में स्थित बास्वा क्षेत्र और दक्षिण–पश्चिम फ्रांस में अपनी गतिविधियों का संचालन करता है। इसके सदस्यों को समय–समय पर लीबिया, लेबनान और निकारागुआ में प्रशिक्षण प्राप्त होता रहता है तथा आईरिश रिपब्लिक आर्मी (आई.आर.एफ) के साथ भी इसके बहुत अच्छे संबंध हैं।

चुकाकुंदा – ई. 1957 में इस अतिवादी संगठन का जन्म जापानी कमुनिस्ट पार्टी के विभाजन के फलस्वरूप हुआ है। यह जापान का सबसे अधिक शक्तिशाली संगठन है। इसका एक कार्यकारी ग्रुप 'कंसाई रिशेत्युशनरी आर्मी हिंसक कार्यो को अंजाम देता है। इसकी आय मुख्य रूप से सदस्यता शुल्क, अखबार की बिक्री व चंदा प्राप्त करने से है। यह संगठन आंदोलन करने के अलावा रॉकेटों और आग्नेय अस्त्रों के द्वारा हमला कर अपना वर्चस्व कायम करने की कोशिश में लगा रहता है। यह जापान की शाही व्यवस्था, पश्चिमी आतंकवाद और टोक्यो के नारिटा एयरपोर्ट के विस्तार के खिलाफ है। वैसे इसकी गतिविधियों का केन्द्र जापान ही है।

द फिलीस्तीन इस्लामिक जेहाद (पीआईजे) – पीआईजे की स्थापना ई. 1970 में गाजा पट्टी में फिलीस्तीनी आतंकवादियों द्वारा की गई थी। यह संगठन कई छोटे–छोटे आतंकवादी गुटों का एक समुदाय है। यह संगठन एक इस्लामिक फिलीस्तीन राज्य की स्थापना और पवित्र युद्ध के जरिए इजराइल कीं खत्म करने के लिए अपने अभियान के तहत पूरी सक्रियता के साथ कार्य कर रहा है। अमेरिका द्वारा इजराइल को समर्थन दिए जाने के कारण पीआईजे अमेरिका से बहुत नाराज है और उदारवादी अरब सरकार का भी विरोधी है। 1995 में

अपने नेता फातही शकाकी की मालटा में हत्या हो जाने के बाद अमेरिका और इजराइल से प्रतिशोध लेने के लिए धमकाता रहता है एवं इजराइल में कई विस्फोट किए हैं। इसका कार्यक्षेत्र मुख्य रूप से इजराइल, जार्डन एवं लेबनान के अलावा मध्य–पूर्व के कई देश है। इसके सबसे अधिक केम्प सीरिया में हैं। इसे बाहरी मदद ईरान और सीरिया से मिलती हे।

अबु सयाफ ग्रुप (एएफजी) – इसकी स्थापना ई. 1991 में मोरो लिबरेशन फ्रंट से अलग होने के बाद हुई। यह इस्लामिक ग्रुप अर्डरज्जाक अबूबकर जाजलानी के नेतृत्व में दक्षिण फिलीपीन्स में कार्यरत है। इसकी गतिविधियाँ दक्षिणी फिलीपीन्स में सक्रिय हैं और यह धन एकत्रित करने के लिए अपहरण, फिरौती वसूली, व्यापारियों और कम्पनियों से पैसा वसूली आदि करता है। फिर इस प्राप्त धनराशि का उपयोग वह दक्षिणी फिलीपीन्स में स्थित मुस्लिम बहुल द्वीप मिडांनाओ को स्वतंत्र इस्लामिक राज्य में बदल सके, इसके लिए करता है। इसके अलावा संभवत: इसे मध्यपूर्व में स्थित इस्लामिक कट्टरपंथी संगठनों द्वारा भी सहायता प्राप्त होती है।

अयूम सुप्रीम टुथ (अयूम शिनरिकयो) – यह संगठन शोको असहारा द्वारा ई. 1987 में बनाया गया था। इस उद्देश्य के साथ ही वह पहले जापान और बाद में सारी दुनिया पर राज करेगा। 1989 में जापानी नियम के तहत धार्मिक संगठन घोषित किए जाने के बाद 1990 में हुए चुनाव में 'भाग लिया था परंतु 1995 में सरकार ने इसकी मान्यता यह कहकर समाज कर दी कि यह एक धार्मिक संगठन है। इस संगठन ने मार्च 1995 में छह जहरीली गैस से मरे पैकेट टोक्यो सब–वे ट्रेनों में रखकर छतों की जोक से इनमें छेद करके जहरीली गैस चारों ओर फैला दी। इस हादसे में 12 लोगों की मृत्यु हो गई थी। इसकी गतिविधियों का क्षेत्र बहुत विस्तृत है। जापान के अलावा यह आस्ट्रेलिया, रूस, यूक्रेन, जर्मनी, ताईवान, श्रीलंका, पूर्वी यूगोस्ताविया और अमेरिका तक फैला हुआ है। वैसे इसे बाहर से कोई मदद प्राप्त नहीं होती।

रिवाँल्यूशनरी ऑर्गेनाइजेशन 17 नवम्बर – 17 नवंबर को ग्रीस में सैनिक शासन के विरुद्ध सशस्त्र आंदोलन प्रारम्भ किया गया था इसलिए 17 नवम्बर के नाम से जाना जाता है। वैसे यह 1975 में स्थापित वामपंथी संगठन है। यह संगठन ग्रीस, तुर्की और नाटो विरोधी है और यह अमेरीकी अड्डों को बेदखल करना, साइप्रस से तुर्की सेना को बाहर करना और ग्रीस का नाटो एवं यूरोपीय संघ से संबंध खत्म करवाना चाहता है। इन कार्यो को अंजाम देने के लिए इसे संभवत: ग्रीस के कई अन्य उग्रवादी संगठनों का सहयोग प्राप्त है। इसकी गतिविधियों में कई हत्याएं, बम विस्फोट आदि शामिल हैं। इसकी इन गतिविधियों का केंद्र एथेंस है। वैसे अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में आतंकवादी समूह लगातार बनते रहते हैं और इनकी सूची बदलती रहती है। यही नहीं, इनके हिंसात्मक रूप भी बदलते रहे हैं।

12.5 अंतराष्ट्रीय आतंकवाद को समझने का तीसरा दुनिया का दृष्टिकोण

1970 के दशक में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर आतंकवाद का प्रयोग विभिन्न राज्यों के अपने–अपने क्रांतिकारी एजेंडा को लागू किए जाने के लिए किया जा रहा था और तीसरी दुनिया के, विशेषकर लेटिन अमेरिका, अफ्रीका के कई राज्य, यह प्रश्न भी उठा रहे थे कि आतंकवाद अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर असमानताओं को दूर करने के लिए और विभिन्न व्यावस्थाओं के दबावों को समाप्त करने के लिए किया जा रहा है और जब विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय मंच अन्तर्राष्ट्रीय कानून का निर्माण करने में जुटे थे तब बहस का एक बड़ा हिस्सा इसी विचार में बंटा हुआ था और अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय ने यह निर्णय किया कि आतंकवाद से लड़ने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय विधि के क्षेत्र को व्यापक किया जाए और यह भी निर्णय लिया कि अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर उन अभावों और असमानताओं को दूर किया जाए जिसने अन्तर्राष्ट्रीय संबंधों को तनावपूर्ण बनाया है।

1970 के दशक की बहस में यह बात भी बहुत स्पष्ट रूप से उभरकर सामने आई थी कि लोग अपने लिए न्याय की मांग के लिए, राज्य पर दबाव बनाने के लिए, राजनयिक और अन्य नागरिकों को अपना निशाना बनाते

हैं जिससे उन्हें अपने संघर्ष के प्रति विश्व का ध्यान आकर्षित करने का अवसर प्राप्त होता है किन्तु इस बीच यह प्रश्न भी उठाया गया कि जिन लोगों को वे अपना निशाना बना रहे है आवश्यक नहीं है कि वे इतने महत्वपूर्ण हों कि सरकार उनके लिए आतंकवादियों की बात सुन लें। साथ ही 'साथ यह प्रश्न भी बार–बार उठाया गया कि सजग और जागरूक समूह अपने अधिकारों के लिए उन नागरिक समूहों के अधिकारों का हनन कर रहे हैं जो निर्दोष हैं, निरीह हैं। इन नागरिकों के अपने–अपने अधिकार हैं और उनके उल्लंघन का अधिकार किसी को नहीं है। पिछले दो दशक इन नियमों के निर्माण और प्रभावी होने के बीच गुजर गए, किंतु इसी काल खण्ड में आतंकवाद के स्वरूप और संचालन में पूरी तरह से स्थितियां बदल गई।

वर्तमान में आतंकवाद के दो स्वरूप तो नजर आ ही रहे हैं। एक आतंकवाद का वह रूप है जहाँ राज्य अपने अस्तित्व को बनाए रखने के लिए अपने ही विभिन्न नागरिक–समूह से संघर्षरत है। उसकी सेवाएँ और राज्य सत्ता के सारे अंग इन समूहों को दबाने में व्यस्त हैं। राज्यों के आंतरिक संघर्ष में राज्य के सम्मिलित हो जाने से हिंसा का स्वरूप बदल जाता है और प्रतिस्पर्द्धा अधिक रक्त–रंजित हो जाती है। विकासशील देशों में यह प्रक्रिया बहुत ही सामान्य सी है क्योंकि राज्य की सत्ता न केवल कमजोर है वरन् उसे कई आंतरिक समूहों से भी संघर्षरत रहना होता है जिसके फलस्वरूप सामान्य राजनैतिक प्रक्रियाएँ लगभग नहीं के बराबर है । इसमें राजनैतिक सहभागिता की जो कमी आती है उसके फलस्वरूप राज्य में रह रहे विभिन्न समूहों के बीच पारस्परिक संवाद समाप्त हो जाता है और उसका स्थान लगातार चलने वाली हिंसा ले लेती है। श्रीलंका में। यह प्रक्रिया तमिल समूहों और वहाँ रह रहे विभिन्न समूहों के बीच लम्बे समय से चल रही है। इस प्रक्रिया में राज्य का विरोध तमिल समूहों से है और यही कारण है कि श्रीलंका में आंतरिक हिंसा इतने व्यापक स्तर पर है।

आंतकवादियों का दूसरा समूह वह है जो अन्य राज्यों से दूसरे राज्यों में लगातार हिंसा को संचालित कर रहे हैं। इस वर्ग में पाकिस्तान को सम्मिलित किया जा सकता है। काश्मीर में हो रही लगातार हिंसा इसका ही परिणाम है। इस स्थिति का एक परिणाम यह भी है कि संघर्ष लम्बे समय तक चलता है। लगातार जन हानि होती रहती है और कम कीमत पर तनाव और लम्बे समय तक आंतरिक स्थितियों में हस्तक्षेप बने रहने की संभावना होती है। यह स्थिति पाकिस्तान द्वारा लगातार काश्मीर को लेकर बनी हुई है। जिसके फलस्वरूप काश्मीर ही नहीं सारे भारत में तनावपूर्ण स्थितियां विद्यमान हैं। यह स्थिति 1990 के दशक से चल रही है। इतने लम्बे तनाव को सहने की क्षमता सामान्यत: किसी देश में नहीं होती है और यदि वह अवरोध विकसित भी किया जाए तो उसकी कीमत वहीं रह रहे जन सामान्य को ही देनी होती है। भारत–पाक इस तनाव के फलस्वरूप लगातार मानवीय संसाधनों के विकास में अभावों को झेल रहे हैं। दोनों देशों के सैनिक व्यय में लगातार वृद्धि हो रही है और जो संसाधन जनसुविधाओं के विकास में लगने चाहिए थे वे सैन्य तैयारियों में लग रहे हैं।

अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर आतंकवाद की घटनाओं के नए संदर्भ में व 11 सितम्बर, 2001 और 13 दिसंबर, 2001 की घटनाओं को समझना आवश्यक है। यह समझ दो कारणों से बहुत जरूरी है। पहली तो इसलिए कि 11 सितंबर वाली घटना ने जिसमें विश्व व्यापार केंद्र और पेन्टागन पर हमला हुआ वह मूलत: अमेरिका के प्रतिष्ठा प्रतीक थे और अंतर्राष्ट्रीय प्रभुत्व के सभी मानकों के होते हुए भी यह आक्रमण इस बात को स्पष्ट करता है कि पूर्ण सुरक्षा का कोई अर्थ नहीं है। दूसरी, अमेरिकी प्रतिक्रिया थी जिसने आतंकवाद के प्रश्न पर अपनी प्राथमिकताओं को अन्तर्राष्ट्रीय प्राथमिकता बना दिया और उसी के अनुरूप अन्तर्राष्ट्रीय राजनय और नए समीकरणों का निर्माण किया। इस प्रसंग में अन्य देशों के साथ जो अमेरिका संबंध बने उसमें अमेरिकी हित ही प्रमुख निर्धारक थे और अन्य देशों की चिताएँ तो बहुत निचली प्राथमिकताओं पर थी। भारत के संदर्भ में यह घटना आतंकवाद के हमारे लम्बे संघर्ष की याद तो थी ही, पाकिस्तान के साथ हमारे आतंकवादी इतिहास को व्यापक अन्तर्राष्ट्रीय एजेंडा पर

प्रस्तुत करना भी था। पाकिस्तान अपनी सामरिक स्थिति के कारण एक बार फिर आतंकवाद से लड़ रहे समूह की अग्रणी पंक्ति में था। अपने परम्परागत दृष्टिकोण में बदलाव के लिए भी पाकिस्तान इस राजनय में आगे ही रहा।

13 दिसम्बर, 2001 को भारतीय संसद पर आतंकवादी हमला, हमारे लिए हमारी सत्ता के सर्वोच्च प्रतीक पर आक्रमण था। पाकिस्तान इस हिंसा में जुड़ा है–हमारे यहाँ यह अहसास होने में समय नहीं लगा। हमारे यहाँ पाकिस्तान के प्रति नाराजगी और एक उचित सैनिक कार्यवाही की माँग जनमत के स्तर पर हमेशा की तरह अत्यधिक मुखर थी, किंतु भारतीय नेतृत्व सारी घोषणाओं और सैन्य तैयारी के आभास के मध्य केवल राजनयिक दबावी बनाने में ही सफल रह पाया। सैन्य कार्यवाही का आभास और राजनयिक दबाव के लिए निरन्तर दबाव– इन दो स्थितियों में ही हमारे विकल्प निहित हैं। राजनयिक दबाव अंतर्राष्ट्रीय राजनीति के परिणाम हैं और सैन्य तैयारी का आभास आंतरिक राजनीति की अनिवार्यता।

आतंकवाद से जुड़े बहुत सारे प्रश्न तो हमारी अपनी आंतरिक राजनीति की आवश्यकताओं से जुडे है। आतंकवाद से जुडे सारे अंतरराष्ट्रीय संदर्भो में यह याद रखना अनुचित नहीं है कि एक ओर अंतरराष्ट्रीय संबंधों में संस्कृतियों की टकराहट के व्याख्याकार इस्लाम और उससे संघर्षरत समूह के बीच टकराहट की बात करते है। वैसे यह व्याख्या हर समाज में उन समूहों को शक्ति पहुँचाती है जो आतंकवाद के धार्मिक पक्ष को जोड़ते हैं किन्तु वही वे समूह भी प्रभावी हैं जो आतंकवाद को संस्कृति और धर्म से अलग हटकर देखना चाहते हैं। अंतरराष्ट्रीय संबंधों को धर्म के आधार पर संचालित मानना बहुत उपयोगी नहीं है। इस बीच वे सब तर्क जो राष्ट्र राज्यों के व्यापार, आर्थिक हित और विशेषकर तेल से जुड़े हैं, यह याद दिलाने के लिए पर्याप्त हैं कि मात्र धर्म के आधार पर ही अंतर्राष्ट्रीय संबंधों की व्याख्या काफी नहीं है।

आतंकवाद के फलस्वरूप 2001 –2002 में सबसे गंभीर परिणाम तो उन देशों पर हैं जिनकी अर्थव्यवस्था नाजुक है और पिछले लम्बे समय से जहां आर्थिक गीतिविधिया लगातार कम होती जा रही हैं। इन घटनाओं ने व्यापार को सीमित किया है और नई प्राथमिकताओं ने उन्हें और अधिक पीछे कर दिया है। विकासशील देशों में स्थितियां और भी यदि अधिक भयावह है क्योंकि यहाँ आर्थिक अभाव अन्य कई स्थितियों को जन्म देते हैं, किन्तु संकटकालीन स्थितियों में विशेषकर यदि राज्य के अस्तित्व से वे प्रश्न जुड़े हैं तो राष्ट्रीय सुरक्षा और अस्तित्व के प्रश्न सर्वाधिक महत्वपूर्ण हो जाते हैं और उसमें यादे आर्थिक गतिविधियाँ पिछड़ भी जाएं तो अपने अस्तित्व के प्रश्न से अधिक तो दे कभी नहीं हो सकते हैं। भारत की स्थिति भी इससे अलग नहीं है। यों आर्थिक स्थितियों की लम्बी अवहेलना संभव नहीं है।

संकटकालीन स्थितियों में सुरक्षा के मामले सर्वोच्च हो जाते हैं। इस प्रश्न पर कोई भी अभाव रूचिकर नहीं माना जाता है। किंतु यह अक्सर इस बात के महत्व को तो कम नहीं करता कि हमारे यहाँ लगातार अभाव है और उन अभावों के चलते हुए हम लगातार पिछड़ते जाते हैं।

यह अवसर हमें एक और दृष्टि से सोचने को बाध्य करता है कि सामरिक शस्त्रों की दृष्टि से जो बडे व्यापारी देश है वे एक बार फिर अपनी उच्च सैन्य क्षमताओं का परिचय दे चुके हैं। वैसे वे अपने भण्डारों को एक बार खाली कर चुके हैं, क्योंकि 1990–91 में खाडी युद्ध के बाद यह फिर एक अवसर था जबकि वे अपने शस्त्रों का प्रयोग कर सके। वैसे वर्तमान में सैन्य सामग्री का भंडारण मुख्य समस्या है। इसीलिए यह अवसर मुख्य सैन्य व्यापारी देश अमेरिका के लिए ऐसा अवसर तो था ही। हमारे जैसे देश के लिए यह एक ऐसा अवसर रहा जब हम नए सैन्य आयुधों की क्षमता से प्रभावित हैं और खरीदने के लिए तत्पर भी। ऐसी स्थिति में सैन्य व्यापार से जुड़े देशों के लिए यह अपने प्रभुत्व के साथ–साथ अपने व्यापार को बढ़ाने का भी अच्छा अवसर है। ऐसे राष्ट्रों के संपन्न होने के अवसर और हमारे आर्थिक रूप से पिछडे रह जाने के अवसर लगभग एक साथ ही आते हैं।

आतंकवादी संगठनों का संचालन बहुत लम्बे समय तक एक क्रांतिकारी रोमांच से जुड़ा रहा है, किन्तु पिछले कुछ समय से यह विचार एक सैन्य उद्योग और माद्रक द्रव्यों के व्यापार से जुड गया है। इस दृष्टि से 1970 के आतंकवादी समूह मूलत: वैचारिक रूझानों से जुडे थे, इसके विपरीत वर्तमान में जो समूह हैं वे धार्मिक कट्टरवाद से जुडे होने के साथ–साथ आर्थिक हितों से भी जुड़े हैं। यही नहीं, ये वे समूह भी हैं जो शस्त्रों के व्यापार से भी गहरा संबंध रखते हैं। इन समूहों को सुविधा यह भी है कि वे चाहे जिस तरह से शस्त्रों की खरीद कर लें। वे विभिन्न देशों की सरकारों की तरह नियमों में बंधे नहीं हैं और न ही उनके उपयोग को लेकर उनको कोई चिंता है। उनके पास विनाश के प्रचुर साधन हैं और आर्थिक संसाधनों की प्रचुरता भी है जिससे वे कोई भी निर्णय लेने के लिए न केवल स्वतंत्र हैं वरन् उसे व्यवहार में बदलने की क्षमता भी रखते हैं।

ये समूह उन सब सरकारों के लिए लगातार खतरा बने रहते हैं जो संवैधानिक तो हैं।किन्तु जिनके सामाजिक और आर्थिक आधार बहुत ही कमजोर है।

12.6 11.9.2001 अमेरिका पर आतंकी आक्रमण के अंतर्राष्ट्रीय राजनीति पर प्रभाव

अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के विश्लेषक 11.9.2001 को अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में एक महत्वपूर्ण मोड़ मानते हैं जब अमेरीकी प्रतिष्ठान विश्व व्यापार केन्द्र और पैन्टागन पर आतंकवादी हमला हुआ जिसमें विश्व व्यापार केन्द्र में कार्य करने वाले कई लोगों की मृत्यु हुई। 1990 के पश्चात् विश्व राजनीति के एकमात्र प्रभाव केन्द्र अमेरिका की सुरक्षा व्यवस्था में यह कमजोरी इस बात का संकेत है कि अपनी सारी दक्षता के होते हुए यह आक्रमण हुआ जो आतंकवाद के बढ़ते हुए प्रभाव के साथ–साथ उनकी कहीं भी आक्रमण करने की क्षमता को स्पष्ट करता है।

अमेरिकी दृष्टि से इस घटना के पश्चात अमेरिका ने आतंकवाद के विरुद्ध व्यापक स्तर पर अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिरोध की शक्ति को विकसित करने का प्रयास किया जिसमें अमेरिका ने अपने सहयोगी राष्ट्र ब्रिटेन, फ्रांस. जापान आदि के साथ–साथ एशिया में पाकिस्तान और भारत का भी सहयोग लिया। इस प्रभाव में अमेरिका ने संयुक्त राष्ट्र संघ का भी व्यापक तरीके से प्रयोग किया और यह आभास दिया कि अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में आतंकवाद के विरुद्ध संघर्ष में एक आम सहमति है और आतंकवादी समूहों के प्रति एक व्यापक नाराजगी है किन्तु इसी प्रतिरोध के साथ–साथ ब्रिटेन और यूरोप के कतिपय शहरों में आतंकवादी घटनाएँ निरन्तर होती रही हैं। दक्षिण एशिया में भारत, जो पहले से ही आतंकवाद के संघर्षरत था, वहाँ भी आतंकवादी गतिविधियों में वृद्धि हुई है। यही नहीं अमेरिका के साथ सहयोग करने के फलस्वरूप पाकिस्तान भी आतंकवाद की घटनाओं से लगातार परेशान रहा है। 2008 में बेनजीर भुट्टो की एक आतंकवादी हमले में हत्या इस बात का प्रमाण है कि इन घटनाओं के फलस्वरूप वहाँ की राजनीतिक स्थिति में अस्थिरता आयी है। भारत के कई शहरों में हो रहे आतंकी हमले भारत में उनके प्रभावी का न केवल विस्तार हैं वरन् पिछले कुछ वर्षो में धार्मिक स्थलों की सुरक्षा भी एक संवेदनशील प्रश्न हो गया है। यह स्पष्ट है कि अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के गैर राज्यकीय अभिनेता अपने प्रभाव के आकस्मिक उपयोग के फलस्वरूप अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति को प्रभावित ही नहीं करते वरन् असुरक्षा को लगातार बढाते हैं। दक्षिण एशिया में ही श्रीलंका पिछले लम्बे समय से आतंकवाद और आन्तरिक संघर्ष से ग्रस्त है।

2003 के पश्चात अफगानिस्तान में हुआ आतंकवाद के विरुद्ध संघर्ष इस बात का प्रमाण है कि आतंकवादी समूहों को निरन्तर व्यापक समर्थन प्राप्त है और इन समूहों ने अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में इस्लामिक राष्ट्रों की स्थिति को लगातार विवादास्पद बनाये रखा है। इस सारे संघर्ष को अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के विश्लेषकों का एक समूह 'संस्कृतियों की टकराहट' के अन्तर्गत स्पष्ट करता है। इस समूह का आग्रह है कि यह टकराहट धर्म पर आधारित है। किन्तु यह समझ अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के आचरण के प्रमुख आधार स्तम्भ राष्ट्रीय हित के दृष्टि की अवहेलना है, जिसमें राष्ट्रीय हितों की दृष्टि से भी इन समूहों के हितों की व्याख्या और विशेषकर खाड़ी देशों में उपलब्ध तेल स्रोतों की उपस्थिति के आधार को भी विश्लेषित करना आवश्यक है।

12.7 सारांश

अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में आतंकवाद मुख्य रूप से हिंसा हत्याओं और विस्फोटों द्वारा अपनी ओर ध्यान आकर्षित करता है। इन घटनाओं में जो समूह लगे हुए हैं, उन्हें गैर राजकीय अभिनेता कहा जाता है जिनका प्रयास हिंसा द्वारा अपने उद्देश्यों को प्राप्त करना है। पिछले कुछ दशकों में इन समूह की गतिविधियाँ काफी बढ़ गई हैं। एशिया अफ्रीका और लेटिन अमेरिकी राज्य लम्बे समय तक आतंकवादी घटनाओं के शिकार रहे हैं। पिछले दशक में 11 सितम्बर, 2001 के अमेरिकी आक्रमण के पश्चात् आतंकवाद के संघर्ष में अमेरिकी गतिविधियाँ बढ़ी हैं। परिणामस्वरूप एक संगठित प्रयास नजर आता है। दक्षिण एशिया में पाकिस्तान, भारत और श्रीलंका इन घटनाओं के प्रभाव में रहे हैं। इन घटनाओं का प्रभाव आंतरिक राजनीति पर लगातार पडता है और सारी व्यवस्थाओं के प्रति असंतोष रहता है। यों अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में एक विश्लेषण यह भी है कि अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद को इस परिप्रेक्ष्य में भी देखा जाना चाहिए कि अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पर्याप्त कारण हैं जिनसे शोषण और अन्याय लगातार बना हुआ है और उस पर ध्यान आकर्षित करने के लिये ये घटनाएँ मुख्य संकेत हैं। अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में आतंकवाद के विरुद्ध अन्तर्राष्ट्रीय कानून की व्यवस्था है जिसमें राज्यों को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पर्याप्त शक्तियां प्रदान की गई हैं। यही नहीं, अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर आतंकवाद के विरुद्ध जनमत लगातार बना हुआ है किन्तु आतंकवाद का विस्तार चिन्ता का कारण बना हुआ है। आतंकवाद के विश्लेषण में विचारधारा, धर्म और हितों के आधार पर व्याख्या की जाती है, किन्तु अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति की व्याख्या में आतंकवाद का विस्तार तथ्यत: राष्ट्र राज्यों की सुरक्षा और उनकी स्थिरता के लिये एक बाधा बना हुआ है।

12.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. आतंकवाद के अर्थ को स्पष्ट करते हुए उसके प्रकारों पर प्रकाश डालिये।
2. अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में तीसरी दुनिया के राज्यों के आतंकवाद पर दृष्टिकोण को स्पष्ट कीजिये।
3. सितम्बर, 2001 के पश्चात् आतंकवाद के अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति पर प्रभावों को स्पष्ट कीजिये।

12.9 संदर्भ ग्रन्थ

1. Yonah Alexander – International Terrorism, Martinus Nijhoff, 1992

2. L.Ali.Khan, – A Theory of International Terrorism, 2006 Institute for International Terrorism studies, Vol.1, 2007

3. Bianchi, A. – Enforcing International Law Norms against Terrorism, Hart Publishing. 2004.

4. Combs Cindy C. – Terrorism in Twenty first century, NJ, Prentice Hall, 2000

5. Cooley, Jonh K – Unholy Wars, Pluto Press, 1999.

इकाई–13

एड्स

इकाई की रूपरेखा

13.0 उद्देश्य

13.01 प्रस्तावना

13.02 एड्स और भारत

13.03 वैश्विक परिदृश्य

13.04 एचआईवी एड्स का इतिहास

13.05 एचआईवी. एड्स क्या हैं?

13.06 राष्ट्रीय एड्स नियन्त्रण कार्यक्रम

13.07 राजस्थान में एचआईवी. से सम्बन्धित सुविधाएं

13.08 एचआईवी. एड्स का सामाजिक परिदृश्य

13.09 सामाजिक स्वीकार्यरता एवं परिबद्धता

13.10 अन्तर्राष्ट्रीय सामाजिक प्रतिबद्धता

13.11 एचआईवी. सक्रमितों के विभिन्न संगठन

13.12 सारांश

13.13 शब्दावली

13.14 बोध प्रश्न

13.15 संदर्भ ग्रन्थ

13.0 उद्देश्य

इस पाठ के अध्ययन के पश्चात आप

- यह जान पायेंगे कि एचआईवी. एड्स रोग क्या है? इसके होने के क्या कारण है? यह रोग कैसे फैलता है? इससे बचाव के क्या उपाय है? और रोग हो जाने पर क्या उपचार लेना चाहिये और इस रोग से बचाव के लिए वैक्सीन की क्या स्थिति हैं?
- विश्व, भारत और राजस्थान सहित विभिन्न राज्यों में एचआईवी. एड्स की वर्तमान स्थिति के बारे में भी यह इकाई अवगत करायेगी।
- आप यह भी जान पायेंगे कि एचआईवी एड्स का समाज पर किस तरह से प्रभाव पड़ रहा है और इसके आर्थिक और सामाजिक प्रभाव क्या है?

- ♦ इकाई का अध्ययन आपको एड्स के नारीकरण और रोग से जुड़ी भ्रान्तियों के बारे में भी अवगत करायेगा।
- ♦ इकाई के पतन के पश्चात आप यह भी जान पायेंगे कि एड्स से घबराने या डरने की आवश्यकता नहीं वरन उसका सामना करने और लड़ने की आवश्यकता हैं।

13.01 प्रस्तावना

एचआईवी. एड्स शब्द का नाम दिमाग में आते ही एक झटका सा लगता है और ऐसा लगता है कि कही किसी ने मौत का पर्यायवाची सुना दिया हो परन्तु वास्तविकता में ऐसा नहीं हैं।

यह जरूर है कि यह रोग इस शताब्दी की सबसे बड़ी चुनौती है जिस का वर्तमान में कोई उपचार नहीं है परन्तु यह भी सही है कि थोड़ी सी सावधानी रखने पर इस रोग से अत्यन्त ही सुगमता से बचा जा सकता है।

बैंकॉक, थाईलैण्ड में आयोजित। 5वें विश्व एड्स सम्मेलन में नेलसन मंडेला का यह कथन कि यह रोग मानव इतिहास का अब तक का सबसे बड़ा दुश्मन है और इसी सम्मेलन में सयुक्त राष्ट्र महासचिव कोफी अन्नान का यह कहना कि इससे बडी चुनौती का सामना विश्व ने आज तक नहीं किया, सम्भवत: इस रोग की भीषणता और भयावहता का किंचित परिचय मात्र है परन्तु सजगता, सावधानी और बचाव ऐसे अचूक हथियार है जिससे इस महा दानव का सामना किया जा सकता हैं।

13.02 एड्स ओर भारत

भारत, वर्तमान में जन स्वास्थ्य के इतिहास की सबसे बड़ी चुनौती का सामना कर रहा है और दक्षिण अफ्रीका के बाद, एचआईवी से संक्रमित लोगों की संख्या के हिसाब से विश्व में दूसरे स्थान पर है। वर्तमान में भारत में एचआईवी संक्रमितो की संख्या लगभग 25 लाख है और संक्रमण का राष्ट्रीय औसत 0.36 प्रतिशत है। आकड़ों का रोचक तथ्य यह है कि भारत भर में चलाये जा रहे विभिन्न एस.आई.वी एड्स नियंत्रण कार्यक्रमों की सफलता के कारण पिछले कुछ वर्षो में इस रोग की संक्रमण दर में अपेक्षाकृत कमी आयी है। पूर्व में दक्षिणी राज्यों में एचआईवी संक्रमण उत्तरी राज्यों की तुलना में 5 फीसदी अधिक था परन्तु अब इस में कमी आयी है। पूर्व में विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय और राष्ट्रीय संगठन भारत में एचआईवी सक्रमितों की संख्या 52 लाख बताते थे परन्तु अब नये आकड़े इसके आधे तक पहुँच चुके है। वर्ष 2002 में जहां भारत में 0,45 प्रतिशत वयस्क एचआईवी से संक्रमित थे तो वहीं 2006 में यह प्रतिशत 0.36 प्रतिशत तक रहा।

देश में इस रोग से महिलाओं की तुलना में पुरूष ज्यादा संक्रमित है और जहां पुरुषों में संक्रमण का प्रतिशत 61 है वहीं महिलाओं में यह 39 प्रतिशत है।

यदि उम्र की बात करें तो 15 से 49 वर्ष की आयु वर्ग के व्यक्ति इस रोग से सर्वाधिक त्रस्त है जो कि कुल प्रभावितों का 887 प्रतिशत है। 15 साल से कम उम्र में एचआईवी. संक्रमण का प्रतिशत 4 है जबकि 50 वर्ष से ज्यादा में यह 7 प्रतिशत है।

यदि देश भर के कुल एचआईवी. संक्रमितों की संख्या की बात की जाये तो यह पाया जाता है कि देश में सर्वाधिक एचआईवी. प्रभावित लोग आन्ध्रप्रदेश और महाराष्ट्र में है जहां 5 –5 लाख लोग इस संक्रमण का शिकार है जबकि इसके बाद तमिलनाडू और कर्नाटक का स्थान आता है। हालांकि यदि निम्न ग्राफ का अध्ययन किया जावें तो यह पाया जायेगा कि मणीपुर और नागालैण्ड में संक्रमण का सर्वाधिक प्रतिशत है परन्तु जनसंख्या के हिसाब से यह मात्र 25 –25 हजार ही है। इस तरह से इन छ: राज्यों में एचआईवी. एड्स का सर्वाधिक प्रभाव है जहां देश के 65 प्रतिशत एचआईवी संक्रमित रोगी निवास करते हैं। इन छ: राज्यों के बाद पश्चिम. बंगाल. गुजरात और उत्तर प्रदेश का स्थान आता है जहां एक–एक लाख लोग एचआईवी. से संक्रमित है जबकि केरल, बिहार, राजस्थान, उड़ीसा, छत्तीसगढ़, मध्यप्रदेश और हरियाणा में यह संख्या 50–50 हजार के लगभग है।

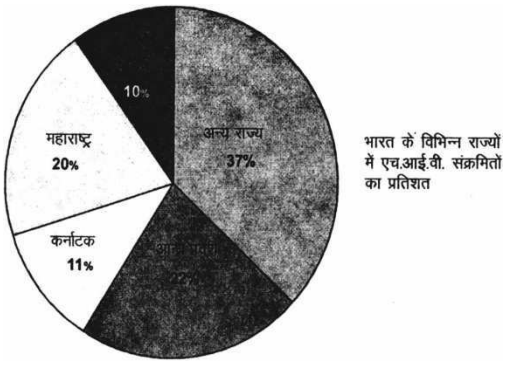

भारत के विभिन्न राज्यों में एच.आई.वी. संक्रमितों का प्रतिशत

भारत में एच.आई.वी. एड्स फैलने के माध्यम

सम्पूर्ण विश्व में इस रोग के फैलने का सर्वाधिक माध्यम असुरक्षित यौन सम्बन्ध है और भारत में भी 85' प्रतिशत एचआईवी. एड्स के मामले भी इसी कारण से होते है। 3.6 प्रतिशत मामले माता से शिशु को होने वाले संक्रमण से, 2.6 प्रतिशत मामले में संक्रमित सुईयों के प्रयोग से, 2.03 प्रतिशत मामले संक्रमित रक्त से और 5.9 प्रतिशत मामले अन्य कारणों से होते है।

देश के विभिन्न राज्य में एचआईवी. रोगियों का प्रतिशत आकड़े यह भी बताते है कि देश में आमतौर पर शहरी क्षेत्रों में ग्रामीण क्षेत्रों की अपेक्षा एचआईवी. का संक्रमण अधिक है जबकि पंजाब, उत्तर, प्रदेश और तमिलनाडु में ग्रामीण प्रभावितों की संख्या ज्यादा है।

13.03 वैश्विक परिदृश्य

वर्ष 2007 के अंत तक विश्व भर में 3 करोड़ 32 लाख लोग एचआईवी. से संक्रमित थे जबकि 28 लाख लोग इस रोग के कारण अकाल मौत का ग्रास बन चुके थे। संक्रमितों में सर्वाधिक 55 लाख लोग दक्षिण अफ्रीका के है।

एड्स कार्यक्रमों की सफलता का यह सबसे बड़ा प्रमाण है कि जहां वर्ष 2006 में 3 करोड़ 95 लाख लोग एचआईवी. से संक्रमित थे तो वहीं वर्ष 2007 में यह दर 16 प्रतिशत घट गयी।

वर्तमान में विश्व भर में प्रतिदिन 6800 व्यक्ति इस रोग से संक्रमित होते है जबकि 5700 रोगी इस भयानक रोग के कारण प्रतिदिन मृत्यु का ग्रास बन जाते हैं। रोग से मृत्यु का प्रमुख कारण बचाव और उपचार के व्यापक साधन और उनकी जानकारी का प्राप्त न होना है।

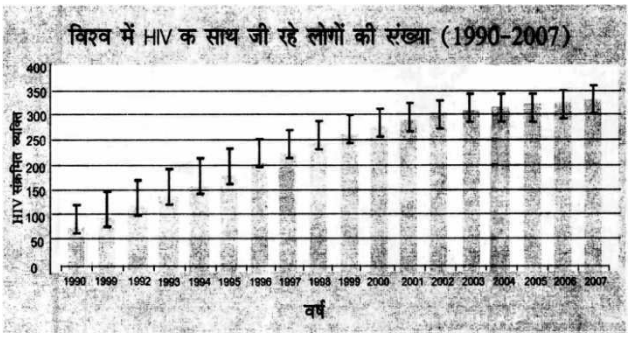

आज विश्व के 192 देश अपने यहां एड्स संबंधी विभिन्न कार्यक्रमों को अपना कर इस लाइलाज बीमारी को रोकने में अपना महत्ती योगदान दे रहे हैं।

वर्तमान में एशिया महाद्वीप में 83 लाख लोग एचआईवी. से संक्रमित है जिसमें 24 लाख महिलाऐं और शेष पुरूष है। एशिया के कुल संक्रमितों में से दो तिहाई रोगी केवल भारत से है।

13.04 एचआईवी. एड्स का इतिहास

एड्स रोग का पहला मामला वर्ष 1980 में संयुक्त राष्ट्र अमरीका के समलैंगिक पुरूषों में देखने में आया था। भारत में वर्ष 1986 में चेन्नई की सैक्स वर्कर्स में एचआईवी. का पहला मामला प्रकाश में आया जबकि राजस्थान में इस का पहला रोगी वर्ष 1987 में पुष्कर में पाया गया।

13.05 एचआईवी. एड्स क्या हैं?

एड्स एक संक्रामक रोग है जो कि एचआईवी. (ह्यूमन इम्यूनो डेफिषियेन्सी वायरस) नामक विषाणु के संक्रमण के फलस्वरूप होता है। इसके संक्रमण से मनुष्य के शरीर की रोगों के साथ लड़ने की क्षमता खत्म हो जाती है। परिणामस्वरूप एड्स रोगी को कई तरह के अवसरवादी संक्रमण हो जाते हैं जिनसे तरह–तरह की बीमारियॉ लग जाती हैं। रोगी का शरीर इन बीमारियों से लड़ नहीं पाता है और अंत में यही संक्रमण मौत का कारण बन जाता है। एचआईवी. संक्रमण उन चोरों के समूह की भाँति है जो कि शरीर की रक्षा करने वाले प्रतिरक्षक तत्वों पर ही अपना आक्रमण करते हैं और उस प्रतिरक्षा तत्वों रूपी पुलिस थानों को ही अपना अड्डा बना लेते हैं। आम तौर पर उपलब्ध एलाइजा टेस्ट द्वारा जॉच करने पर एचआईवी. संक्रमण होने के लगभग 12 सप्ताह (तीन महीने) के बाद ही रक्त की जाँच से ज्ञात होता है कि विषाणु शरीर में प्रवेश कर चुका है। इस तरह के संक्रमित व्यक्ति को एचआईवी. पॉजिटिव कहते है। एचआईवी. पॉजिटिव व्यक्ति कई वर्षो (6 से 10 वर्ष) तक सामान्य प्रतीत हो सकता है और सामान्य जीवन व्यतीत कर सकता है। लेकिन इस अवधि में वो दूसरों को बीमारी फैलाने में सक्षम होता है। यह विषाणु मुख्यत: शरीर को बाहरी रोगों से सुरक्षा प्रदान करने वाली रक्त में मौजूद) सीडी–4 कोशिकाओं को प्रभावित करता है और धीरे–धीरे उन्हें नष्ट करता है। कुछ वर्षो बाद (6 से 10 वर्ष) यह स्थिति हो जाती है कि शरीर आम रोगों के कीटाणुओं विषाणुओं आदि से भी अपना बचाव नहीं कर पाता और तरह–तरह के संक्रमण जैसे क्षय रोग (टीबी), केन्हीडियासिस तथा कैंसर जैसे रोगों से शरीर ग्रहित होने लगता है। इसी अवस्था को एड्स कहते हैं।

एच.आई.वी. पॉजिटिव और एड्स में अन्तर

एचआईवी पॉजिटिव होने का मतलब है कि एचआईवी. के विषाणु का संक्रमण शरीर में पहुंच चुका है। जब विभिन्न बीमारियों के लक्षण नजर आने लगे या रक्त में सी.डी.–4 कोशिकाओं की संख्या घटाकर 200 से कम हो जाए तब इस अवस्था को एड्स कहते हैं। वायरस द्वारा संक्रमण होने के पश्चात् एड्स को विकसित होने में 8 से 10 वर्ष लग सकते है। इस अवस्था को विन्डो पीरियड कहा जाता है। इस दौरान व्यक्ति एक सकारात्मक जीवन व्यतीत कर सकता है, लेकिन कुछ सावधानियां बरतनी होगी जिससे वह अपने जीवन साथी व बच्चों में यह रोग न फैला सके तथा स्वयं को भी अवसरवादी संक्रमणों से बचा सकें।

एचआईवी. एड्स के कारण

- असुरक्षित यौन संबंध से
- बिना जंचा हुआ रक्त चढ़ाने से
- संक्रमित सिरिंज एवं सुई के उपयोग से
- एचआईवी. संक्रमित माँ के होने वाले बच्चे व स्तनपान से

एच.आई.वी. कैसे नहीं फैलता है।

यहां यह भी समझ लेना आवश्यक है एचआईवी. एड्स रोग किन कारणों से नहीं फैलता है क्योंकि इस संबंध में कई भ्रांतियाँ व्याप्त है।

- एचआईवी. संक्रमित व्यक्ति के साथ दैनिक प्रयोग की वस्तुओं का सहभागी प्रयोग करने से जैसे टेलीफोन, किताबे, पेन आदि के साझा उपायोग से एड्स नहीं फैलता है।
- शारीरिक स्पर्श से जैसे हाथ मिलाना, छूना, साथ उठना बैठना व अंश–पास खड़े होने से।
- एक ही ऑफिस, कारखाने में साथ–साथ काम करने से, उपकरणों का मिलकर प्रयोग करने से।
- साथ–साथ खाने पीने तथा प्लेट गिलास या अन्य बर्तनों का मिलकर प्रयोग करने से।
- सार्वजनिक गुसलखाना या टॉयलेट का प्रयोग करने से।
- हवा में खाँसने, छींकने से।
- कीट पतंगों, मच्छर, जूं खटमल के काटने व मक्खी आदि से।

एड्स से बचाव

- जीवन साथी के अलावा किसी अन्य के साथ यौन संबंध स्थापित करना चाहिए।
- यौन रोगियों के साथ यौन सम्पर्क नहीं बनाना चाहिए।
- यौन सम्पर्क के साथ कण्डोम (निरोध) का प्रयोग करना चाहिए।
- मादक औषधियों के आदी व्यक्तियों जिन्हें। intra Drug Users IDU'S)।,कहा जाता है द्वारा सूई व सिरिंज का साझा प्रयोग नहीं करना चाहिये।
- 20 मिनट पानी में उबाली सूई व सिरिंज या डिस्पोजेबल सिरिंज ही काम में लेनी चाहिये।
- एड्स से पीड़ित महिलाओं को गर्भ धारण के समय / बाद डॉक्टर से सलाह करनी चाहिए। आजकल ऐसी दवा उपलब्ध है जिससे एचआईवी. संक्रमित महिला के गर्भ में पल रो बच्चे में एचआईवी. की संभावना को काफी कम किया जा सकता है।
- रक्त की आवश्यकता होने पर एचआईवी. की जाँच किया रक्त ही करना चाहिए।
- किसी का इस्तेमाल किया हुआ ब्लेड काम में नहीं लेना चाहिए।
- शरीर में गोदना, गोदने से, नाक व कान छेदने के उपकरण को भी कीटाणु रहित करके ही प्रयोग में लेना चाहिए।

एचआईवी. परीक्षण से सम्बन्धित कुछ महत्वपूर्ण बातें

- अगर आपको ऐसा लगता है कि किन्हीं कारणों से आपके शरीर में ए.आई.वी. का प्रवेश हो गया हो तो एचआईवी. परीक्षण करा लेना चाहिए।
- खून के परीक्षण से एचआईवी. संक्रमण का पता लगाया जा सकता है।
- आम तौर पर एलाइजा टेस्ट व अन्य टेस्ट द्वारा एचआईवी. संक्रमण के तीन महीनों के बाद इस विषाणु यानि वाइरस का रक्त में पता चलाया जा सकता है जबकि इस दौरान वायरस शरीर में संख्या बढ़ाता रहता है और ऐसा व्यक्ति किसी दूसरे को एचआईवी. संक्रमित करने में सक्षम होता है। इस अवधि को विन्डो पीरियड कहते हैं। इस दौरान विशिष्ट परीक्षणों जैसे पीसीआर. द्वारा इनका पता लगाया जा सकता है।

- एचआईवी. जांच सरकारी अस्पतालों में नाम मात्र के शुल्क मात्र 10 /– रूपये में कराई जा सकती है जबकि सरकारी अस्पतालों में भर्ती मरीजों की जांच निःशुल्क होती है।

जब एचआईवी. ' एड्स हो जाये

- जीवन साथी के अलावा किसी और से शारीरिक संबंध नहीं बनाना चाहिए।
- जीवन साथी से शारीरिक संबंध बनाते समय भी निरोध का उपयोग अवश्य करना चाहिए।
- चोट लगने पर या अन्य किसी जख्म से निकले हुए खून को अन्य किसी के नहीं लगने देना चाहिए। कपड़े धोते समय ब्लीचिंग पाऊडर का उपयोग करना चाहिए।
- महिलाओं को महावारी के समय काम में लिये गये कपड़े जला देनें चाहिए या ब्लीचिंग द्रव में रात भर भिगोकर जमीन में गाड़ देने चाहिए
- महिलाओं को चाहिए की वह बच्चे को स्वयं का दूध नहीं पिलाये।
- खाने–पीने से सम्बंधित कुछ बातों का ध्यान रखना चाहिए जैसे
  बाहर का खाना कम से कम खाना।
  बाहर का पानी नहीं पीना।
  घर में साफ–सुथरी धुली हरी सब्जियां, फल, दूध आदि का सेवन भोजन में अधिक मात्रा में करना। पौष्टिक एवं स्वास्थ्यवर्धक खाना खाना।
- स्वयं को सदैव चिंता मुक्त रखने का प्रयास करना चाहिए।
- रोज व्यायाम करना चाहिए।
- धूम्रपान या अन्य कोई नशा नहीं करना चाहिए।
- अन्य किसी बिमारी से ग्रहित व्यक्ति से स्वयं को दूर रखना चाहिए जिससे आपको कोई संक्रमण ना हो जाये।
- किसी प्रकार की तकलीफ होने पर डॉक्टर से तुरंत सम्पर्क करना चाहिए।

13.06 एचआईवी. का उपचार

एड्स में होने वाले अवसरवादी संक्रमणों की दवाओं का निःशुल्क प्रावधान सरकारी अस्पतालों में हैं। किसी भी मेडिकल कॉलेज के त्वचा एवं रति रोग विभाग में अथवा किसी भी चिकित्सक से सलाह प्राप्त की जा सकती है।

इस रोग के इलाज के लिये उपयोग में लाये जाने वाली दवाओं को **एन्टी रिट्रोवायरल दवाई** (ART) कहते है। ऐसी दवाएं बाजार में उपलब्ध हैं, जिनकी कीमत लगभग डेढ़ से आठ हजार रूपये प्रति माह होती है। राज्य सरकार द्वारा एन्टी रिट्रोवायरल दवाई पर करों से राहत दी हुई है। विभिन्न राज्य सरकारों द्वारा यह दवाएं मुफ्त उपलब्ध कराई जाती है परन्तु चिकित्सक से सलाह लेकर ही इनका उपयोग करना चाहिए। इन दवाओं को नियमित रूप से लेना चाहिये क्योंकि अनियमित सेवन से शीघ्र ही इन दवाओं के प्रति प्रतिरोध उत्पन्न हो जाता है।

वर्तमान में एचआईवी. एड्स रोग का कोई कारगार उपचार उपलब्ध नहीं है परन्तु संक्रमितों को आरामदायक जीवन उपलब्ध कराने के लिए पर्याप्त दवाएं उपलब्ध है। ए.आर.वी. दवाओं के कच्चे माल के रूप में भारत विश्व में अग्रणी स्थान पर है और विभिन्न देशों को इनका निर्यात करता है।

संक्रमितों को वर्तमान में ए.आर.टी. दवाओं के रूप में ए.जेड.टी., डी.डीं.एल., डी.डी.सी. इत्यादि कई दवाएं बाजार में उपलब्ध है। मौजूदा समय में उपचार के सम्बन्ध में 1333 Three Drug Regimens ओर 1500 Treatment Protocols (CDC) उपलब्ध है और इनकी संख्या में पर्याप्त बढ़ोतरी हो रही है।

इस रोग की सबसे बडी समस्या यह है कि इसमें कोई भी दवा लम्बे समय तक प्रभावी नहीं होती और यह प्रतिकूल परिणाम भी दे सकती है। ज्यादा समय तक इन दवाओं का सेवन रोग प्रतिरोधक क्षमता का भी हास कर देता है।

वैक्सीन की स्थिति

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर एचआईवी. एड्स रोग का सामना करने के लिए रोग प्रतिरोधक क्षमता के विकास हेतु विभिन्न शोध कार्यक्रम चल रहे है। परन्तु अभी तक किसी भी देश को वैक्सीन निर्माण में सफलता प्राप्त नहीं हो पाई है। आशा है शीघ्र ही इस दिशा में कारगार सफलता प्राप्त होगी।

भारत में पुणे स्थित ' 'नारी' ' संस्थान में वैक्सीन निर्माण पर उल्लेखनीय शोध हो रहे है।

राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण कार्यक्रम

देश में एचआईवी / एड्स के प्रसार की रोकथाम के लिए सन् 1986 मे राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण समिति का गठन किया गया था। स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय ने 1987 में राष्ट्रीय एड्स नियन्त्रण कार्यक्रम प्रारम्भ किया। इस कार्यक्रम का उद्देश्य निगरानी (सेंटीनल), रक्त सुरक्षा और लक्षित परियोजनाओं, जागरूकता कार्यक्रमों के माध्यम से एचआईवी / एड्स की रोकथाम और नियंत्रण करना है।

वर्ष 1992 में स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय के अंतर्गत राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण संगठन का गठन किया गया, और विश्व बैंक समर्थित राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण कार्यक्रम के पहले चरण की शुरूआत की गई। इस कार्यक्रम को प्रभावी ढंग से लागू करने के लिए सभी राज्यों में एड्स नियन्त्रण सेल स्थापित किये गये।

कार्यक्रम के प्रथम चरण के दौरान जिन चुनौतियों का सामना करना पड़ा एवं जो अनुभव प्राप्त हुए, उनके आधार पर राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण कार्यक्रम के दूसरे चरण की शुरूआत 1999 में हुई जिसके अंतर्गत इस कार्यक्रम को सभी राज्यों में सात वर्ष के लिए चलाया गया। कार्यक्रम के दूसरे चरण के अंतर्गत एचआईवी / एड्स के खिलाफ जंग जारी रखने के लिए गैर–सरकारी संस्थाओं की प्रभावी भूमिका पर विशेष महत्व दिया गया ताकि इन संस्थाओं का सहयोग प्राप्त कर एवं इनके और समाज के संयुक्त प्रयासों से संक्रमण की रोकथाम एवं इस पर नियंत्रण पाने के लिए उपयुक्त वातावरण बनाया जा सके।

इसी तरह राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण कार्यक्रम के प्रथम एवं द्वितीय से प्राप्त हुए अनुभवों के आधार पर भारत में एचआईवी / एड्स के खिलाफ जंग से एक और कदम आगे बढ़ते कार्यक्रम का तीसरा चरण (NACP iii) (2007–2012) सन् 2007 में प्रारंभ किया गया।

भारत के इतिहास में वर्ष 2007 एक महत्वपूर्ण वर्ष के रूप में जाना। इस वर्ष नई दिल्ली में 6 जून 2007 को राष्ट्रीय एड्स नियन्त्रण कार्यक्रम के तीसरे चरण के प्रारम्भ की घोषणा की गयी।

राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण कार्यक्रम–तृतीय चरण (जून 2007 से 20।2)

राष्ट्रीय नियंत्रण कार्यक्रम के तीसरे चरण के अंतर्गत एचआईवी एड्स के प्रसार को कम करने और इसके विस्तार की दिशा पलटने के लिए प्रस्तावित कदम :–

- लक्षित हस्तक्षेप परियोजनाओं के माध्यम से उच्च जोखिम वाले समूहों (यौन कर्मियों, सुई से नशा लेने वाले, पुरूष के साथ यौन संपर्क करने वाले पुरूषों) को सुरक्षित व्यवहार के लिए प्रेरित करना।

- आम जनता की पहुंच को रोकथाम सेवाओं, सलाह और जाँच सुविधाओं तक बढ़ाना ताकि उनमें एक जिम्मेदाराना जीवन–शैली के अनुरूप व्यवहारगत परिवर्तन आ सके।
- सेक्स और इससे जुड़े मुद्दों के इर्द–गिर्द छायी चुप्पी तोड़ना ताकि लोग सुरक्षित और समझदारी भरी यौनिक गतिविधियों को अपनाने को उन्मुख हों।
- एचआईवी, यौन संचारित संक्रमणों और अवांछित गर्भधारण से बचाव के एकमात्र उपाय के रूप में कण्डोम के प्रयोग को आम चलन में लाने के लिये बिक्री केन्द्र स्थापित करना।
- स्वैच्छिक रक्तदान के वर्तमान अनुपात को बढ़ाकर 90 प्रतिशत करना।
- एचआईवी एड्स के साथ जी रहे लोगों की सहभागिता बढ़ाने को प्रोत्साहन देना।
- एंटी रिट्रोवायरल चिकित्सा सुविधा सभी स्वास्थ्य केन्द्रों पर उपलब्ध कराना, बच्चों समेत एचआईवी / एड्स के साथ जी रहे लोगों को इस सुविधा का लाभ देना, अवसरवादी संक्रमणों के मामलों में उपचार तक उनकी पहुँच बनाना, पी.एल.एच.ए. को टीबी. की रेफरल सुविधा उपलब्ध कराना।
- राज्य एड्स नियंत्रण समितियों का क्षमता संवर्धन तथा जिला एड्स रोकथाम इकाइयों की स्थापना।
- आर्थिक मदद (अनुदान) और आपरेशनल रिसर्च की व्यवस्था करना।

राष्ट्रीय एड्स नियत्रंण कार्यक्रम के सन्दर्भ में

राजस्थान में पहला एचआईवी संक्रमित रोगी अजमेर जिले के पुष्कर में सन्।987 में पाया गया। इसके बाद राज्य सरकार द्वारा इस पर नियंत्रण पाने एवं इसके प्रसार को रोकने के लिए व्यूह रचना तैयार कर कई प्रभावी कदम उठाए गये।

राज्य में एचआईवी / एड्स नियंत्रण कार्यक्रम के प्रभावी क्रियान्वयन हेतु राज्य सरकार ने सन् 1992 में स्वास्थ्य निदेशालय में राज्य एड्स सेल स्थापित किया। दिसम्बर, 1998 में राजस्थान स्टेट एड्स कंट्रोल सोसायटी की स्थापना भी की गई।

राज्य में राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण कार्यक्रम राजस्थान स्टेट एड्स कंट्रोल सोसायटी द्वारा क्रियान्वित किया जा रहा है। कार्यक्रम विभिन्न चरणों में चलाया जा रहा है। जो निम्न प्रकार से है –

प्रथम चरण (1992 – 1999)

कार्यक्रम के प्रथम चरण के अंतर्गत निम्नलिखित लक्ष्य निर्धारित किये गये:–

- सुरक्षित व एचआईवी मुक्त रक्त उपलब्ध कराना।
- जनजागति पैदा करना।
- यौन संक्रमित रोग उपचार।

द्वितीय चरण (1999 – 2007)

इसी तरह द्वितीय चरण के तहत जो लक्ष्य निर्धारित किये गये वे इस प्रकार है:–

(1) राज्य में आम जन वर्ग में एचआईवी. की प्रसार दर को। प्रतिशत से कम रखना।
(2) रक्त के माध्यम से होने वाले संक्रमणों को। प्रतिशत से कम रखना।
(3) युवाओं एवं यौन सक्रिय आयु वर्ग के लोगों में जागृति को 90 प्रतिशत तक लाना।

(4) अधिक जोखिम वर्ग जैसे पेशेवर यौन कर्मी, पुरूष का पुरूष के साथ सम्भोग, सुई से नशा करने वाले, ट्रक चालक तथा पलायनकर्ता में कंडोम के उपयोग को 90 प्रतिशत तक लाना।

राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण कार्यक्रम – तृतीय चरण

राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण कार्यक्रम के तृतीय चरण में राजस्थान में बहुआयामी कार्यप्रणाली अपनाते हुए राजस्थान स्टेट एड्स कंट्रोल सोसायटी को और सशक्त करना, एचआईवी प्रणाली को उचित ढांचे व प्रणाली हस्तक्षेप सुदृढ़ करने के लक्ष्य को निर्धारित करने के साथ, हर स्तर पर क्षमता वृद्धि के प्रयास करना, हर प्रकार की सुविधाएं एवं सेवाऐं समुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र एवं प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों तक पहुंचाना, 'ए' (गंगानगर) एवं 'बी' (अलवर, अजमेर, जयपुर, उदयपुर, टोंक व बाडमेर) श्रेणी के सात जिलों पर विशेष ध्यान देना। एचआईवी को अन्य विभागीय कार्यक्रमों के साथ मुख्य धारा से जोड़ना, निजी एवं सहभागिता को बढ़ावा देना एवं एचआईवी कार्य योजना एवं आवंटन प्रणाली को राज्य व जिला स्तर पर विकसित कर क्रियान्वित करना है।

तृतीय चरण के अंतर्गत निर्धारित लक्ष्यों को हासिल करने के लिए रोकथाम, देखभाल, सहायता एवं उपचार कार्यक्रमों (केयर, सपोर्ट एवं ट्रीटमेंट) को सुसंगठित एवं एकीकृत कर बीमारी की रोकथाम एवं इसके बढ़ते कदमों को पलटना है, जिसके लिए निम्न बिन्दुओं के अंतर्गत रणनीति का निर्माण किया गया है :–

1. अधिक जोखिम वर्ग और आमजन में नये संक्रमण को रोकने हेतु निम्न लक्ष्य निर्धारित किये है :–
   (अ) लक्षित हस्तक्षेप (टीआई) के अंतर्गत जोखिम वर्ग वाले समूह को पूरण रूप से सम्मिलित करना।
   (ब) आमजन के बीच एचआईवी / एड्स संबंधित जानकारी को बढ़ाना, पूर्ण रूप से जनाता को जागृत एवं सजग बनाना।
2. .ज्यादा से ज्यादा पीएलएचए (एचआईवी एड्स से प्रभावित व्यक्तियों) को, अधिकतम देखभाल, सहयोग एवं उपचार (केयर, सपोर्ट एवं ट्रीटमेंट) प्रदान करना।
3. जिला, राज्य एवं राष्ट्रीय स्तर पर रोकथाम, देखभाल, सहयोग एंव उपस्रार कार्यक्रमों के लिए मजबूत आधारभूत व्यवस्था करना एवं मानव संसाधन सुदृढ़ीकरण करना एवं लोगों तक इन सुविधाओं का विस्तार करना।
4. राज्य में सूचना प्रबंधन प्रणाली को सुदृढ़ करना।

लक्षित हस्तक्षेप परियोजना के अंतर्गत निर्धारित की गई रणनीतियाँ जिसमें व्यवहार परिवर्तन, इसके लिए सहायक संचार, कंडोम के इस्तेमाल को बढ़ावा देना, सहयोगी द्वारा शिक्षा, यौन संक्रमणों की रोकथाम और उपचार, ऐसी गतिविधियों का आयोजन करना, जो व्यवहार में बदलाव लाने के लिए सक्षम वातावरण का निर्माण कर सके एवं सामाजिक एकजुटता बढ़ा सके।

कंडोम प्रोत्साहन के अंतर्गत बिक्री केन्द्रों के माध्यम से कंडोम के इस्तेमाल में वृद्धि के मौजूदा स्तर को बढ़ाना है। इसी तरह रक्त सुरक्षा के अंतर्गत रक्त और रक्त उत्पादों से होने वाले एचआईवी संक्रमण को कम करना है। स्वैच्छिक रक्तदान का अनुपात बढ़ाने के लिए जागरूकता कार्यक्रमों का आयोजन, स्वैच्छिक रक्तदाताओं की भर्ती और उन्हें प्रेरित करना, रेड रिबन क्लबों और अन्य स्वयं झेवी संगठनों के सक्रिय सहयोग से स्वैच्छिक रक्तदान शिविरों का आयोजन करना।

कार्यक्रम के तीसरे चरण के तहत एकीकृत सलाह एवं जाँच केन्द्र (आ.सी.टी.सी) एवं माता से शिशु को एचआईवी संचरण की रोकथाम (पीपीटीसीटी) घटकों के तहत निर्धारित लक्ष्य इस प्रकार है :–

(अ) एकीकृत सलाह एवं जाँच केन्द्रों की संख्या बढ़ाना, ताकि इन केन्द्रों में हर वर्ष अधिक से अधिक लोगों की एचआईवी की जाँच की जा सकें।

(ब) आईसीटीसी सेवाओं का राज्य के सभी सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्रों में विस्तार किया जाना, जिससे इन सेवाओं के दायरे में कम से कम 80 प्रतिशत ऐसी गर्भवती महिलाओं को लाया जा सके, जिन्हें प्रसव पूर्व देखभाल की आवश्यकता पडती है।

13.07 राजस्थान में एचआईवी एड्स संबंधी सुविधाऐं

राष्ट्रीय एड्स नियन्त्रण संगठन द्वारा निःशुल्क एआरटी सुविधा वर्ष 2004 में प्रारंभ की गई। राजस्थान में यह सर्वप्रथम सवाई मानसिंह मेडिकल कॉलेज अस्पताल, जयपुर में वर्ष 2005 व सम्पूर्णानन्द मेडिकल कॉलेज, जयपुर में वर्ष 2006 में प्रारंभ की गई। वर्तमान में उदयपुर व बीकानेर मेडिकल कॉलेज अस्पताल में भी निःशुल्क ए.आर.टी. सुविधा उपलब्ध कराई जा रही है।

राज्य के हर ए.आर.टी. केन्द्र पर एड्स रोगियों को निम्न सुविधायें निःशुल्क उपलब्ध है।

चिकित्सा सुविधायें

- एड्स की दवाईयां (ARV Drug)
- CD 4 Teat
- परामर्श एवं कंडोम वितरण
- अवसरवादी संक्रमण की दवाईयां

आवश्यकता अनुसार विशेषज्ञ सेवायें निःशुल्क रक्तादान सुविधा, इत्यादि उपलब्ध है।

सामाजिक सुविधायें

राज्य सरकार की ओर से सभी एड्स रोगियों को घर से अस्पताल व अस्पताल से घर आने जाने हेतु राजस्थान रोडवेज की बसों के किराये में 75 प्रतिशत रियायत दी जा रही है।

कम्यूनिटी केयर सेन्टर (सामुदायिक देखभाल केन्द्र)

राज्य में एड्स के मरीजों के लिये पहला कम्यूनिटी केयर सेन्टर राज, स्टेट एड्स कंट्रोल सोसायटी द्वारा गैर सरकारी संस्था नारी चेतना समिति' ने जयपुर में स्थापित किया, इस सेन्टर को जीवन ज्योति के नाम से भी जाना जाता है। सेन्टर में 10 एचआईवी मरीज निःशुल्क रूप से रहकर सुविधाओं का लाभ उठा सकते हैं।

'जीवन ज्योति कम्यूनिटी केयर सेन्टर' जयपुर 01 दिसम्बर 2004 को शुरू किया गया था। कम्यूनिटी केयर सेन्टर, जोधपुर में जीवन आनन्द कम्यूनिटी सेन्टर के नाम से चलाया जा रहा है।

इन दोनों सेन्टर्स पर एचआईवी. / एड्स परामर्श, जांच, अवसरवादी संक्रमणों का ईलाज, भोजन एवं नाश्ता निःशुल्क दिया जाता है। रोगी के भर्ती होने पर उनकी आवश्यकतानुसार जयपुर व जोधपुर में उनकी सीडी. 4 जाचं या ए.आर.टी. सेन्टर ले जाने के लिए केन्द्र में प्रशिक्षित कार्यकर्ता उपलब्ध रहता है। यहां पर नर्स / कम्पाउडर, स्वास्थ्य कार्यकर्ता व एक पार्ट टाईम विशेषज्ञ चिकित्सक अपनी सेवाऐं देते हैं। इस केन्द्र पर एड्स रोगियों को जीविकोपार्जन के लिए व्यावसायिक प्रशिक्षण देने की भी सुविधा उपलब्ध है। राज्य में पापुलेशन् फाउण्डेशन ऑफ इण्डिया व नाको के सहयोग से उदयपुर, बीकानेर व अजमेर में शीघ्र ही तीन कम्यूनिटी केयर सेन्टर ओर खोले जा रहे है।

ड्रॉप–इन सेन्टर

राज्य में ड्रॉप–इन सेन्टर भी प्रारंभ किये गये हैं, एक वैशाली नगर, जयपुर में आर.एन.पी. पॉजिटीव द्वार तथा दूसरा संजीवनी ट्रायवल संस्था, धौलपुर द्वारा भरतुपर में चलाया जा रहा है, जहाँ प्रशिक्षित कॉउन्सलर्स (एच.

आईवीपॉजिटीव) एड्स रोगियों को परामर्श एवं एड्स से सम्बन्धित सभी जानकारी उपलब्ध करवाते है तथा एड्स मरीजों में सकारात्मक जीवन शैली एवं सकारात्मक सोच का विकास किया जाता है। यहां पर वोकेशनल ट्रेनिंग, मेडिटेशन व योग का अभ्यास भी कराया जाता है।

एकीकृत सलाह एवं जांच केन्द्र

राजस्थान में एकीकृत जांच एवं परामर्श केंद्र ऐसे केंद्र हैं जहां पर किसी व्यक्ति की स्वेच्छा से एच.आई. वी. की जांच की जाती है। यह जांच करने से पहले एवं बाद में उसे परामर्श भी दिया जाता है। इस पूरी प्रक्रिय में गोपनीयता को पूर्णरुप से सुनिश्चित किया जाता है। राजस्थान में आईसीटीज़ी केंद्रो की कुल संख्या 72 है जो सभी जिला अस्पतालों, मेडिकल कॉलेजों एवं कुछ सामुदायिक केंद्रो पर भी उपयुक्त है। सभी केंद्रो पर एच.आई. वी. की जांच फ्री में उपलब्ध है। राज्य में सभी मेडिकल कॉलेजों व जिला चिकित्सालयों में एकीकृत सलाह एवं जांच केन्द्र चलाये जा रहे है। इन सभी केन्द्रों पर कॉउन्सलिंग की जाती है। सहमति के बाद व्यक्ति की एचआईवी जांच की जाती है। संक्रमण से पॉजिटीव जी रहे व्यक्तियों को पोस्ट–टेस्ट काउंसलिंग द्वारा आगे की प्रक्रिया समझायी जाती है। इसी तरह राज्य में सप्ताह सेन्टर भी स्थापित है जहाँ आने वाली गर्भवती महिलाओं की यूप (समुह) काउंसलिंग की जाती है। महिला के चाहने पर व्यक्तिगत काउंसलिंग कर टेस्ट किया जाता है। पाजिटिव आने पर अस्पताल में प्रसव व माँ एवं बच्चे को निःशुल्क ए.आर.वी. दी जाती है।

इन सेन्टर्स पर निःशुल्क परामर्श, जांच, यौन रोग उपचार व अवसरवादी संक्रमणों की दवा, कंडोम व संबंधित प्रचार–प्रसार सामग्री दी जाती है।

कण्डोम प्रमोशन

राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण कार्यक्रम के तीसरे चरण के अन्तर्गत कण्डोम प्रमोशन कार्यक्रम एक महत्वपूर्ण घटक है।

मुख्य उद्देश्य

1. सभी व्यक्तियों विशेष कर उच्च जोखिम पूर्ण समूह के लोगों को प्रत्येक! शारीरिक संबंध के समय कंडोम का उपयोग करना।
2. यह सुनिश्चित करना कि व्यक्ति को जब भी कण्डोम की आवश्यकता हो उसे आसानी से 500 मीटर की दूरी पर यह सुविधा 24 घंटे उपलब्ध हो सके।

वर्तमान समय में कण्डोम वितरण एवं प्रमोशन कार्यक्रम निम्नानुसार चलाया जा रहा है।

कण्डोम प्रमोशन कार्यक्रम के तहत निम्नलिखित योजनाएं चलाई जा रही है।

1. फ्री सप्लाई स्कीम के अन्तर्गत नाकों द्वारा प्राप्त निरोध का निःशुल्क वितरण किया जाता है।
2. सोशियल मार्केटिंग स्कीम के अन्तर्गत डिलक्स निरोध का वितरण
3. कण्डोम वेडिग मशीन :– सितम्बर – 2004 में पहली बार जयपुर में 100 वेडिंग मशीनें चिन्हित स्थानों पर लगाई गई। नाको द्वारा तृतीय चरण में जयपुर शहर के लिए 250 मशीनें आवंटित की गई। जयपुर शहर के चिन्हित स्थान जैसे कि सुलभ कॉम्पलेक्स पेट्रोल पंप, ढाबे, पास शॉप लिकरशॉप किराने की दुकान, बस स्टैण्ड, रेल्वे स्टेशन, बैंक के पास आदि में यह मशीन लगाई गई। इन मशीनों के द्वारा 5 रूपये का सिक्का डालने से 4 कण्डोम वाला पैकेट निकलता है।

रक्त सुरक्षा

रक्त सुरक्षा राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण कार्यक्रम का एक महत्वपूर्ण घटक है। रक्त सुरक्षा के अंतर्गत रक्त और रक्त उत्पादों में से होने वालों एचआईवी 1–2 संक्रमण, Hepatitis B, Hepatitis C, VDRL तथा मलेरिया

जैसी घातक बीमारियों के संक्रमण को कम करने का उद्देश्य है रक्त घटकों का अनुपात 20 प्रतिशत से बढ़ाकर 80 प्रतिशत करना है ताकि रक्त के युक्ति संगत इस्तेमाल को प्रोत्साहित किया जा सके जिससे कि आपातकालीन स्थिति में जरूरतमंदों को रक्त मिल सके तथा उनकी प्राण रक्षा की जा सके।

13.08 एचआईवी. एड्स का सामाजिक परिदृश्य

वर्तमान में एचआईवी. एड्स एक रोग के साथ–साथ सामाजिक समस्या बन गया है। अत्यधिक संख्या में विषाणुओं का शिकार बने पतियों द्वारा अपनी पत्नियों को यह रोग, बेवजह, इनाम के रूप में दिया जा रहा है।महिलाओं का अत्यधिक संख्या में वायरस की चपेट में आने से एड्स रोग का महिलाकरण ' भी होता जा रहा है। शोध बताते है कि युवतियों में एचआईवी. संक्रमण युवाओं की तुलना में ज्यादा होता है।

महिलाओं पर बढ़ रहे अत्याचारों के मामले भी एच.आई. एड्स की वृद्धि में भरपूर योगदान दे रहे है। ऐसा मामलों में मद्यपान उल्लेखनीय भूमिका का निर्वहन कर रहा है। रोजगार की तलाश में घर से बाहर जाने वाले पुरुषों द्वारा असुरक्षित यौन सम्बन्धों के कारण रोग का विषाणु पुन: घर लौटने पर बेकसूर पत्नियों को अनायास ही मिल जाता है। गर्भवती संक्रमित महिलाओं के शिशुओं में भी एच.आई. एड्स का खतरा बढ़ जाता है।

वर्तमान में विश्व में ऐसे कई देश है जहां इस रोग के कारण माता–पिता दोनों ही मौत का शिकार हो चुके है और वायरस से संक्रमित हो चुके बच्चे अपने दादा–दादी की देख–रेख में पल बढ़ रहे है।

भारत में तो एचआईवी. एड्स होने का मुख्य कारण सामाजिक स्तर पर सीधे चरित्र से जोड़ दिया जाता है यहां तक कि रोग से प्रभावित पति की विधवा को गांव तक से निष्कासित कर दिया जाता है। हाल ही मैं बेवजह एड्स का शिकार बनी कुछ महिलाओं द्वारा प्रतिशोध के रूप में उसनें यौन सम्बन्ध स्थापित करने वाले पुरुषों को वायरस का पारितोशिक देने जैसे भी कुछ मामलें भी प्रकाश में आये हैं।

देश भर में समलैंगिकों की संख्या में भी बढ़ोत्तरी होती जा रही है ओर कई सामाजिक संगठन इन्हें वैधानिक मान्यता देने के लिए भी प्रयासरत है। गौर तलब है कि संसार भर में 80 देशों द्वारा समलैगिकों के रिश्तों को वैधानिक मान्यता प्राप्त है जबकि भारत जैसे देश में इसे सामाजिक दोष माना जाता है। परिणामस्वरूप समलैगिकों द्वारा छिपकर व्यवहार किया जाता है और उन्हें सही उपचार मार्गदर्शन नहीं मिल पाता है जिससे उनमें एचआईवी. एड्स का खतरा बढ़ता जा रहा है। देशभर में यौन शिक्षा का उतना बढ़ावा नहीं दिया जा रहा है जो कि अपेक्षित है जिससे रोग का दायरा विस्तृत होता जा रहा है।

राजमार्गो से गुजरने वाले ट्रक ड्राईवरों द्वारा भी परस्त्रीगमन का आदत के चलते एड्स का खतरा बढ़ रहा है और ऐसे में समझाइश और जागरूता के जरिये ही सामाजिक परिवर्तन का सूत्रपात किया जा सकता है। बच्चे, युवा, महिलाओं समाज का अहम हिस्सा है और ऐसे में यह समाज की भी जिम्मेदारी है कि वायरस का शिकार बनने वालों को भरपूर सहायता दी जाये और उनमें वांछित आत्म विश्वास का प्रादुर्भाव किया जाये।

13.09 सामाजिक स्वीकार्यता एवं परिबद्धता

यह वो शब्द है जो एचआईवी. एड्स के युद्ध में सबसे बड़ा हथियार सिद्ध हो सकता है। संक्रमित व्यक्ति को यदि समाज स्वीकार कर ले और उसके आहार व्यवहार तथा परेशानियों व आवश्यकताओं का ध्यान रखे कोई कारण नहीं कि मानसिक अवसाद का शिकार बनने वाले एड्स प्रभावितों की समस्याओं को न झुलझाया जा सके।

एचआईवी. टेस्ट के प्रति सामाजिक प्रतिबद्धता

वर्तमान में एचआईवी. संक्रमितों की संख्या के आकड़े कई गुना तक बढ़ सकते है यदि वृहद् स्तर पर एचआईवी. टेस्टिंग का कार्यक्रम चलाया जा सके। अनजाने भय और सामाजिक तिरस्कार के डर से लोग अपनी टेस्टिंग नहीं करवाते है जिससे समय निकल जाता है और एड्स होने का खतरा बढ़ जाता है। यदि समय रहते रोग

का पता चल जाये तो कोई कारण नहीं इसके खतरों को कम किया जा सके परन्तु इसके लिए आवश्यकता है सामाजिक चेतना और जनजागरण की। टेस्टिंग के प्रति समग्र सामूहिक चिंतन और सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना के चलते टेस्टिंग के लिए लोगों को प्रेरित किया जा सकता है।

13.10 अन्तर्राष्ट्रीय सामाजिक प्रतिबद्धता

विश्व आज एचआईवी. एड्स के खतरों को भांप चुका है और विभिन्न माध्यमों से इस रोग की रोकथाम, बचाव और उपचार में अपना महत्ती योगदान दे रहा है।

यहां अन्तर्राष्ट्रीय एड्स संगठन अर्थात आई.ए.एस. (इंटरनेशल एड्स सोसायटी) का जिक्र करना प्रासंगिक है जो विभिन्न स्तरों पर इस रोग के प्रति जनचेतना जागृत करने का कार्य कर रही है। जिनेवा में स्थापित इस संस्था के सदस्य पूरे विश्व में फैले हुए है और इस रोग के उपचार, रोकथाम और शोध पर विभिन्न कार्य कर रहे है। संस्था द्वारा हर दो वर्ष में अन्तर्राष्ट्रीय एड्स सम्मेलन और एचआईवी. एड्स रोग, उपचार और नियन्त्रण सम्मेलन ऐसे आयोजन है जिसमें भाग लेने वाली प्रतिभागी संस्थाएं और व्यक्ति विशेष इस रोग से निपटने के तौर तरीकों पर सामूहिक चिन्तन करते है। एशिया महाद्वीप में हर दो वर्षो में आयोजित किये जाने वाले एशिया पैसेफिक एचआईवी. एड्स सम्मेलन में भी विभिन्न स्तरों पर इस समस्या का सामूहिक विश्लेषण होता है। नेशनल प्रेस फाण्डेशन अर्थात एन.पी.एफ अमरीका के वांशिगटन में स्थापित पत्रकारों की ऐसी संस्था है जो बाकायदा एचआईवी. एड्स रोग की रिपोटिंग के लिए वैश्विक स्तर पर पत्रकारों को व्यवहारिक प्रशिक्षण देती है। संस्था द्वारा पत्रकारों के लिए एचआईवी. एड्स विषयक विभिन्न समाचारों और रेडियो टीवी. कार्यक्रमों की विषय वस्तु और भाषा की जानकारी सम्बन्धी कार्यक्रम भी आयोजित किये जाते है।

13.11 एचआईवी. सक्रमितो के विभिन्न संगठन

सम्पूर्ण विश्व में एचआईवी. के साथ जी रहे लोगों ने अपने हितों की 'रक्षा के लिए सामाजिक संगठनों की स्थापना की गयी है। भारत में इस सम्बन्ध में राष्ट्रीय स्तर पर आई.एन.पी. प्लस (इंडियन नेटवर्क फोर पिपुल लिविंग विथ एचआईवी. / एड्स) नामक संस्था घटित है जो एच.आई.वी सक्रमितों के हितों की रक्षा के लिए संघर्षरत और प्रयासरत है।

राजस्थान में भी राजस्थान नेटर्वक फोर पिपुल लिविंग विथ एच.आई.वी. एड्स (आर.एन.पी. प्लस) संस्था घटित है जिसकी स्थापना 14 जनवरी 2002 में की गई थी। संस्था के अध्यक्ष पिछले छ वर्षो से एचआईवी. से संक्रमित है परन्तु सकारात्मक जीवन शैली अपनाते हुए समय पर और नियमित दवाओं के सेवन के साथ आरामदायक जीवन व्यापन कर रहे है।

नेटवर्क फोर पिपुल लिविंग विथ एच.आई.वी. एड्स संस्थाओं के उद्देश्य

1. एचआईवी. वायरस के साथ जी रहे लोगों के हितों की रक्षा करना। '
2. एचआईवी. / एड्स के बारे में जनजागरण, परामर्श एवं सकारात्मक सोच बनाने में मदद करना।
3. एचआईवी. / एड्स के बारे में जानकारी बचाव देखभाल व समर्थन जुटाना और अन्य नेटवर्को के साथ सम्पर्क स्थापित करना।
4. विभिन्न संगठनों के अनुभव का लाभ उठाना जो एचआईवी. एड्स के क्षेत्र में कार्यरत है।
5. वित्तीय सहायता हेतु दानदाता संगठनों से सम्पर्क कर एचआईवी. एड्स से, संक्रमित लोगों की मदद करना।
6. ग्रास रूट स्तर के व्यक्तियों को साथ लेकर एड्स की जटिलताओं के विरूद्ध पैरवी का मंच बनाना।
7. एचआईवी. एड्स के कार्यक्रम में जनसाधारण की सहभागिता को बढ़ाना।

8. एचआईवी. एड्स के साथ जी रहे व्यक्तियों की देखभाल व परामर्श, दवाओं की उपलब्धि व उनके साथ किया जाने वाला भेदभाव दूर करना व उन्हें शौषित होने से बचाना।
9. एचआईवी. एड्स के बारे में फैली भ्रान्तियों के बारे में जनसाधारण को जागरूक करना।
10. कानूनी सलाह एवं न्यायिक मामलों में सहयोग प्रदान करना।

13.12 सारांश

एचआईवी. एड्स विश्व की अब तक की सबसे बड़ी चुनौती है जो अपने सामाजिक आर्थिक कारणों से और विषम होती जा रही है। यह एक लाइलाज रोग है जिसका न तो वर्तमान में कोई उपचार है और ना ही इससे बचने के लिए अभी तक किसी टीके का आविष्कार हुआ है।

इस रोग से बचाव ही सबसे बड़ा उपचार है जिसके विस्तृत प्रचार प्रसार ही रोग के खतरे को कम कर सकता है।

संक्रमित व्यक्तियों की सामाजिक स्वीकार्यता और उन्हें पर्याप्त सुविधाएं उपलब्ध कराने की प्रतिबद्धता ही मानवता को इससे बचा सकती है।

13.13 शब्दावली

1. एड्स	——एक्वायर्ड इम्प्रिनो डेफियेन्सी सिन्ड्रोंम
2. एच.आई.वी.	——ह्यूमन इम्यूनो डेफिषियेन्सी वायरस
3. ए.आर.टी	——एन्टी रिट्रावायरल थैरेपी
4. सीडी 4	——सीडी 4 कोशिकाए
5. कण्डोम	——निरोध इत्यादि
6. आई.डी.यू	——इन्ट्रा ड्रग यूजर्स
7. एन.ए.सी.पी.	——राष्ट्रीय एक्स नियन्त्रण कार्यक्रम
8. आई.सी.टी.सी	——एकीकृत सलाह व जांचकेन्द्र
9. पी.पी.टी.सी.टी संक्रमण की रोकथाम	——माता से शिशु को होने वाले एचआईवी
10. ओ.आई	——अपांचुनिस्टीक इंफैशन (अवसरवादी संक्रमण)
11. आई.ए.एस	——इंटरनेशल एड्स सोसायटी
12.एन.ए.सी.ओ.	——नेशनल एक्स कन्ट्रोल ऑगेनाईजेशन
13. एन.पी.एफ	——नेशनल पेस फाउण्डेशन
14. आन.एन.पी.प्लस	——राजस्थान नेटवर्क फोर पिपुल लिविंग विथ एचआईवी.
15. आई.एन.पी. प्लस	——इण्डियन नेटवर्क फोर पिपुल लिविंग विथ एचआईवी.
16. आर.एस.ए.सी.एस	——राजस्थान स्टेट एक्स कन्ट्रोल सोसायटी

13.14 बोध प्रश्न

1. समाज को एचआईवी. एड्स रोग क्या चुनौती प्रस्तुत कर रहा है?.
2. अन्तर्राष्ट्रीय परिपेक्ष्य में भारत की एचआईवी. एड्स में क्या स्थिति है?
3. एचआईवी. एड्स संक्रमितों के लाभार्थ सामाजिक परिवर्तनों की चर्चा?
4. एचआईवी. एड्स के बारे में फैली भ्रांतियों की चर्चा कीजिये।
5. एचआईवी. एड्स से निपटने में भारत के समक्ष क्या चुनौतियां है तथा इसका किस तरह से सामना किया जा सकता है।
6. एचआईवी. एड्स प्रभावितों के मानवाधिकारों की रक्षा किस तरह की सकती है।
7. यदि आपका कोई नजदीकी रिश्तेदार एचआईवी. पॉजिटिव पाया जाये तो आप उसकी किस तरह से मदद करेंगे।

13.15 संदर्भ ग्रन्थ

1. नाको (एन.ए.सी.ओ), विश्व एड्स संगठन (आई.ए.एस.), यू.एन. एड्स (संयुक्त राष्ट्र एड्स संगठन), डब्ल्यू एच.ओ. की संबंधित वेबसाइट।
2. चिकित्सा विभाग द्वारा समय समय पर जारी किये जाने वाले परिपत्र एवं प्रचार सामग्री।
3. आर.एन.पी.प्लस द्वारा मुद्रित सामग्री।
4. R SACS द्वारा प्रकाशित विभिन्न प्रचार सामग्री।

इकाई-14

पर्यावरण प्रदूषण

इकाई की रूपरेखा

14.0 उद्देश्य

14.1 प्रस्तावना

14.2 पर्यावरण प्रदूषण का अर्थ एवं परिभाषाएं

14.3 पर्यावरण प्रदूषण के प्रकार

14.5 सारांश

14.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

14.7 सन्दर्भ पुस्तकें

14.0 उद्देश्य

प्रस्तुत अध्याय के अध्ययन के पश्चात आप -

1. पर्यावरण प्रदूषण का अर्थ एवं इसके विभिन्न कारकों को जान सकेंगे|
2. पर्यावरण प्रदूषण के विभिन्न प्रकारों के बारे में जान जाएँगे|

14.1 प्रस्तावना

पर्यावरण विश्व का समग्र दृष्टिकोण है क्योंकि यह किसी समय सन्दर्भ में बहु स्थानिक तत्वीय एवं सामाजिक-आर्थिक तंत्रों, जो जैविक एवं अजैविक रूपों के व्यवहार/आचार पद्धति तथा स्थान की गुणवत्ता तथा गुणों के आधार पर एक दूसरे से अलग होते हैं, के साथ कार्य करता है। अर्थात पर्यावरण विश्व का समग्र दृष्टिकोण है तथा इसकी रचना स्थानिक तत्वों वाले एवं विभिन्न सामाजिक-आर्थिक तंत्रो से होती है। पर्यावरण का प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष संबंध मनुष्य की विभिन्न क्रियायें है। मनुष्य की विकास जन्य क्रियाओं ने विविध प्रकार से पर्यावरणीय घटकों में ऐसे परिवर्तन उत्पन्न किये जाते हैं जो मंडल पर हानिकारक प्रभाव डालते है। पर्यावरण में होने वाले घातक तथा अवांछनीय परिवर्तन से पर्यावरणीय प्रदूषण की समस्यायें जटिल होती जा रही है। इन पर्यावरणीय प्रदूषण की समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करना अनिवार्य है।

14.2 पर्यावरण प्रदूषण का अर्थ एवं परिभाषाएं

पर्यावरण प्रदूषण का प्रत्यक्ष संबंध विभिन्न मानवीय क्रियाओं और औद्योगिक विकास से जुड़ा है। मनुष्य अपनी बुनियादी एवं अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति और संतुष्टि हेतु जिन गतिविधियों को सम्पन्न करता है वे पर्यावरणीय प्रदूषण का मुख्य स्रोत है। एक सीमा तक प्राकृतिक पर्यावरण मनुष्य द्वारा उत्पन्न विभिन्न प्रदूषकों को अवशोषित कर उन्हें उपयोगी तत्वों में रूपान्तरित कर देता है। इससे प्रदूषकों की मात्रा कितनी विरल या कम हो जाती है कि वे मानव स्वास्थ्य के लिये प्रत्यक्ष रूप से घातक नही रहते, लेकिन जब मनुष्य द्वारा प्रदूषण की मात्रा

एक सीमा से अधिक हो जाती है तो उसके घातक प्रभाव मनुष्य सहित समग्र पर्यावरण पर पडत्रते है। विश्वव्यापी स्तर पर बढ़ते औद्योगिकरण, नगरीकरण, सघन कृषि, पशुपालन, उत्खनन, परमाणु ऊर्जा के उत्पाद तथा अन्य विकासजन्य क्रियाओं ने विविध प्रकार से पर्यावरण को प्रदूषित करने में योगदान दिया है

1 पर्यावरण प्रदूषण की परिभाषाएं

आक्सफोर्ड एडवांस्ड लर्नर्स डिक्शनरी आफ करेन्ट इंगलिश (Oxford Advanced Learners Dictionary of Current English) के अनुसार ''प्रदूषण'' शब्द से आशय ''प्रदूषण यानि कि शुद्धता को नष्ट करना'' अर्थात पर्यावरण के किसी भी घटक की प्राकृतिक अवस्था में जब अवांछनीय और अशुद्ध तत्वों की मात्रा बढ़ जाती है, तो प्रदूषण की समस्या उत्पन्न होती है। दूसरे शब्दों में भूमि, वायु एवं जल आदि के भैतिक, रासायनिक, जैविक गुणों में ऐसा परिवर्तन होता है। जो पृथ्वी पर जीवन के लिये घातक हों तो उसे प्रदूषण की संज्ञा दे सकते है।

पर्यावरण संरक्षण अधिनियम **(Environment Protection Act),** 1986 के अनुसार, पर्यावरण प्रदूषण का अर्थ किसी भी प्रकार के ठोस, द्रव अथवा गैसीय वस्तु की इतनी मात्रा में उपस्थिति हो, जो पर्यावरण के लिए किसी भी प्रकार से हानिकारक या होने की सभावना रखती हो।

गिलपिन (1976) के अनुसार, ''बेकार (Waste) या पदार्थो के ऐसे निस्तारण, निक्षेपण या संग्रह से पर्यावरण के किसी भाग में भौतिक, ऊष्मीय, प्राणिशास्त्रीय, रेडियोधर्मी गुणों में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष बदलाव प्रदूषण है। तो पर्यावरण के किसी लाभकारी उपयोग को विपरीत ढंग से प्रभावित करता है। ऐसी स्थिति पैदा करता हे जो कि सार्वजनिक स्वास्थ्य, सुरक्षा या कल्याण अथवा जानवरों, चिड़ियों, वन्य जीवन, मछली या जलीय जीवन अथवा पौधों को हानिकर या संभावित रूप से घातक है।

भारत में सन् 1976 में 42 वें सशोंघन द्वारा संविधान में निम्नलिखित पर्यावरण सम्बन्धी प्रावधान सम्मिलित किए गए:-

- धारा 48A - यह देश पर्यावरण के सुधार व संरक्षण के लिए तथा देश के वनों व वन्य जरवन की रक्षा के लिए प्रतिबद्ध रहेगा।

- धारा 51.A (जी) - देश के हर नागरिक का यह कर्तव्य होगा कि वह इसके प्राकृतिक पर्यावरण, जिसमें इसके वन, झीले, नदियाँ व अन्य जीवन शामिल है, की रक्षा व सुधार करेगा तथा हर प्रकार के जीव के प्रति संवेदनशील होगा।

उपरोक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि पर्यावरण का प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष संबंध मनुष्य की विभिन्न क्रियाओं से है। मनुष्य की विकासजन्य क्रियाओं ने विविध प्रकार से पर्यावरणीय घटकों में ऐसे परिवर्तन उत्पन्न किये जाते हैं जो मंडल पर हानिकारक प्रभाव डालते है। अतः पर्यावरण में होनेवाले घातक तथा अवांछनीय परिवर्तन से पर्यावरणीय प्रदूषण की समस्यायें जटिल होती जा रही है।

2 पर्यावरण प्रदूषण के कारक (Factors fo Environment Pollution)

मुख्यतः भागों में पर्यावरण प्रदूषण के विभिन्न कारकों को विभाजित किया जा सकता है-

- प्राकृतिक प्रदूषक

- मनुष्यकृत प्रदूषक

प्राकृतिक प्रदूषक (Natural Pollutants)

प्रकृति द्वारा ऐसे पदार्थ जो अति मात्रा में पर्यावरण को प्रदूषित कर देते है, प्राकृतिक प्रदूषक है। ये पदार्थ ठोस, द्रव या गैसीय अवस्थाओं में हो सकते है। वायु को प्रदूषित करने वाले पदार्थो में ओजोन, सोडियम क्लोराइड, नाईट्रोजन डाईआक्साइड, ज्वालमुखी के विस्फोट से उत्पन्न धूल गैसें, जंगली आग से उत्पन्न गैसें, जीवाणु बीजाणु तथ परागकण आदि मुख्य है। जल को अशुद्ध एवं खारा बनाने में अनेक प्रकार के खनिज लवण, कोयले की खानों से बहने वाला अम्लीय जल, गाद, वनस्पतियाँ तथा कीचड़ आदि मुख्य है। खनिज एवं धर्मी पदार्थ भूमि को प्रदूषित कर देते हैं|

मनुष्यकृत प्रदूषक (Man Made Pollutants)

मनुष्य की विभिन्न जैविक क्रियाओं, औद्योगिक उत्पादन तथा विकास के कारण उत्पन्न होने वाले प्रदूषक इस श्रेणी में आते है। कृषि, उत्खनन, विद्युत उत्पादन, पशुपालन, परिवहन तथा यातायात आदि के कारण अनेक प्रकार के प्रदूषक उत्पन्न होते है जो पर्यावरणीय प्रदूषण का एक मुख्य स्रोत है। मनुष्यकृत कारकों में मनुष्य स्वयं एक बड़ा प्रदूषक हैं। मनुष्य की अनियंत्रित जनसंख्या वृद्धि पर्यावरणीय क्षय और प्रदूषण का एक मुख्य कारण हैं। विकसित देशों में परमाणु ऊर्जा हेतु लगाये गये परमाणु संयत्रों से उत्पन्न रेडियोधर्मी पदार्थ भी प्रदूषण का एक अन्य स्रोत है।

प्रदूषण चाहे प्राकृतिक हो या मनुष्यकृत उसका समग्र पर्यावरण के क्षरण में बड़ा हाथ है। मनुष्य प्राकृतिक प्रदूषण को रोकने में समर्थ भले न हों लेकिन मनुष्यकृत प्रदूषण को अवश्य कम किया जा सकता है।

14.4 पर्यावरण प्रदूषण के प्रकार (Types of Environmental Pollution)

पर्यावरणीय प्रदूषण की समस्या अत्याधिक कारक एवं जटिल है। पर्यावरण और उसके विभिन्न घटों को प्रदूषित करने वाले प्रदूषकों की प्रकृति के अनुसार प्रदूषण के प्रकार निम्नवत् है:-

- मृदा या भूमि प्रदूषण (Soil/Land Pollution)
- जल प्रदूषण (Water Pollution)
- वायु प्रदूषण (Air Pollution)
- ध्वनि प्रदूषण (Sound Pollution)
- सामाजिक प्रदूषण (social pollution)
- विद्युत चुम्बकीय हस्तक्षेप प्रदूषण (Elctro-Magnetic Pollution)

1 मृदा या भूमि प्रदूषण (Soil/Land Pollution)

मृदा पर्यावरण का एक महत्त्वपूर्ण घटक है जो एक प्रकार से पृथ्वी की ऊपरी परत हैं मृदा में अनेक प्रकार के कार्वनिक एवं अकार्बनिक पदार्थ पाये जाते है। कृषि एवं वनस्पति के उगने हेतु मृदा में विद्यमान खनिज तत्व, मृदा जैव, जल तथा मृदा घोल बहुत आवश्यक हैं भू-क्षरण मृदा को नष्ट कर देता है जिससे भमि कटाव की समस्या

उत्पन्न होती हैं जब भूमि का कटाव बढ़ जाता है तो भूमि कृषि योग्य नही रह जाती है। जनसंख्या वृद्धि, कृषि और औद्योगिक विकास से वायु एवं जल के साथ मिट्टी भी प्रदूषित हो रही है।

मृदा प्रदूषण के लिये उत्तरदायी कारकों में कृषि एक मुख्य कारक हैं बढ़ती जनसंख्या के लिये खाद्यान्न उत्पादन हेतु प्रयुक्त रासयनिक खादों तथा कीटनाशकों से न केवल मिट्टी एवं जल प्रदूषित हो रहा हैं बल्कि उत्पन्न अनाज भी प्रदूषित हो रहा है। डा0 एम0 एस0 स्वामीनाथन के मतानुसार कृषि क्षेत्र में एक दुविधा उत्पन्न हो गई है- पारिस्थितिक तंत्र संरक्षणवादी सम्प्रदाय इस क्षेत्र में शून्य वृद्धि के पक्ष में है दूसरा सम्प्रदाय बाजार अर्थव्यवस्था और प्रौद्योगिकी उन्मुख है जो किसी भी कीमत पर संसाधनों के दोहन का पक्षधर है, किंतु भारत जैसे विकासशील देशों में एक तीसरा सम्प्रदाय उभर रहा है जो प्राकृतिक पुनर्चक्रकीकरण वाले संसाधनों का प्रबंधन इस तरह करना चाहता है जिससे सतत कृषि विकास का आधार प्राप्त हो सकें।

भूमि प्रदूषण के प्रमुख कारणों में गंदगी , कचरा , राख , व्यर्थ पदार्थ जल-मल उपचारित ठोस, मृत पशु ; औद्योगिक ठोस व्यर्थ, उत्खनन व्यर्थ तथा कृषि व्यर्थ (Agricutual Waste) आदि मुख्य है।

2 जल प्रदूषण

प्राकृतिक जल में अवंछित बाह्य पदार्थो के घुल जाने से उसकी गुणवत्ता में कमी आ जाना जल प्रदूषण है। इससे जल स्वास्थ्य के लिये हानिकारक या कम उपयोगी हो जाता है। जल प्रदूषण की समस्या विश्वव्यापी है जिसके मुख्य कारण जनसंख्या वृद्धि, गहन कृषि और बढ़ता औद्योगिकरण है। प्रायः सभी देशों में औद्योगिक अपशिष्ट और नगरी कचरे एवं पदार्थो को जलीय स्रोतों में बहा दिया जाता है, इससे जल संसाधनों के प्रदूषित होने का खतरा उत्पन्न हो गया है।

प्रदूषक पदार्थो की प्रकृति के आधार पर जल प्रदूषण की चार श्रेणियाँ है:-

- भौतिक प्रदूषण **(Physical Pollution)**
- रासायनिक प्रदूषण **(Chemical Pollution)**
- शरीर क्रियात्मक प्रदूषण **(Physiological Pollution)**
- जैव प्रदूषण **(Biotic Pollution)**

जल के भौतिक गुणों जैसे स्वाद, रंग, एवं गंध आदि में परिवर्तन भौतिक प्रदूषण है। जल के रासायनिक पदार्थो के घुलमिल जाने से प्रदूषित जल स्वास्थ्य के लिये हानिकर हो जाता है। औद्योगिक अपशिष्टों, उर्वरकों एवं कीटनाशकों के उपयोग से जल में रासायनिक प्रदूषण बढ़ रहा है। विषक्त रसायनों के कारण प्रदूषण के साथ-साथ जलीय जीवन भी प्रभावित हो रहा है। इसी तरह शरीर क्रियात्मक प्रदूषण में जल के गुण मानव क्रियाओं के लिये हानिकारक हो जाते है। जब जल में रोग जनक कीटाणु और विषाणु आदि घुल-मिल जाते है तो जैव प्रदूषण की समस्या उत्पन्न होती है। जैव प्रदूषित जल मानव स्वास्थ्य के लिये सर्वाधिक घातक होता है। इससे अतिसार, टाइफाइड, हैजा पेचिस एवं पीलिया आदि के फैलने की संभावनायें बढ़ जाती है।

जल प्रदूषण के सभी स्रोतों को मुख्यतः दो श्रेणियों मे रख सकते है:- प्राकृतिक स्रोत तथा मानवीय स्रोत। प्राकृतिक स्रोतों के अंतर्गत मिट्टी, खनिज पदार्थ, वनस्पति, मृत प्राणियों के अवशेष एवं मलमूत्र आदि मुख्य है। इसके अलावा विषाक्त धातुएँ जैसे सीसा, पारा, आर्सेनिक तथा कैडमियम आदि के कारण जल प्रदूषित हो जाता

है। इसी तरह निकिल, बेरियम, कोबाल्ट, टिन माल्बिडेनम, वैनेडियम तथा वेरिलयम आदि पदार्थो की ज्यादा मात्रा अत्यनत घातक होती है। खनिज लवण पानी में घुल मिलकर जलीय प्रदूषण उत्पन्न करते हैं प्राकृतिक रूप से प्रदूषित जल मानवीय क्रियाओं के लिये उपयुक्त नही होता।

जल के प्राकृतिक स्रोतों में मनुष्य के हस्तक्षेप से जल प्रदूषण हो जाता है। जनसंख्या वृद्धि नगरीकरण तथा औद्योगिकरण के कारण जलाशयों में प्रदूषण की समस्या बढ़ रही है। जिन मानवीय गतिविधियों के कारण जल प्रदूषित होता है। उनमें घरेलू मल-मूत्र एवं कचरे का विसर्जन, वाहित मल, औद्योगिक बहिःस्राव, कृषि बहिःस्राव, तापीय प्रदूषण (Thermal Pollution),, तैलीय प्रदूषण (Oil Pollution) एवं रेडियोधर्मी अपशिष्ट (Radio Active Waste) आदि मुख्य है।

3 वायु प्रदूषण (Air Pollution)

यह समस्या मनुष्य की सभ्यता के उत्कर्षकाल से ही प्रारंभ हो गई थी जब मनुष्य ने आग का प्रयोग प्रारंभ किया था। तत्पश्चात् ईसा से लगभग 10.11 हजार वर्ष पूर्व मनुष्य ने जंगलों में आग लगाकर भूमि साफ की और कृषि का प्रारंभिक ज्ञान प्राप्त किया। वायुमंडल में प्राकृतिक अवस्था में वायु के विभिन्न घटकों में एक संतुलन रहता है। जो प्रदूषित होने पर बदल जाता है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार वायु प्रदूषण ''मनुष्य द्वारा सम्पन्न क्रियाओं के द्वार वायु में उन पदार्थो का पर्याप्त संकेन्द्रण हे जो स्वास्थ्य, वनस्पति तथा सम्पत्ति पर घातक प्रभाव का कारण है या उसकी सम्पत्ति के उपयोग में हस्तक्षेप है।''

प्रदूषित वायु में विभिन्न प्रकार की गैसें और विभिन्न पदार्थो के सूक्ष्म कण घुल-मिल जाते है जो मानव स्वास्थय पर प्रतिकूल प्रभाव डालते है। वायु प्रदूषण की व्यापकता के आधार पर तीन प्रकार का है:-

(क) व्यक्तिगत वायु प्रदूषण **(Individual Air Pollution)**: धूल, धुंआ तथा गैसों का जमाव व्यक्तिगत वायु प्रदूषण है जिसका मनुष्य द्वारा भोजन पकाना, धुम्रपान तथा अन्य क्रियायें है।

(ख) व्यावसायिक वायु प्रदूषण **(Vocational Air Pollution)**: व्यावसायिक एवं तकनीकि क्रियाओं से उत्पन्न प्रदूषण व्यवसायिक प्रदूषण है। इसमें कई प्रकार की विषाक्त गैसें वायुमंडल में घुल मिल जाती है।

(ग) सामुदायिक वायु प्रदूषण **(Community Air Pollution)**: जब सामुदायिक रूप से मनुष्यों, पेड़-पौधों जानवरों तथा समग्र पर्यावरण पर वायुमंडलीय संतुलन बिगड़ जाने से प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। तो इसे सामुदयिक वायु प्रदूषण कहते है। इस प्रकार के प्रकार के प्रदूषण को नियंत्रित करना कठिन है।

4 ध्वनि प्रदूषण

ध्वनि प्रदूषण का कारण मनुष्य द्वारा यांत्रिक विकास हैं उद्योग-धंधों एवं वाहनों से उत्पन्न अवांछित शोर और ध्वनि आज की एक प्रमुख समस्या है। रेडियो, दूरदर्शन, लाउडस्पीकर, सिनेमा, पटाखों, बैण्ड- बाजों, मोटर वाहनों तथा हवाई जहाजों से उत्पन्न तीव्र शोर से ध्वनि प्रदूषण की समस्या उत्पन्न हुई है। ध्वनि प्रदूषण का मानवीय स्वास्थ्य पर बड़ा घातक प्रभाव देखा जा रहा है। अलेक्जेंडर ग्राहमबेल ने बेल्स नामक ध्वनि मापक यंत्र का अविष्कार किया था। इसके अनुसार सामान्य रूप से 10 से 12 डेसिबेल के मध्य ध्वनि कान द्वारा सुनी जा सकती है। लेकिन इससे तीव्र ध्वनि का मानव की कार्य क्षमता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। तीव्र ध्वनि से मनुष्य की क्रियाओं में बाधा उत्पन्न होती है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा सामान्य रूप से ध्वनि की सीमा 45 डेसीबेल अनुशंसित की गई है जबकि मुम्बई जैसे बड़े शहरों में रोज मर्रा के जीवन मे ही तीव्रता 85 से 110 डेसीबेल के बीच पाई गई।

5 सामाजिक प्रदूषण (Social Pollution)

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है जिससे पर्यावरण का निर्माण होता हैं अन्य प्राणियों की तरह मनुष्य जटिल पर्यावरण का एक अंग है जो सृष्टि के अन्य प्राणियों से बृद्धि-बल में श्रेष्ठ होने के कारण पर्यावरणीय संसाधनों को अपने अनुकूल बनाने में संलग्न है। मनुष्य की समग्र सामाजिक-सांस्कृतिक विरासत उसके प्रयत्नों का फल है। इस संदर्भ में मानवशास्त्री हर्षकाविट्ज का कथन है, ''संस्कृति पर्यावरण का मनुष्यकृत भाग है'' इस कथन का आशय यह है कि मनुष्य पर्यावरणीय घटाकें को अपने सामाजिक सांस्कृतिक मूल्यों के अनुरूप बनाने का प्रयास करता है।

वस्तुतः सामजिक प्रदूषण वह स्थिति है जब सामजिक पर्यावरण का व्यक्ति और समाज पर अस्वस्थ्य प्रभाव बढ़ जाता है। सामजिक प्रदूषण के पीछे अनेक कारकों का हाथ होता है। सामाजिक प्रदूषण के कारणों में समाज में वयाप्त नियम-विहीनता (Anomic) विचलन (Deviance) तथा सामजिक विघटन (social disorganizatio) आदि मुख्य है। समाज में उत्पन्न इस स्थिति के पीछे जनसंख्या वृद्धि, निर्धनता, जाति एवं वर्ग भेद, सामाजिक-आर्थिक विषमता, अशिक्षा, सामाजिक कुरीतियाँ, दुराचार और उपभोगतावादी जीवन मूल्य आदि ऐसे कारण हैं जो किसी भी समाज में सामाजिक प्रदूषण के लिये उत्तरदायी माने जा सकते है सामाजिक प्रदूषण समाज की अस्वास्थ्यता का कारण और परिणाम दोनो है। सामाजिक प्रदूषण के कारण समाज में जीवन की गुणवत्ता में ह्रास, अपराध एवं बाल अपराध, मद्यपान, जुंआ, वैश्यवृत्ति, निरक्षरता, बीमारियाँ, निर्धनता, सामाजिक तनाव एवं संघर्ष, हिंसा, युद्ध और साम्प्रदायिक दंगों में वृद्धि होती हैं एक प्रकार से सामाजिक प्रदूषण की स्थिति में सामाजिक मूल्यों का पतन हो जाता है।

6 विद्युत-चुम्बकीय हस्तक्षेप/प्रदूषण (Electro-Magnetic)

वर्तमान सभ्यता मशीनी सभ्यता है जिसमें उपकरणों और मशीनों का उपयोग दैनिक जीवन की एक आवश्यकता बन गई है। लेकिन इन मशीनों और उपकरणों से एक प्रकार की विद्युत-चुम्बकीय तरंगें उत्पन्न होती है। जो एक विशेष प्रकार के निस्तब्ध प्रदूषण (Silent Pollution) की जनक है। विद्युत चुम्बकीय क्षेत्र में आने वाले जीवधारियों और वस्तुओं पर इनका घातक प्रभाव पड़ता है। उदाहरण के तौर पर मिक्सर, टी0 बी0, रेडियो, सेलुलर फोन एवं अन्य विद्युत उपकरणों से उत्पन्न विद्युत चुम्बकीय तरंगो के कारण आसपास काम कर रहे अन्य विद्युत उपकरणों की क्रियाओं में हस्ताक्षेप महसूस किया जा सकता है। अतः ये उपकरण एक प्रकार से जैविक खतरा उत्पन्न करते है। उच्च शक्ति वाली ट्रान्समीशन लाइनें तथा सेलुलर फोन द्वारा लोगों में कैंसर बढ़ने की संभवनायें पैदा होती है। माइक्रोवेव्ज ओवन्स (Microwaves Ovens) से गर्भ में भ्रूण तक के मरने की सभावना बताई गई। ह्रदय रोगियों के पेस मेकर भी विद्युत चुम्बकीय तंरगों से प्रभावित होते है।

14.6 सारांश

सारांश के रूप में इस अध्याय में पर्यावरण से सम्बन्धित प्रदूषण, पर्यावरण संरक्षण एवं पर्यावरण संरक्षण में जन आन्दोलनों की भूमिका को स्पष्ट किया गया है।

14.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

(1) पर्यावरण प्रदूषण का अर्थ एवं परिभाषाएं से आप क्या समझते हैं?

(2) पर्यावरण प्रदूषण के कारकों पर प्रकाश डालिए।

(3) पर्यावरण प्रदूषण के प्रकारों को स्पष्ट कीजिए।

14.8 सन्दर्भ पुस्तकें

- Bhartiya, A. K., Paryavaran, New Royal Book Company, Lucknow, Published under ASIHSS Programme (11th FYP), UGC, New Delhi.
- Kaushik, A., and Kaushik, C. P. Paryavaran Adhyan, NAIP, New Delhi, 2005.
- Singh, S. and Singh, J. Disaster Management, Pravalika Publications, Allahabad, 2013.
- Bharucha, I. Paryavaran Addhyan, Orient Laongman Pvt. Ltd., Delhi, 2006.